ज्ञानपीठ-लोकोदय-ग्रन्थमाला—हिन्दी-ग्रंथांक २४

द्विवेदी-पत्रावली

श्री बैजनाथसिंह विनोद

भा र ती य ज्ञा न पी ठ का शी

ज्ञानपीठ-लोकोदय-ग्रन्थमाला सम्पादक और नियामक
लक्ष्मीचन्द्र जैन एम. ए.

प्रकाशक
अयोध्याप्रसाद गोयलीय,
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
गोकुण्ड रोड, बनारस

प्रथम संस्करण
१९५४
मूल्य ढाई रुपये

मुद्रक
पं० प्यारेलाल भार्गव
राजा प्रिंटिंग प्रेस,
कमच्छा, बनारस

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी

विषय-सूची

आमुख

द्विवेदी-पत्रावलीके सम्बन्धमे दो-चार शब्द लिखनेमे मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है। मैं समझता हूँ कि ऐसा करके आधुनिक हिन्दीके निर्माताओं मे से एक प्रमुख साहित्यकारके प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट कर सकूँगा।

वास्तवमे पत्रलेखन एक कला है, यद्यपि प्रत्येक व्यक्तिके पत्र कलाकी ऊँचाईको नही छू पाते। किसी पत्रका सौष्ठव और महत्त्व लेखकके व्यक्तित्व पर अवलम्बित है। लेखकका प्रयोजन रुचि और योग्यता आदि तत्त्व ही किसी पत्रको कलाकी वस्तु बनाकर सुरक्षित रख सकते है अथवा उसे रद्दी की टोकरीमे डाल सकते है। साहित्यकार तथा कलाकारके पत्र भी उनकी अन्य कलात्मक कृतियोकी तरह कलाके नमूने होते है। यह सच है कि किसी ग्रन्थके प्रणयन अथवा मूर्तिके निर्माणमे साहित्यकार अथवा कलाकार समाजको अपने ध्यानमे रखता है और पत्र लिखनेमे किसी व्यक्ति-विशेष को। परन्तु पत्रकी अपील कुछ क्षणके लिए व्यक्तिगत होते हुए भी उसका मूल स्रोत लेखकके कलात्मक व्यक्तित्वमे होता है। अतः वह पत्र किसी भी पाठकके हृदयमे रसका उद्रेक कर सकता है। स्व० द्विवेदीजी इसी प्रकार के साहित्यकार थे। अतः उनके पत्र भी साहित्यिक और सामाजिक महत्त्वके हैं। उनके पत्र प्रायः समसामयिक कवियो और साहित्यकारोको लिखे गये हैं। इसलिए उनका महत्त्व और भी बढ़ जाता है। कुछ व्यक्तिगत प्रसगो को छोड़कर द्विवेदीजीके पत्र किसी-न किसी भाषासम्बन्धी प्रश्न अथवा साहित्यिक समस्यापर लिखे गये है। फलतः आधुनिक हिन्दी भाषा और साहित्यके विकास पर इन पत्रोसे काफी प्रकाश पड़ता है।

स्व० द्विवेदीजीके साहित्यिक जीवनका अधिकाश 'सरस्वती'के सम्पादन मे बीता। प्रायः इसी पदसे वे पत्र-व्यवहार भी करते थे, यद्यपि अन्य साहित्यकारोसे व्यक्तिगत परिचयके कारण कुछ व्यक्तिगत प्रसंग भी आ जाते थे। अपने पत्रोमे भी द्विवेदीजी सम्पादकके रूपमे ही दिखायी पड़ते है। उनके पत्रोके अधिकाश वे ही विषय थे जो उस समय हिन्दीकी समस्याएँ, अर्थात् प्रादेशिक भाषाओंके स्थान पर सार्वदेशिक हिन्दीके निर्माणका प्रश्न, खड़ी बोलीको गद्य और पद्य दोनोमे साहित्यका माध्यम बनानेका प्रश्न, संस्कृतनिष्ठ और सुबोध हिन्दीका प्रश्न, हिन्दीके व्याकरण और शब्द-विन्यासका प्रश्न, हिन्दी-साहित्यमे विषयोंके चुनाव और सुरुचिका प्रश्न, हिन्दीमे स्वस्थ तथा निर्भीक पत्रकारिताका प्रश्न, हिन्दी साहित्यको लोक-मगलका वाहक बनानेका प्रश्न आदि। संक्षेप और स्फुट रूपसे द्विवेदीजीके पत्रोमे ये सभी विषय आलोकित होते है। वे जागरूक शिल्पीके समान अपने ज्ञान, तर्क तथा रुचिसे हिन्दी भाषा और साहित्यका संस्कार करते हुए दिखायी पड़ते है।

पत्रोंमे द्विवेदीजीके साहित्यिक रूपके साथ-साथ उनके व्यक्तिगत जीवनकी भी झाँकी मिलती है। दृढ निश्चय और लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए सतत प्रयत्न उनके जीवनकी आधार-शिला थी। ससारका कोई प्रलोभन अथवा कठिनाई उनको पथभ्रष्ट नही कर सकती थी। सादगी और गरीबी उनके जीवनका संबल था। मितव्ययिता और त्याग तथा निर्भीकता और स्पष्टवादिताके साथ शिष्टाचार और सौजन्यका उनमे अद्भुत समन्वय था। प्राचीनताके प्रति आदरके साथ नवीनका स्वागत करनेकी उनमे विलक्षण क्षमता थी। पत्रोंके छोटे-छोटे प्रसंगोमे ये बाते स्पष्ट रूपसे झलकती है।

आजतक द्विवेदीजीके पत्रोका सग्रह उपलब्ध नही था। खेदका विषय है कि अभी तक हिन्दी साहित्यमें विशिष्ट साहित्यकारोंके पत्र-संग्रह

प्रकाशित करनेकी ओर ध्यान नही गया है। श्री 'विनोद' जीने इन पत्रोंका सम्पादन कर हिन्दीमे एक बडे अभावकी पूर्ति की है। यह संग्रह अपने ढगका प्रथम ही है। आशा है द्विवेदीजीके अन्य पत्रोका प्रकाशन वे शीघ्र करा सकेंगे। स्व० द्विवेदीजीके जीवन-चरित्रको जोडकर श्री विनोद जीने एक प्रकारसे पत्रोकी भूमिका लिख दी है। द्विवेदीजीके गुणोके प्रति जो उनकी आत्मीयता और सहानुभूति है शायद वही उनकी मूल प्रेरणा है।

इस प्रकाशनके लिए श्री विनोदजी तथा उसके प्रकाशक ज्ञानपीठ दोनो ही साधुवादके पात्र है।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वैशाख प्रतिपद, वि० सं० २०११

राजबली पाण्डेय

निवेदन

कभी-कभी बेकारीकी हालतमे भी आदमी अच्छा काम कर जाता है। इतिहासमे तो ऐसे अनेक उदाहरण है ही। प्रस्तुत पुस्तक 'द्विवेदी-पत्रावली' भी इसीका प्रमाण है।

कुछ समयसे 'जनपद'का काम शिथिल पड़ जानेसे मै एक प्रकारसे बेकार-सा था। सौभाग्यसे मेरे मित्र प्रियवर श्री राय आनन्दकृष्णजीको कुछ सूझा और उन्होने एक दिन मुझसे कहा—'विनोद' जी आप स्व० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीके चुने हुए पत्रोका संकलन कर दे। आपको सभीका सहयोग मिल जायगा। इससे आप हिन्दी साहित्यका एक बड़ा उपकार करेगे। मुझे भी यह काम जॅचा। इसी बीच एक दिन श्री अयोध्याप्रसादजी गोयलीयसे मिलनेका अवसर मिला। संयोगसे उस समय भी श्री राय आनन्दकृष्णजी साथ थे। गोयलीयजी तो साक्षात् उर्दू साहित्य हैं। उर्दू-साहित्यकी चर्चा करते समय वे थकते ही नही। घंटो साहित्य-चर्चा होती रही। इसी समय गोयलीयजीने उर्दूके साहित्यकारोकी चर्चा की। मौलवी महेशप्रसादजीने 'खतूते-गालिब' का सम्पादन कर दिया। और भी अनेक उर्दू-साहित्यकारोके पत्र प्रकाशित हो चुके है। मौका हाथ आ गया था। आनन्दकृष्ण भला कब चूकते! उन्होंने झट कहा—विनोदजीने स्व० आचार्य महावीरप्रसादजी द्विवेदीके कुछ चुने हुए पत्रोका संग्रह कर लिया है। आप यदि प्रकाशित करना चाहे, तो यह काम पूरा हो सकता है।' गोयलीयजी तो चाहते ही थे।

'द्विवेदी-पत्रावली' की यही मूल प्रेरणा है।

× × ×

द्विवेदीजीके पत्रोके संग्रहमे लग गया। इस काममे सबसे पहले

श्रद्धेय राय कृष्णदासजीकी सहायता मिली। 'भारत कला-भवन' में द्विवेदीजीके पत्रोका जो संग्रह था, उसे देखने और उसमेसे कुछ चुने हुए पत्रोकी प्रतिलिपि करनेकी अनुमति मुझे राय साहबने दे दी। 'भारत कला-भवन'से द्विवेदीजीके चुने हुए पत्रोका सग्रह कर लेनेके बाद मैने नागरी-प्रचारिणी सभा काशीके संग्रहालयमे सुरक्षित द्विवेदीजीके कागज-पत्रोको एक-एक कर देखा। उक्त संग्रहमे कुछ ऐसे पत्र भी मिले, जिनकी पीठ पर अथवा अलग स्लिपो पर भी द्विवेदीजीने अपने कुछ पत्रोकी स्वयं प्रतिलिपि कर दी है। कुछ विवादास्पद मसौदे भी मिले। ऐसे उन्नीस पत्र सभाके महावीरप्रसाद द्विवेदी संग्रहमे मिले। उनकी प्रतिलिपि भी मैने ले ली। पर अनेक कारणोंसे उनका प्रकाशन उचित न जान पड़ा। अतः उन पत्रोको इस संग्रहमे नही दिया जा रहा है।

प्रयागसे द्विवेदीजीके पत्रोके संग्रहमे बन्धुवर डॉ० उदयनारायण तिवारीजीने बड़ी सहायता की। तिवारीजीकी कृपासे ही मुझे लल्लीप्रसाद पाण्डेयका सहयोग मिल सका। लल्लीप्रसाद पाण्डेय स्व० आचार्य महावीर प्रसादजी द्विवेदीके निकटके सहकर्मी थे। उनके पास द्विवेदीजीके बहुत महत्त्वपूर्ण पत्र है। इनका उल्लेख तक कही नही हुआ था। वे सभी पत्र मुझे मिल गये। मैने सबको पढकर कुछ पत्र चुन लिये। यही नहीं, पाण्डेयजीने और भी पत्रोको प्राप्त करनेमे मेरी सहायता की। पं० देवीदत्त शुक्लजीसे भी मै प्रयागमे मिला। अब उनकी ऑखे नही रही। पर उनकी स्मृतिमे द्विवेदीजीसे संबंधित अनेक घटनाएँ है, जिन्हे सुनाते-सुनाते उनका हृदय भर जाता था। शुक्लजीने अपने पत्रोका संग्रह सम्मेलनको दे दिया है। पं० रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री, सहायक मन्त्री हिन्दी साहित्य सम्मेलनने भी कृपा करके सम्मेलनके संग्रहालयमे सुरक्षित द्विवेदीजीके सभी पत्रोंको मेरे निकट सुलभ कर दिया। पं० व्रजमोहन व्यासजीने स्व० श्रीधर पाठकजीको लिखे गये द्विवेदीजीके पत्रोंको देकर मेरी बड़ी सहायता की।

श्री मुरारीलाल केडिया (काशी) के पास भी अपना एक छोटा-सा संग्रहालय है। उन्होंने अनेक वस्तुएँ जुटा भी ली है। श्री केडियाजीने भी मेरी सहायता की। पर केडियाजीके संग्रहमे सुरक्षित द्विवेदीजीके अनेक पोस्टकार्डोंमे कैंची लग गई है। किसी बुद्धिमान्ने टिकट-संग्रहके लोभसे पोस्टकार्डोंके स्टाम्पको कैंचीसे काट लिया है। स्टाम्पोकी पीठ पर प्रायः पत्र लिखनेकी तिथि थी। फलतः स्टाम्पोके साथ ही पत्र लिखनेकी तिथि भी गायब है। द्विवेदीजी-द्वारा पं० केशवप्रसाद मिश्रजीको लिखे गये कुछ महत्त्वपूर्ण पोस्टकार्डोंकी तिथि गायब है। ऐसे पत्रोको मैने छोड़ दिया।

श्री राय कृष्णदासजी तथा कुछ और महानुभावोंकी कृपासे मुझे स्व० आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदीजीके ११६७ पत्र देखनेको मिले। प्राप्त पत्रोंमे ७२ प्रकाशित हैं; शेष सभी अप्रकाशित। इन सभी पत्रोंको पढ़कर और उनमे-से कुछको चुनकर मैने प्रस्तुत 'द्विवेदी-पत्रावली'का संकलन किया है।

जिन व्यक्तियोके पत्र मुझे मिल सके, वे तो प्रस्तुत संग्रहमे सुरक्षित ही है। पर इनके अलावा कुछ और व्यक्तियोके पास भी द्विवेदीजीके पत्र होने चाहिएँ। मुझे मालूम हुआ कि स्व० बा० शिवप्रसादजी गुप्तके साथ भी द्विवेदीजीका पत्र-व्यवहार हुआ था जिसमे सम्भवतः गुप्तजी-द्वारा द्विवेदीजीको सहायता मिलनेकी बाते भी होंगी। किन्तु यह ज्ञात न हो सका कि वे पत्र अब कहाँसे उपलब्ध हो सकेंगे। इनके अलावा पं० कृष्णदत्त वाजपेयी (मथुरा), पं० रामचन्द्र शुक्ल एम० ए०, पं० पुरुषोत्तम शर्मा चतुर्वेदी, पं० गिरजा प्रसाद द्विवेदी (जयपुर) के पास भी कुछ पत्र होंगे। प० बनारसीदास चतुर्वेदीजीके पास भी कुछ पत्रोका संकलन होगा। पं० श्रीराम शर्माके पास, पं० गिरजाप्रसाद वाजपेयीके वंशजोंके पास, श्री सुरेश सिंहजीके पास, रायगढ़के राजाके पास और श्री कालिदासजी कपूरके पास कुछ पत्रोंका संकलन होगा। निश्चय इन पत्रोंमे कुछ महत्त्वपूर्ण पत्र भी होंगे।

यदि इन सभी महानुभावोके पत्रोको पढकर, उन पत्रोमे से कुछ पत्र चुननेका मुझे अवसर मिलता, तो निश्चय ही यह संग्रह और भी बड़ा होता। फिर यह सग्रह अपने आपमे पूर्ण भी होता। मैने कुछ लोगोके पास सुरक्षित पत्रोको पानेका प्रयत्न भी किया। पर मुझे एक ऐसे व्यक्तिने निराश कर दिया, जिनके द्वारा मै अनेक व्यक्तियोके पास सुरक्षित पत्रोकी प्रतिलिपि पानेकी आशा करता था। वे व्यक्ति बड़े है, बुजुर्ग है, संग्रही है अनेक व्यक्तियोसे सम्बद्ध है और मेरे हितैचिन्तक भी है। उन्होने मुझे लिखा कि वे स्वय द्विवेदीजीके पत्रोको प्रकाशित करेगे। यदि वे सभी व्यक्तियोके पास सुरक्षित पत्रोको प्रकाशित कर देगे, तो निश्चय ही हिन्दीका बड़ा उपकार होगा। पर जबतक वे स्वयं द्विवेदीजीके पत्रोको प्रकाशित न कर दे, तबतक भी हिन्दी-प्रेमी जनताको द्विवेदीजीके पत्रोका रस मिलता रहे, लोग द्विवेदीजीके कार्यो और उनकी परिस्थितियोसे भी परिचित होते रहे, इसलिए यह 'द्विवेदी-पत्रावली' प्रस्तुत है।

× × ×

बंगला, गुजराती, मराठी और उर्दू भाषामे साहित्यकारोके पत्रोके अनेक प्रकाशन है। पर हिन्दीमे वैसी स्थिति नहीं है। जहाँ तक मुझे मालूम है हिन्दीमे शरतबाबूके पत्रोका अनुवाद श्रीनाथूराम प्रेमीने प्रकाशित कराया है। सुना है स्व० स्वामी दयानन्दजीके पत्रोका संग्रह भी प्रकाशित हो चुका है। बापूके पत्र मीरा बहनके नाम भी प्रकाशित है। पर अभी तक हिन्दीके एक भी साहित्यकारके पत्र पुस्तक रूपमे नही प्रकाशित हुए।

प्रस्तुत 'द्विवेदी-पत्रावली' हिन्दीका प्रथम पत्र-साहित्य है। कालकी दृष्टिसे यह पूर्ण है। जिस समय स्व० आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दी जगत्मे आये और जबतक वे कुछ करने लायक थे, तबतकके उनके चुने हुए पत्रोका संकलन प्रस्तुत सग्रहमे है। विषयकी दृष्टिसे भी यह संकलन पूर्ण है। द्विवेदीजीकी सम्पूर्ण साहित्यिक प्रवृत्तियोसे सम्बन्धित कुछ न

कुछ पत्र इस संग्रहमे है। इस तरह द्विवेदीजीके काल और उनके सम्पूर्ण साहित्यिक प्रवृत्तियोंका प्रतिनिधित्व उनके प्रस्तुत पत्रोंमें है। यही नहीं, द्विवेदीजीके पत्रोंका चुनाव करते समय, द्विवेदीजीकी परिस्थिति, प्रवृत्ति और उनके व्यक्तित्वका भी बराबर ध्यान रखा गया है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि प्रस्तुत 'द्विवेदी-पत्रावली' द्विवेदी युग और द्विवेदीजीके व्यक्तित्वके सम्बन्धमे प्रामाणिक रिकार्ड है। यह मै नहीं कहता कि इसमे सभी रिकार्ड मौजूद है, क्योंकि कुछ पत्र मुझे नही मिले। पर इतना कहा जा सकता है कि जितना है, वह पूर्णका प्रतिनिधित्व करता है। मैंने अपनी ओरसे ऐसा ही प्रयत्न भी किया है, किन्तु यह मैं कैसे कहूँ कि मेरा प्रयत्न निर्दोष है—इसमे कुछ कमी नही है। कमी है और कुछ कमी का उल्लेख भी मै कर चुका हूँ। उनके अलावा भी यदि कुछ कमी रह गई हो, तो विद्वान् आलोचक उसकी ओर ध्यान खींचकर हिन्दीका उपकार करेंगे।

× × ×

प्रस्तुत ग्रन्थ 'द्विवेदी-पत्रावली'के सम्पादन तथा द्विवेदीजीकी संक्षिप्त जीवनीके लिखनेमे डा० उदयभानुसिंहजी पी० एच-डी० के निबन्ध—महावीरप्रसाद द्विवेदी और उनका युग—से बहुत सहायता ली गई है। इसके लिए लेखक डॉ० उदयभानुसिंहजीके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना अपना धर्म समझता है।

बन्धुवर श्री लक्ष्मीचन्द्रजीने अपने सत्परामर्श-द्वारा प्रस्तुत ग्रन्थको कंटकरहित बनानेका प्रयत्न किया है। इसलिए उनके प्रति भी लेखक कृतज्ञ है।

काशी
१७-४-५४

बैजनाथसिंह विनोद

आचार्य पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी

[संक्षिप्त जीवनी]

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीके पितामह पं० हनुमन्त द्विवेदी संस्कृतके अच्छे पण्डित थे। उनके तीन पुत्र थे—दुर्गाप्रसाद, रामसहाय और रामजन। पं० हनुमन्त द्विवेदीकी मृत्यु असमयमे ही हो गई। इस कारण उनके पुत्रोकी शिक्षा न हो सकी। सबसे छोटे बालक रामजनकी भी मृत्यु हो गई। दुर्गाप्रसादने वैसवाडेमे ही गौराके तालुकेदारके यहाँ नौकरी कर ली और रामसहाय ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी सेना मे भर्ती हो गये।

अंग्रेजोकी प्रसार-नीतिके कारण देशके छोटे-छोटे राजाओमे असन्तोष था। असन्तोषने षड्यन्त्रका रूप धारण किया। अंग्रेजी सेनामे विद्रोहकी आग धधकी। १८५७ का समय था। कम्पनीकी जिस सेनामे रामसहाय थे, वह होशियारपुर (पंजाब) मे थी। विद्रोहकी चिनगारी वहाँ भी पहुँची। विद्रोह जब फैलता है तो संक्रामक रूपमे फैलता है। देखते-देखते उसने होशियारपुरके भारतीय सैनिकोको अपनेमे समेट लिया। पर अंग्रेज़ बहुत सावधान थे। उन्होने ताड़ लिया कि सिपाहियोके मनमे क्या है! और समय रहते ही विद्रोहको कुचलकर धर दिया। हिन्दुस्तानी फ़ौजमे भगदड़ मच गई। भागनेवालोमे रामसहाय भी थे। उन्होने देखा कि आगे सतलजकी उमड़ती धारा है और पीछे तोप। दोनो ही ओर मृत्यु है। किन्तु साहस करके, मृत्युसे बचनेके प्रयत्नमे सतलजसे तो बचा भी जा सकता है; पर रुकनेसे तोप द्वारा कायरतापूर्ण मृत्यु निश्चित है। अतः वह सतलज

की वेगवती धारामे कूद पडे। मृत्युके निकट भी साहसीका सम्मान होता है। सतलजके वेगने सैनिक रामसहाय द्विवेदीकी अच्छी तरह परीक्षा करके—अपनी लहरो द्वारा तोड़-मरोड़कर—उस पार फेक दिया। माँगते-खाते रामसहाय अपने घर दौलतपुर, जिला रायबरेली (उत्तर प्रदेश) पहुँचे।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीका जन्म सिपाही-विद्रोहसे सात वर्ष बाद वैशाख शुक्ल ४ संवत् १६२१ को दौलतपुरमे हुआ। उनके पिता रामसहाय हनुमानजीके भक्त थे। इसलिए उन्होने बालकका नाम रखा महावीरसहाय।

रामसहाय द्विवेदी बम्बईमे नौकरी करते थे। इसलिए बालककी शिक्षाकी व्यवस्थाकी देखरेखका भार दुर्गाप्रसाद पर पड़ा। चचाकी देख-रेखमे बालकने 'शीघ्रबोध', 'दुर्गासप्तशती', 'विष्णु सहस्रनाम', 'मुहूर्त-चिन्तामणि' और 'अमरकोश' को कंठ कर लिया। इस प्रकार संस्कृत भाषा से महावीरप्रसाद द्विवेदीकी शिक्षाका प्रारम्भ हुआ। संस्कृतके इस प्रारम्भिक ज्ञानके बाद बालकको गॉवकी पाठशालामे भर्ती कराया गया। वहाँ उन्हे हिन्दी, उर्दू और गणितकी प्रारम्भिक शिक्षा मिली। कुछ फ़ारसीका भी अभ्यास कराया गया। इतनेमे ग्राम-पाठशालाकी प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त हो गई। किन्तु उनके परिवारके लोग समयकी गतिको समझते थे। वह जानते थे कि अंग्रेज़ी राज्यमे बिना अंग्रेज़ीके किसी भी व्यक्तिका पूर्ण विकास सम्भव ही नही है। अतः महावीरसहायको अंग्रेजी शिक्षाके लिए हाईस्कूलमे भर्ती करानेका निश्चय किया गया। इसके लिए गॉवके स्कूलसे प्रमाण-पत्रकी ज़रूरत थी। प्रमाण-पत्र लिखते समय अध्यापकने भूलसे महावीरसहायकी जगह महावीरप्रसाद लिख दिया। इसी नामसे १३ वर्षकी उम्रमे अपने गॉवसे ३६ मील दूर बरेली ज़िला-स्कूलमे द्विवेदीजी भर्ती हुए और आगे उनका यही नाम हो गया। उनके

गॉवसे रायबरेली बहुत दूर था। इसलिए वह उन्नाव ज़िलेके रनजीत-पुरवा स्कूलमे भर्ती किये गये। पर वह स्कूल शीघ्र ही टूट गया। इसके बाद फतहपुर भेजे गये। पर वह डबल प्रोमोशन चाहते थे और डबल प्रोमोशन वहॉ मिला नही, इस कारण उन्नाव चले गये। किन्तु ये सभी स्थान उनके गॉवसे दूर थे। इस कारण उनके पिताने उन्हे अपने पास बुलानेका निश्चय किया।

अपनी स्कूली शिक्षाका अनुभव स्वयं द्विवेदीजीने इस प्रकार लिखा है—" 'बरेलीके जिला-स्कूलमे अंग्रेज़ी पढने गया। आटा, दाल घरसे पीठपर लादकर ले जाता था। दो आने फीस देता था। दाल ही मे आटेके पेडे या टिकियाएं पका करके पेट-पूजा करता था। रोटी बनाना तब मुझे आता ही न था। संस्कृत भाषा उस समय उस स्कूलमे वैसी ही अछूत समझी गई थी, जैसे कि मद्रासके नम्बूदरी ब्राह्मणोमे वहॉ की शूद्र जाति समझी जाती है। विवश होकर अंग्रेज़ीके साथ फारसी पढ़ता था। एक वर्ष किसी तरह वहॉ काटा। फिर पुरवा, फतेहपुर और उन्नावके स्कूलोमे चार वर्ष काटे। कौटुम्बिक दुरवस्थाके कारण मै उससे आगे न पढ सका। मेरी स्कूली शिक्षा वहीं समाप्त हो गई।" डॉ० उदयभानु सिंहजीने अपने निबन्धमे द्विवेदीजीकी इस समयकी एक घटना लिखी है, जिससे उनकी आर्थिक स्थितिपर भी प्रकाश पड़ता है। उन्होने लिखा है " एक बार तो जाडेकी ऋतुमे सारी रात पैदल चलकर पॉच बजे सबेरे घर पहुँचे। द्वार बन्द था, मॉ चक्की पीस रही थी। बालककी पुकार सुनकर ससम्भ्रम दौड पड़ी। '" इस प्रकार कठिन परिश्रम और घरवालोके उद्योगके बावजूद भी घोर ग़रीबीके कारण महावीरप्रसाद द्विवेदीकी शिक्षा उचित रूपसे न हो सकी।

अपने पिताके बुलाने पर वह उनके पास बम्बई चले गये। बम्बई उसी समय औद्योगिक शहर हो गया था। वहॉ वह विभिन्न भाषाभाषियोके

सम्पर्कमे आये। विद्याके प्रति अनुराग उनके मनमे पहले ही जग चुका था। सिर्फ़ ग़रीबीसे पैदा हुई असुविधाके कारण उनकी पढ़ाई रुक गई थी। बम्बईमे वह मराठी और गुजराती भाषाभाषी लोगोके सम्पर्कमे आये। इस सम्पर्कका प्रभाव उन पर पड़ा; उन्होने मराठी और गुजराती का अभ्यास कर लिया। उनके पड़ोसमे कुछ रेलवेके क्लर्क थे। ग़रीबी थी ही; रेलवेके क्लर्कोंके सम्पर्कसे रेलवेमें नौकरी करनेकी इच्छा पैदा हुई। प्रारम्भिक अंग्रेजीका ज्ञान था ही। रेलवेकी नौकरी करके नागपुर गये। नागपुरसे अजमेर चले गये। वहाँ राजपूताना रेलवेके लोको सुपरिण्टेण्डेण्टके आफिसमे १५) मासिक पर क्लर्क हो गये। डॉ० उदयभानुसिंह जीने लिखा है—उस पन्द्रह रुपयेमेसे "... 'पाँच रुपया वे अपनी माता जीके लिए घर भेजते थे, पाँचमे अपना खर्च चलाते थे और अवशिष्ट पाँचमे एक गृह-शिक्षक रखकर विद्याध्ययन करते थे।'... " इससे उनकी ग़रीबीका पता तो लगता ही है; साथ ही यह भी सिद्ध होता है कि द्विवेदी जीके अन्दर विद्याके प्रति प्रगाढ़ अनुराग और परिवारके प्रति जिम्मेदारीकी गम्भीर भावना प्रारम्भसे ही थी।

अजमेरमे उनका मन न लगा। वह पुनः बम्बई वापस आ गये। बम्बईमे उन्होने टेलीग्राफी सीखी और जी० आई० पी० रेलवेमे सिग्नलर हो गये। इस समय उनकी आयु क़रीब बीस वर्षके थी। सिग्नलरके बाद उन्होने टिकट बाबू, माल बाबू, स्टेशन मास्टर और प्लेटियर आदिके भी काम किये। स्वभावसे भी विद्यानुरागी और साहित्यिक होते हुए भी, उन्हे सर्वथा असाहित्यिक काम करना पड़ा। पर अपने कामके प्रति जिम्मेदारी निभानेमे उन्होने कभी भी कोताही नही की। उन्होने अपने मनको अपनी भावनाओंका दास नहीं बनाया। मन पर शासन किया। मनको काममे जोता। काममे मन लगानेके कारण उनका काम सदैव अच्छा रहा। फलस्वरूप पदोन्नति होती गई। इण्डियन मिडलैण्ड रेलवेके खुलनेपर झाँसी

मे उसके ट्रैफिक मैनेजरके दफ्तरमे टेलीग्राफ-इन्सपेक्टर नियुक्त हुए। इस काममे उन्हे बराबर दौरा करना पड़ता था। बराबर दौरेपर रहनेके कारण उनके अध्ययनमे बाधा पडती थी। इस कारण अवसर देख कर उन्होने ट्रैफिक मैनेजरके दफ्तरमे बदली करा ली। इसी समय द्विवेदीजी ने नये तरहके लाइन-क्लियरका आविष्कार किया। तारवर्की पर अंग्रेजीमे एक पुस्तक लिखी। इस बीच आई० एम० रेलवे, जी० आई० पी० रेलवेसे मिला दी गई। इस समय पदोन्नतिके साथ उन्हे बम्बई जाना पडा। किन्तु इस बीच उनका साहित्यिक अध्ययन बराबर आगे बढता जा रहा था। बम्बईका जीवन उनके मनके अनुकूल न लगा। अतः ऊँचे पदका लोभ त्याग कर उन्होने फिर अपना तबादला झाँसी करा लिया।

झाँसीमे पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्टके आफिसमे पाँच वर्ष तक चीफ क्लर्क रहे। इस बीचकी दो घटनाओंका ज्ञान मुझे पं० देवीदत्तजी शुक्लके द्वारा हुआ। उन दिनो झाँसीसे रेलवेकी छपाईका काम कानपुर जाता था। रेलवेके ही कुछ लोग छपाईका काम लेकर कानपुर जाते थे और अपने खर्चका तथा छपाईका बिल भी दफ्तर को देते थे। संयोगवश एक बार द्विवेदीजीको छपाईका काम लेकर कानपुर जाना पड़ा। उन्होने वापस आकर जो बिल दफ्तरको दिया, वह पहलेके बिलोसे बहुत कम था। अफसरने पूछा—'क्यो इतना कम कैसे लगा?' द्विवेदीजीने कहा 'मै कम बेशी क्या जानूँ, जो लगा वह दिया।' बात असलमे यह थी कि सभी कर्मचारी ज्यादा रुपयोका बिल देकर कुछ स्वयं खाते थे। पर द्विवेदीजी तो ईमानदार थे। अतः उन्होने असली खर्चका बिल दिया। इससे उनकी ईमानदारीकी धाक अधिकारियो पर जम गई। अब द्विवेदीजीको ही छपाईके कामसे भेजा जाने लगा। द्विवेदीजीके एक जायसवाल मित्र थे, उन्होने द्विवेदीजीकी प्रेरणासे एक प्रेस खोल लिया। इस प्रेससे वाजिब दाम पर वह छपाईका काम करा

लिया करते थे। द्विवेदीजीकी मैत्रीसे उनका प्रेस चल निकला। पर द्विवेदीजीने उनसे कोई लाभ नही लिया। बल्कि उनके एक गरीब रिश्तेदारको अपने खर्चसे बी० ए० तक पढ़ा भी दिया।' इसी प्रकारकी एक दूसरी घटना भी है। द्विवेदीजीके एक ब्राह्मण मित्र झाँसी मे रहते थे। उनके तीन पुत्र थे और एक पुत्री थी। दैवयोगसे वह बीमार पडे और मरने लगे। मरते समय द्विवेदीजी उनके पास थे। मृत्युके समय वह व्याकुल होकर रोने लगे। द्विवेदीजीने समझाया, शान्त किया और उनसे उनकी अन्तिम इच्छा पूछी। उन्होने आँखोमे आँसू भर कर अपनी सन्तानकी ओर इशारा किया। द्विवेदीजीने कहा—'आप निश्चिन्त होकर जाइए। ये लड़के हमारे है।' और उनकी मृत्युके बाद वस्तुतः द्विवेदीजीने उनके बच्चोको पूरा प्यार दिया। उन्हे पढाया-लिखाया। एक लड़केको इंगलैण्ड भी भेजा। यहाँ तक कि उन्हे पढ़ानेके लिए एक जमीन्दारकी प्रशस्ति भी की। पर उन बच्चोको पढ़ा लिखाकर योग्य ही नही बनाया—शादी-व्याह भी किया। गरीबकी मैत्रीको और ऐसी मैत्रीको जिससे कुछ प्राप्तिकी कभी भी सम्भावना नही थी, इस ऊँचाई तक पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीने निभाया।

झाँसीमे रहते हुए उनकी साहित्यिक प्रवृत्ति बढ़ चली। बेकन-विचार रत्नावली और भामिनी-विलास निकल चुका था। हिन्दी कालिदास और नैपधचरित-चर्चा द्वारा द्विवेदीजीका समालोचक रूप प्रकट हो चुका था। 'समाचारपत्र सम्पादकस्तवः' द्वारा उनकी सम्पादनकलाके आदर्शका भावप्रवण रूप स्पष्ट हो चुका था। 'गंगालहरी', 'ऋतुतरंगिणी' और 'विहारवाटिका' द्वारा वह कवि रूपमे भी आ चुके थे। वेंकटेश्वर समाचार, भारतमित्र, नागरीप्रचारिणी पत्रिका और 'संस्कृत-चन्द्रिका'मे उनकी रचनाएँ निकलने लगी थी। सन् १९०० ई० मे नागरीप्रचारिणी सभाके तत्त्वावधानमे इण्डियन प्रेस इलाहाबादसे "सरस्वती" नामक मासिक पत्रिकाका प्रकाशन हुआ। पहले वर्ष

"सरस्वती" की सम्पादक-समितिमे पॉच व्यक्ति थे—कार्तिकप्रसाद खत्री, किशोरीलाल गोस्वामी, जगन्नाथदास बी. ए., राधाकृष्णदास और श्यामसुन्दरदास। सम्पादक-समितिका कार्यालय काशीमे था। उस समय सम्पादक समितिके एक सदस्य श्री कार्तिकप्रसाद खत्रीने पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीको यह पत्र लिखा थाः—

सरस्वती-सम्पादक-समिति कार्यालय,
गड़वासीटोला,
बनारस सिटी,
२६–६–१९००

महाशय,

अभीतक आपने अपने किसी लेखसे 'सरस्वती' को भूषित नही किया, जिसके लिए 'सरस्वती' की प्रार्थना है कि शीघ्र उसकी सुध लीजिए।

आपका
कार्तिकप्रसाद

इससे सिद्ध है कि पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी १६०० ई० मे लेखकोंकी प्रथम श्रेणीमे आ गये थे। दूसरे साल 'सरस्वती' के सम्पादनकी जिम्मेदारी सिर्फ़ बा० श्यामसुन्दरदास पर ही रही। पर अपने बहुधन्धी जीवनके कारण बा० श्यामसुन्दरदासजीने अपनेको 'सरस्वती' को जिम्मेदारीसे मुक्त करना चाहा। योग्य सम्पादकको तलाश होने लगी। बा० श्यामसुन्दरदासजीने पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीको योग्य सम्पादक मानकर इण्डियन प्रेसके मालिक बाबू चिन्तामणि घोषसे कहा कि उन्हे 'सरस्वती' का सम्पादक बनाया जाय। बाबू चिन्तामणि घोषने पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीसे अनुरोध किया। इस प्रकार १६०३ ई० मे द्विवेदीजी "सरस्वती" के सम्पादक हुए।

डॉ० उदयभानुसिंहने द्विवेदी लिखित और 'द्विवेदी-काव्य-माला' मे संकलित 'समाचारपत्र-सम्पादकस्तवः' के आधार पर उस समयकी सम्पादन-कलाकी स्थितिको अपने महत्त्वपूर्ण निबन्धमे इस प्रकार लिखा हैः—

"तत्कालीन दुर्विदग्ध मायावी सम्पादक अपनेको देशोपकारव्रती, नानाकला कौशल-कोविद, निःशेष-शास्त्र-दीक्षित, समस्त-भाषा-पण्डित और सकलकला-विशारद समझते थे। अपने पत्रमे वे बेसिर-पैरकी बाते करते, रुपया ऐंठनेके लिए अनेक प्रकारके वंचक विधान रचते, अपनी दोषराशि को तृणवत् और दूसरोकी नन्ही-सी त्रुटिको सुमेरु समझकर अलेख्य लेखो द्वारा अपना और पाठकोका अकारण समय नष्ट कर देते थे। निस्सार निंद्य लेखोको तो सादर स्थान देते और विद्वानं के सम्मान्य लेखोकी अवहेलना करते थे। आलोचनार्थ आई हुई पुस्तकोका नाममात्र प्रकाशित करके मौन धारण कर लेते और दूसरोकी न्याय-संगत समालोचनाकी भी निन्दा करते। दूसरे पत्रो और पुस्तकोसे विषय चुराकर अपने पत्रकी उदरपूर्ति करते और उनका नाम तक न लेते थे। पत्रोत्तरके समय पूरे मौनी बन जाते, स्वार्थ-वश परम नम्रता दर्शाते और अपने दोषकी निदर्शना देखकर प्रलयंकर हरका-सा उग्ररूप धारण कर लेते थे। भली-बुरी ओषधियो, गईबीती पुस्तको और सभी प्रकारके कूडा-करकटका विज्ञापन प्रकाशित करके पत्र-साहित्यको कलंकित करते थे। अपनी स्वतन्त्रता, विद्या और बलका दुरुपयोग करके अपमानजनक लेख छापते और फिर भय उपस्थित होने पर हाथ जोड़कर क्षमा मॉगते थे।" ऐसी विकट परिस्थितिमे पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीने अपने लिए चार आदर्श निश्चित किये—१—समयकी पाबन्दी, २—मालिको का विश्वासभाजन बनना, ३—अपने हानिलाभकी उपेक्षा करके पाठकोके हानिलाभका ध्यान रखना और ४—न्यायपथसे कभी भी विचलित न होना।

संसारका नियम हो या न हो; पर आमतौरसे सभी महत्त्वपूर्ण कार्योंमे विघ्न होता ही है। विघ्नोकी उपेक्षा करके और संकटोको झेलकर भी जो

अपने आदर्श पर अटल रहता है, वही चरित्रवान व्यक्ति माना जाता है। द्विवेदीजीने जब हिन्दी सम्पादन-कलामे आदर्श उपस्थित करनेका निश्चय किया, उसी समय उनपर एक संकट आ पहुँचा। झाँसी स्टेशनके पुराने डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्टका तबादला हो गया। उनकी जगह पर जो नये साहब आये, उनका बर्ताव गुलामोंसे ही बढकर था। पर द्विवेदीजी रेलवेके नौकर होते हुए भी गुलाम नही थे—वह मनुष्य और स्वाभिमानी मनुष्य थे। इसके अलावा आदर्शनिष्ठाके साथ वह 'सरस्वती' के सम्पादक भी थे। सम्पादकका स्वाभाविक धर्म न्यायनिष्ठ होना होता है, वह अन्यायका प्रतिकार ही नही करता, अन्यायके प्रतिकारकी प्रेरणा भी देता है। सम्पादक 'कलरलेस' भी नही होता। वह तो न्यायके कलरके साथ ही पैदा होता है। नये डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्टने चाहा कि द्विवेदीजी स्वयं तो बेगारी करें ही, अपने अधीन कर्मचारियोंसे भी बेगारी करवाये। पर द्विवेदीजीने जिस कुशलताके साथ नये साहबके नये फ़रमानका विरोध किया, उससे न केवल उनकी दृढताका ही परिचय मिलता है, बल्कि यह भी पता लगता है कि वह अपने अधीनोको संकटसे बचाकर और स्वयं संकट झेलकर अन्यायका प्रतिकार करते थे। यह गुण नेतृत्वका गुण होता है। कुशल नेता बराबर अपने अनुयायियोंकी रक्षा करते हुए चलता है। इस सम्बन्धमे द्विवेदीजीने क्या किया, यह उन्हीके शब्दोमे इस प्रकार है:—

"मै यदि किसीके अत्याचारको सह लूँ, तो उससे मेरी सहनशीलता तो अवश्य सूचित होती है, पर उससे मुझे औरो पर अत्याचार करनेका अधिकार नही हो जाता है, परन्तु कुछ समयोत्तर बानक कुछ ऐसा बना कि मेरे प्रभुने मेरे द्वारा औरोंपर भी अत्याचार कराना चाहा। हुक्म हुआ कि इतने कर्मचारियोंको लेकर रोज सुबह ८ बजे दफ़्तरमं आया करो और ठीक दस बजे मेरे कागज़ मेरे मेजपर मुझे रखे मिले। मैंने कहा मै आऊँगा पर औरोंको आनेके लिए लाचार न करूँगा, उन्हें हुक्म देना हुजूरका

काम है। बस बात बढ़ी और बिना किसी सोच-विचारके मैंने इस्तीफ़ा दे दिया। बादको उसे वापस लेनेके लिए इशारे ही नही, सिफ़ारिशे तक की गईं, पर सब व्यर्थ हुआ। क्या इस्तीफा वापस लेना चाहिए? यह पूछने पर मेरी पत्नीने विषएण होकर कहा—'क्या थूककर भी उसे कोई चाटता है?'—मै बोला—'नही, ऐसा कभी नही होगा, तुम धन्य हो।'—तब उसने ८ आना रोज तककी आमदनीसे भी मुझे खिलाने-पिलाने और गृहकार्य चलानेका दृढ संकल्प किया, 'सरस्वती' की सेवासे मुझे हर महोने जो २० रुपया उजरत और तीन रुपया डाकखर्चकी आमदनी होती थी, उसीसे सन्तुष्ट रहनेका निश्चय किया। मैने सोचा किसी समय तो मुझे महीनेमे १५ रुपये ही मिलते थे, २३ रुपये तो उसके ड्योढ़ेसे भी अधिक है। इतनी आमदनी मुझ देहातीके लिए कम नही।"

यदि द्विवेदीजी चाहते तो अपने अधीन कर्मचारियोको काममे जोत कर, साहब को ख़ुशकर, स्वयं आरामसे रह सकते थे। पर उन्होने ऐसा नही किया। किन्तु उन्होने साहबकी आज्ञाकी अवज्ञा भी नही की। बडी ख़ूबीसे साहबकी अन्याय पूर्ण आज्ञाका प्रतिवाद किया। अन्यायका प्रतिवाद करके साहबके हाथमे बर्खास्त करनेका अधिकार भी नही रहने दिया। स्वयं इस्तीफ़ा देकर साहबके मुखपर थप्पड़ जड़ दिया। इसके लिए जिस त्याग की जरूरत थी, वह भी किया। १५०) रु० मासिककी नौकरी और ५०) मासिक भत्ता—कुल २००) रु० मासिक की १९०३ ई० की आमदनी पर लात मार दिया और निकल पडे कष्ट झेलनेके कठिन कण्टकित पथ पर। इस प्रकार जिस "सरस्वती" के द्वारा उन्होने सम्पूर्ण हिन्दी-जगत्का नियमन किया—आधुनिक हिन्दी साहित्यका नव-निर्माण किया—उसका सम्पादन स्वीकार करते ही गम्भीरताके साथ त्याग कियाँ।

"सरस्वती" का सम्पादन करते हुए प० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीकी पहली और ज़ोरकी टक्कर नागरीप्रचारिणी सभा, काशीके प्रमुख नेता बाबू

श्यामसुन्दरदाससे हुई। द्विवेदीजी किन्तु, परन्तु, शायद और सम्भवतःकी लफ्फाजी वाले समालोचक नही थे। वह जैसे दृढ चरित्रके व्यक्ति थे, उसी प्रकार निश्चित और दृढ़ लेखनीके समालोचक भी थे। उन्होने सभाकी खोज रिपोर्टकी खरी समालोचना की। खरी समालोचनाको बहुत कम लोग सहन करनेकी क्षमता रखते है। सभाके सदस्योने "सरस्वती" से अपने समर्थन वापस लेनेकी धमकी दी। पर द्विवेदीजी इण्डियन प्रेसके मालिक बाबू चिन्तामणि घोषका विश्वास प्राप्त कर चुके थे। अतः उन्होने द्विवेदीजी पर ही सारा फैसला छोड़ दिया। द्विवेदीजीने दूने उत्साहसे अपनी धारणाके अनुसार सभाके गलत कामोका सप्रमाण पर्दाफाश करते हुए एक लम्बा वक्तव्य लिखकर सभाके पास भेजा। पर उसमे दिखाये गये दोषोको सभाके कार्यकर्ताओने न तो दूर करनेकी चेष्टा की और न उनके लिए खेद ही प्रदर्शित किया। नागरीप्रचारिणी सभामे सुरक्षित द्विवेदी जीके पत्रोमे कुछ ऐसे पत्र हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि द्विवेदीजीके मनमे एक बार यह आया कि उस वक्तव्यको प्रकाशित कर दे। पर उन्होने सोचा कि पुस्तके और लेख लिखकर, सभासदोकी संख्या बढाकर, सभाके कितने ही काम करके और गॉठका पैसा भी खर्च करके, जिस सभाकी सहायता की; जिस सभाके कई साल तक सदस्य रहे, उसके विरुद्ध लेख लिख कर उसे हानि पहुँचाना ठीक नही। इस सम्बन्धमे उनका सिद्धान्त था—'विषवृक्षोऽपि संवर्द्ध्य स्वयं छेत्तुमसाम्प्रतम्।' द्विवेदीजी अपने युगमे प्रसिद्ध लड़ाके थे, पर उस लड़ाईमे भी उनकी नैतिकता थी। वह सार्वजनिक जीवनको बिगाड़नेवाली लड़ाई नही लड़ते थे। उनका क्रोध भी संयमित था। पर वह समझौतापरस्त भी नही थे। उन्होने "सरस्वती" पर से नागरीप्रचारिणी सभाका समर्थन हटा दिया, सभाकी सदस्यताको छोड़ दिया और जन्मभर नागरीप्रचारिणी सभाके भवनमे भी जानेसे बचते रहे। इस प्रकार जहाँ उन्होने सत्यको स्पष्ट रूपमे कहनेकी अटूट दृढता

दिखाई, वहाँ ही सभाके विरुद्ध लिखनेसे अपनेको रोककर अपने संयम और संस्कृत रुचिका परिचय भी दिया। उन्होने सत्यको भी निबाहा, सभा की सदस्यता तकसे अलग हो गये और सौन्दर्यकी भी रक्षा की, सभाके विरुद्ध सार्वजनिक रूपसे कुछ नही किया।

भाषाके मामलेको लेकर बा० बालमुकुन्द गुप्तसे भी उनका संघर्ष हो गया था। दोनो ओरसे अनेक साहित्य-महारथी क्षेत्रमे उतर आये थे। दोनो समान शक्तिके व्यक्ति थे। भाषा-सम्बन्धी यह विवाद हिन्दी भाषाके इतिहासकी एक घटना हो गई। पर इस विवादका धरातल द्विवेदीजीकी ओरसे ओछा नही होने पाया। डॉ० काशीप्रसाद जायसवालसे भी द्विवेदी जीका कुछ मतभेद हुआ। दोनो ओरसे व्यंगबाण भी छूटे। पर दोनों ही एक दूसरेके हितैषी भी बने रहे, एक दूसरेके काम भी आते रहे। विवादका धरातल बौद्धिक ही बना रहा। प० लक्ष्मीधर वाजपेयीसे द्विवेदी जीका पहले विवाद हुआ, पर बादमे मैत्री हो गई। वस्तुतः उनके विवादो मे भी व्यापक दृष्टि और सिद्धान्तकी गम्भीरता होती थी। सत्यप्रियता, न्यायनिष्ठा, स्पष्टवादिता और हिन्दीहितैषितासे हटकर उन्होने विवाद किया ही नही। वह जैसा सोचते थे, सोचकर जो निश्चय करते थे, उसीके अनुकूल उनका आचरण भी होता था। इसीलिए उनकी क्रियामे तीव्रता भी होती थी। उनके जीवनका सौन्दर्य पालिशमे नही, सत्य और लोक-कल्याणकी प्रेरणामे था। वह गरीब घरमे पैदा हुए थे, गरीबीमे पले थे, कठोर संघर्ष करके बढ़े थे और धनी बनना, धन बटोर कर, धनके बल पर अथवा पदके बल पर बड़ा आदमी बनना उनका आदर्श नही था। इसी-लिए छलसे बात करने और छलपूर्ण व्यवहारसे उनको चिढ थी। उनमे स्वार्थ-साधनकी प्रवृत्ति नही थी, इसलिए दबकर बात करनेका उन्हे अभ्यास नहीं था। उन्होने एक पत्रमे लिखा भी था " मै रिश्वत देना नही चाहता। 'मै झूठ बोलनेसे डरता हूँ।" स्वाभिमान उनमे कूट-कूटकर भरा था।

इन्ही सब कारणोसे वह बहुत कुछ कठोर थे। उनसे प्रायः लोगोसे लड़ाइयाँ हो जाया करती थी। किंतु लड़ाइयोमे भी वह संयम रखते थे। इसलिए उनकी लड़ाइयोका धरातल ऊँचा होता था। वाद-प्रतिवाद और सवादका धरातल शुभ होता था।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी संयमके अवतार थे। घोर गरीबीका सामना उन्होने कठिन संयमसे किया। वह नियमित समयपर प्रातःकाल उठते। नित्यकर्मसे निवृत्त होकर कुछ टहलते। फिर अपना साहित्यिक कार्य करते। रेलवेकी नौकरी करते हुए भी, मौका मिलनेपर समय निकालकर उन्होने मराठी, गुजराती और बंगला भाषापर अधिकार प्राप्त किया। समयपर अपने रेलवेकी नौकरीपर जाते। रेलवेकी नौकरीमे वह अपना रोजका काम रोज समाप्त कर दिया करते थे। ऐसा नही होता था कि आजका काम कलके लिए पड़ा रहे। रेलवेके दफ्तरका काम पूरा करके वह घर आते। हाथ-मुँह धोकर, थोड़ा जलपान करके पत्र-पत्रिकाएँ पढते। पत्रोका उत्तर देते। उत्तर न देने लायक़ पत्रोपर 'नो रिप्लाई' लिखते। सबका रिकार्ड रजिस्टर पर रखते। घरका हिसाब रखते। अध्ययन करते। रेलवेकी नौकरी छोड़ देने पर सारा समय 'सरस्वती' को देते। कोई भी लेख बिना अच्छी तरह जाँचे उसकी भाषाको बिना ठीक-ठाक किये कभी भी प्रेसमे नही देते थे। उनके संशोधित लेख नागरीप्रचारिणी सभाके संग्रहालयमे सुरक्षित है। वे अशुद्धि-भरी रचनाओका आद्योपान्त संशोधन कर दिया करते थे। कविताओका कायाकल्प कर दिया करते थे। कभी-कभी सम्पूर्ण रचना ही बदल देते। लेखक सिर्फ अपना नाम देखकर अपनी रचना समझता था। अस्वीकृत रचनाओके दोषोको स्पष्ट करते हुए पत्र लिखते थे। कभी-कभी ग्रन्थ-निर्देश भी कर दिया करते थे। ऐसा करते हुए भी वह लेखकोके साथ बहुत प्रेम-पूर्ण व्यवहार करते थे। लेखकोसे लेख मँगाते समय उन्हे अनेक विषय सुझाते थे और सहायक ग्रन्थोका नाम भी बताते थे। सच्ची लगन, विस्तृत

अध्ययन, सुन्दर शैली और संकोची स्वभाववाले लेखकोंकी तो वह ख़ुशामद तक करते थे। ऐसा करनेमे उन्हे पत्र-व्यवहार भी बहुत करना पड़ता था। 'सरस्वती' के लिए छः महीनेकी सामग्री वह अपने पास बराबर प्रस्तुत रखते थे। जब कभी वह बीमार हुए, छुट्टी ली, या अन्तमे अवकाश भी ग्रहण किया, तब अपने उत्तराधिकारीको कई महीनेकी सामग्री देकर गये। उनके लगभग सत्रह वर्षोंके सम्पादन-कालमे एक बार भी 'सरस्वती' का प्रकाशन नही रुका। इस प्रकार उनके जीवनमे संयम और परिश्रमका अपूर्व योग था। कुछ लोग प्रतिभाको एक रहस्य समझते है। पर यह भ्रम है। वस्तुतः प्रतिभा संयम और परिश्रमके परिणामका ही दूसरा नाम है। बुद्ध, महावीर, चाणक्य, चन्द्रगुप्त, अशोक, तुलसीदास, रवीन्द्रनाथ और गान्धीजी सभीकी प्रतिभाका एक ही रहस्य है—अटूट संयम और कठिन परिश्रम!

द्विवेदीजीके संयममे अनेकरूपता थी। उनका संयम जीवन-व्यापी था। ग़रीबीसे उन्होने जीवन बिताना सीखा था। वह गाढ़ेका कपड़ा पहनते। अपने पर कम-से-कम ख़र्च करते। अपनी कम-से-कम आमदनीमे भी कुछ न कुछ बचा कर रखते। यह ठीक है कि सन्तान न होनेके कारण किसी सीमा तक इस काममे उन्हे कुछ सुविधा भी थी। पर यह ऐसा कारण नही है कि जिसे प्रधान माना जाय। अनेक ऐसे सन्तानहीन व्यक्ति हैं, जो अन्य आदतो पर अधिक व्यय करते है। पर द्विवेदीजी संयमी थे। उनके जीवनमे न बुरी (असामाजिक) भावनाएं थी और न उनकी वैसी आदत थी। वे पूर्ण संयमी थे। पर उनका संयम कभी भी कंजूसीकी सीमामे नहीं गया। वह अपने अतिथिका पूर्ण सत्कार करते थे। घर आये साधारण विद्यार्थीको भी जलपान कराते। उनके कोई सन्तान नही थी। पर उन्होने औरोंकी सन्तानको अपनी सन्तान बना लिया था। अपनी बहनकी सौतकी सन्तानको उन्होने अपनी सन्तान बना लिया। अपने मित्रोकी सन्तानके साथ अपनी सन्तान-जैसा व्यवहार किया। अनेक लड़कोंको

बी० ए०, एम० ए० तक पढ़ाया। रिश्तेकी तीन भानजिओंकी शादियाँ की, उनका गौना दिया। गैरोंकी भी दो लड़कियाँ ब्याही। अनेक लड़कियो की शादीमे सहायता दी। अनेक विधवाओंको मासिक वृत्ति दी। कुएँ खुदवाये। काशी हिन्दू विश्वविद्यालयमे छात्र वृत्तिके लिए ६४०० रु० का दान दिया। १००० रु० नागरीप्रचारणी सभा काशीको दान दिया। इस प्रकार पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीके जीवनमें वदान्यता और मितव्यियिताका असाधारण संयोग था। उनका संग्रह दानके लिए था। वह स्वभावके कुछ क्रोधी थे—सम्भवतः उनमे कुछ पूर्वाग्रह भी था—पर यह पूर्वाग्रह उनकी दानवृत्ति और न्यायनिष्ठा पर कभी हावी नहीं हो सका। नागरीप्रचारिणी सभा काशीके कुछ अधिकारियोंसे उनका झगड़ा था; पर नागरीप्रचारिणी सभाको ही उन्होने अपना सर्वोत्तम दान दिया।

द्विवेदीजी निपट गाँवके ग़रीब ब्राह्मण घरमे पैदा हुए थे। कठिन परिश्रम करते हुए अनेक आर्थिक असुविधाओंके बीचसे वह गुज़रे थे। ऐसी परिस्थितिमे भी उनके अन्दर एक व्यवस्था थी। उनके घरकी चीज अस्तव्यस्त और फिंकी हुई नही रहती थी। किताब, काग़ज़, क़लमदावात सभी व्यवस्थित, सभी साफ़। यहाँ तक कि लिखनेके बाद वह कलमको पोछकर रखते थे। काग़ज़के चिट तकको सम्हाल कर रखते और उसका उपयोग करते थे। सावधानीसे पत्र-पत्रिका पढते और आवश्यक खबरो पर निशान लगाकर सम्हाल कर रखते। उनके घरमे कपड़ा-बिछौना करीनेसे रखा होता था, उनके घरमे टेबल-कुर्सी, गुलदस्ता तथा अन्य चमक-दमकका सामान नही था। उनका घर साधारण गृहस्थका घर था। पर व्यवस्था और सफाईके कारण उनका घर मन्दिरकी तरह साफ और स्वच्छ रहता था। उसमे सादगी और स्वच्छतासे निर्मित सौन्दर्य-भावना थी। उनका घर उनके मानसको व्यक्त करता था और उनका मानस उनके घरकी तरह व्यवस्थित और स्वच्छ था। इसी कारण द्विवेदीजी

अव्यवस्था और गन्दगीको बर्दाश्त नही कर पाते थे। उन्होने हिन्दी भाषा और साहित्यको भी व्यवस्थित कर दिया। जब वह गाँवमें रहते थे, और बहुत कमजोर हो गये थे। उस समय भी उनकी व्यवस्था-प्रियता ज्यो की त्यो बनी थी। श्रीयज्ञदत्त शुक्लने द्विवेदी अभिनन्दन-ग्रन्थमे उनकी व्यवस्था-प्रियताके सम्बन्धमे लिखा है—"प्रतिदिन सायंकाल वे जब अपने बाग़मे घूमने जाते है, तब बागके वृक्षोका भली भाँति निरीक्षण करते है। यही नहीं, वे निरीक्षण-द्वारा इसका भी अनुमान कर लेते हैं कि किस वृक्षमे कितने फल लगे हुए है। इसी प्रकार वे अपने खेतोका भी खूब निरीक्षण करते है। शामको टहलते हुए वे प्रत्येक खेतमे यह देखते है कि उसे सीचनेकी आवश्यकता है या नही, या उसमे कोई कीड़ा तो नही लग गया है।" अपने प्रिय जनोकी आर्थिक व्यवस्थाका भी ख़्याल रखते थे। सलाह भी दिया करते थे।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीने आलोचनाके शास्त्रीय ग्रन्थ नही लिखे। शायद वह आलोचनाके शास्त्री ग्रन्थोके निर्माणकी परिस्थिति भी नहीं थी। द्विवेदीजीने हिन्दी भाषाका सुधार, लोक-रुचिका परिष्कार और लेखक निर्माणका कार्य किया। इसके लिए उन्होने नाना विषयोमे अपनी लेखनीका प्रयोग भी किया। वस्तुतः लिखनेकी सफलता वे इसी बातमे मानते थे कि कठिनसे कठिन विषय भी ऐसे सरल रूपमे रख दिये जाँय कि साधारण पाठक भी उसे समझ जाय। इसी कारण उनमे गूढ़-गुंफित परम्पराकी कमी नजर आती है। पर व्याकरणका उन्होने सदैव ध्यान रक्खा। व्याकरण-सिद्ध भाषा लिखनेवाले बहुतसे लेखक भी उन्होने पैदा किये। किन्तु भाषाको सुधारते हुए भी उन्होंने अनेक आलोचनात्मक लेख लिखे। उनकी आलोचनाओमे दो प्रकारके द्वन्द्वकी परिणति है—बाह्य जगत्मे नवीन और प्राचीन, पूर्व और पश्चिमकी विचारधाराका द्वन्द्व और अन्तरमे कटु सत्य और कोमल हृदयका द्वन्द्व। संस्कृतके घने सम्पर्कके कारण जहाँ उनमें

प्राचीनताके प्रति प्रेम है, वही विविध भाषाओंके साहित्यके घनिष्ठ सम्पर्कके कारण पश्चिमसे आनेवाले आधुनिक ज्ञान-विज्ञानके प्रति तीव्र आकर्षण भी है। यही कारण था कि उन्होने 'सरस्वती' के अनेक अंकोमे दस दस विषयो पर सम्पादकीय टिप्पणियाँ लिखी। इसी कारण कही-कही उनकी आलोचनाओमे पूर्व और पश्चिमके सिद्धान्तोका समन्वय भी दृष्टिगोचर होता है। पर इस समन्वयका अपेक्षित विकास शायद द्विवेदीजीमे नहीं हुआ था। इसीलिए छायावादको उचित प्रशसा वे नही कर सके। पर इस समन्वयका प्रारम्भिक रूप द्विवेदीजीके चिन्तनमे प्रकट हो चुका था। द्विवेदीजीने जिस सत्यको अध्ययन, चिन्तन, मनन द्वारा जान लिया था, उसके प्रति उनमे अटूट श्रद्धा थी; वह सत्यको शब्दोके कौशलसे फुसलाना पाप समझते थे। सत्यनिष्ठाके कारण ही अपने घनिष्ठतम मित्रो तकके लेखोमे आवश्यक होने पर वह काट-छाँट करना अपना कर्तव्य समझते थे। सत्यनिष्ठाके कारण ही वह अपनी बातो और धारणाओमे आवश्यक संशोधन भी स्वीकार करते थे। किन्तु इस सत्यनिष्ठाके कारण ही उन्हे अपने कोमल हृदयको दबाना भी पड़ता था। मित्रो तकका विरोध करना पडता था, मित्रोसे भी झगडना पड़ता था। पर यदि उनमे यह सत्यनिष्ठा न होती, तो वह अपने युगको रूप न दे सकते। द्विवेदीजीकी आलोचनामे विचारोकी सजगता, तर्कका पैनापन, कभी-कभी व्यंगोकी भरमार, संस्कृत, उर्दू और फारसीका आवश्यक पुट, अपनी बातको फेर-बदलकर पाठकके मनमे बैठा देने और विरोधीको कायल कर देनेकी महत्त्वपूर्ण शैली है। इसी व्यास शैली-द्वारा उन्होने अपने युगके झाड़-झंखाडोको साफ किया था, इसी शैली-द्वारा उन्होंने भाषाका सुधार किया था; इसी शैली-द्वारा उन्होने नवीन लोकरुचिका निर्माण किया था। किन्तु सिर्फ शैली-द्वारा ही कोई युग-निर्माता नही हो जाता। द्विवेदीजीमें व्यास-शैलीके साथ ही गम्भीर सत्यनिष्ठा थी। सत्यनिष्ठाके साथ ही लेखक पैदा करने, उनके साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार

करनेकी आदत थी। वह अपने साथियोके साथ 'संस्कृत' व्यवहार नही करते थे; अपने साथियोके साथ उनका व्यवहार सच्चाईसे भरा-पूरा होता था; धनी, मानी और वरिष्ठ वर्गके साथीके प्रति एक व्यवहार तथा ग़रीब और अख्यात साथीके साथ दूसरा व्यवहार करने वाले—दोमुँहे नेता वे नही थे। वह बलाबल तौलकर नही चलते थे; सत्य-असत्यको देखकर सत्यके साथ चलते थे। इसी कारण उनकी ईमानदारी और सच्चाईमे किसीको अविश्वास नही हुआ। वह जन-साधारण और साहित्यिकोकी श्रद्धाको सहज ही आकर्षित करते थे। इसके साथ ही उनमे कठिन परिश्रमशीलता, विविध भाषा और साहित्यका ज्ञान तथा व्यापक जानकारी भी थी। इसीलिए पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजी अपने युगमे हिन्दीके महान् नेता हो सके।

'सरस्वती' के सम्पादनसे अवकाश ग्रहण करनेके बाद द्विवेदीजी अपने गॉव दौलतपुरमे रहने लगे। कर्तव्य-पालन और जिम्मेदारीकी भावना उनके अन्दर प्रारम्भसे ही थी। जब वह १५) महीना तनख़्वाह पाते थे, तब भी उसमेंसे ५) महीना बचा कर अपनी मॉके पास भेजते थे। वह अपनी आवश्यकताको सीमित करके रखते थे और अपनी आमदनीमेसे कुछ न कुछ बचाकर परहितमे लगाते थे। उनकी यही कर्तव्यपरायणता अब और बढ़ गई। जब वह दौलतपुर गॉवमे रहने लगे, तो गॉवके प्रति उनकी कर्तव्य-भावना अधिक जाग्रत् हुई। अपने गॉवमे हिन्दी पाठशाला, डाक-घर और एक छोटे अस्पतालका प्रबन्ध किया। वह स्वयं भी रोगियोको दवाइयॉ देते थे। रोगियोको—चाहे वह किसी भी जातिका हो—उसके घर जाकर देखते, दवाई देते और यदि आवश्यक समझते तो उसके लिए पथ्यका भी प्रबन्ध करते। रोगियोंके देखने और उनकी सेवामे वह अपनी सुविधा-असुविधाका ज़रा भी ध्यान नहीं रखते थे। गर्मीके दिनोंमे जब लू चलती होती, तब भी सिर और कानको दुपट्टेसे अच्छी तरह ढँककर रोगियोके घर जाते थे। अपने जीवनमे तो वह व्यवस्था और सफाईका ध्यान रखते ही थे;

गॉवकी सफ़ाईका ध्यान भी उन्हे था। प्रारम्भमे स्वयं गॉवकी सफाई करते और लोगोको सफाई करनेके लिए प्रेरित करते। आगे चलकर गॉवकी सफाईके ख्यालसे गॉवमे ही एक मेहतर भी बसा लिया।

गॉवमे खेती-गृहस्थी ही मुख्य धन्धा होता है। द्विवेदीजीके पास भी कुछ खेत थे। उन्होने अपने विद्याव्यसनी मनको खेतीके काममे लगा दिया। जैसा कि पहले लिखा है, वह नित्यप्रति अपने खेतो पर घूमने जाते, खेतकी मिट्टी और फसलका निरीक्षण करते। हर एक बातका हिसाब रखते। यही नही, वह गॉव भरकी खेतीकी रक्षाकी भी व्यवस्था करते। गॉवके ग़रीब किसानोको बिना सूद पर उधार रुपये देते। कभी-कभी किसानोको बीज देते। इस प्रकार अपनी खेती और गॉवकी भी खेतीका प्रबन्ध करते। एक बार जब नीलगाय और बन्दरोने गॉवकी खेतीको तबाह करना शुरू किया, तो द्विवेदीजीने अपने प्रियपात्र पं० श्रीराम शर्मासे कह कर नीलगाय और बन्दरोका शिकार करवा दिया। इस दिशामे उन्होने गॉववालोकी मनोभावना का भी ख़्याल नही किया। जिस कामको करनेका वह निश्चय कर लेते, उसे पूरा करनेमे ज़रा भी संकोच नही करते थे। गॉवमे अशिक्षा और कुसंस्कार तो था ही। बहुतसे गॉववाले अपने पशुओको यो ही आवारागर्दकी भॉति छोड़ देते थे। ये पशु गॉवकी खेतीको नुकसान पहुँचाते थे। द्विवेदीजीने गॉववालोको समझाया। पर मुद्दतोका कुसंस्कार भला उपदेशोसे क्यो जाने लगा। लाचार होकर द्विवेदीजीको गॉवमे ही एक कानीहौज भी बनवा देना पड़ा। इससे कुछ लोगोके स्वार्थ पर आघात पडा। कुछ लोगोने द्विवेदीजीको बुरा-भला भी कहना शुरू किया। पर इसका उनके मन पर कुछ भी प्रभाव नही पड़ा। वह निर्लिप्त चित्तसे गॉवकी सेवा करते ही रहे।

ग्राम्य-जीवनका बाह्य ही नहीं, अन्तर भी विकृत हो चुका था। बाह्य सफाई और व्यवस्थाको,तो द्विवेदीजी सुधार ही रहे थे। आन्तरिक खराबीकी ओर भी उनका ध्यान गया। आपसी फूट, ईर्ष्या-द्वेषसे गॉवोमे मुकदमे-

बाजीका वातावरण गरम था। द्विवेदीजीने गाँवोके अन्तस्को भी सुधारनेका काम शुरू कर दिया। गाँवोको मुकदमेबाजीसे बचानेकी गरजसे उन्होने 'विलेज मुंसिफ़' का काम शुरू कर दिया। वह आस-पासके गाँवोके तमाम मामलो-मुकदमोको निपटाया करते थे। वह गाँवसे, गाँवकी परिस्थितिसे और वहाँ वालोकी प्रकृतिसे तो परिचित थे ही; फलतः बडे-बड़े मामलो तकको समझा-बुझा कर आपसमे ही फैसला करा देते थे। यथासम्भव झगड़ोको कचहरी तक जाने ही नही देते थे। उनका फ़ैसला व्यावहारिक और क़ानूनी दोनों दृष्टिसे बडे महत्त्वका होता था। उनको कानूनका ज्ञान भी इतना था कि आस-पासके लोग उनसे सलाह-मशविरा लिया करते थे। पर उनकी सलाह इस दृष्टिसे होती थी कि कोई अदालत तक न जाय और मजा तो यह था कि अदालतमे भी उन्हींका फ़ैसला मान्य हो जाता था। दौलतपुरमे रहते समय द्विवेदीजीकी दिनचर्या थी—प्रातःकाल उठ कर शौचादिसे निवृत्त हो खेतो पर टहलने जाना; लौटकर घर-द्वारकी सफाई करना, स्नान-भोजनके बाद चिट्ठियोका जवाब देना; अखबार, पत्र-पत्रिका आदिका अवलोकन करना; गाँवके मुकदमोको सुनना, उनपर विचार कर फ़ैसला देना अथवा समझौता करा देना; सन्ध्याको खेतोकी ओर जाना; वापस आकर गाँव वालोकी बातोंको सुनना। इसके बाद ब्यालू और कुछ किताबोका अवलोकन करते हुए सो जाना। इस प्रकार हिन्दीका यह महान् नेता अपने जीवनके अन्तिम प्रहरमे गाँवोमे जाकर लोक-सेवा करता रहा। जीवनके जितने भी क्षण द्विवेदीजीके पास थे सबका उन्होंने सदुपयोग किया।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीको सदैव विपरीत परिस्थितियोका सामना करना पड़ा। वह प्रारम्भमे ही उच्चशिक्षा प्राप्त करना चाहते थे। पर ग़रीबीके कारण उन्हे अपना अध्ययन रोक देना पड़ा। किन्तु ज्ञानकी उत्कट प्यास उनमें अन्त तक बनी रही। उनकी ग़रीबीने उन्हे नौकरी करनेके लिए बाध्य किया। ईमानदारीसे नौकरी करके, घर-गृहस्थीकी पूरी

जिम्मेदारी निभाते हुए भी, अपने पासका सारा समय उन्होने अनेक भाषाओं और उनके विविध साहित्यके अध्ययनमे लगाया। अक्सर रात-रात जाग-जाग कर उन्होंने गम्भीर अध्ययन किया। विविध स्थानोंपर जाकर विद्वानोसे उन्होने ज्ञानार्जन किया। अपने गम्भीर और असाधारण अध्ययनके बल पर ही वह एक मामूली क्लर्ककी स्थितिसे उठकर, अपनी परिस्थितियोके सम्पूर्ण बन्धनोको झटककर, हिन्दी साहित्यके एक युग-निर्माता हुए। सस्कृत, हिन्दी, उर्दू, मराठी, गुजराती, बगला और अग्रेजी भाषा तथा साहित्य पर उन्होने अधिकार प्राप्त किया। ज्ञानकी इस कठिन साधनामे उन्होने अपने शरीरको होम दिया। पहले उन्हें उनीद्र रोग हो गया। पर फिर भी उनकी ज्ञान-साधनामे कमी नही आई। 'सरस्वती' के सम्पादनमे वह लगे ही रहे। फिर उनका पेट खराब हुआ। अपने संयम और सात्त्विक चर्या-द्वारा उन्होंने कुछ समय तक अपनेको सम्हाला। पर वृद्धावस्थामे तो शरीरकी प्रत्येक कमज़ोरी उभर आती है। एकाएक द्विवेदीजीको जलोदर रोग हो गया। पहले तो ग्राममें किसीने उसे पहचाना ही नहीं। फिर जब डाक्टर शंकरदत्त शर्माने रोग को पहचाना तो रोग बहुत बढ़ चुका था। डाक्टर शर्माने सोचा कि अपने घर पर द्विवेदीजीको रखकर इलाज करनेसे शायद रोग दूर हो जाय। वह द्विवेदीजीको अपने घर पर बरेली ले गये। पर यह रोग तो मात्र रोग नही था, यह तो द्विवेदीजीका काल था। डाक्टरके इलाजका कोई भी परिणाम नही निकला और २१ दिसम्बर १९३९ को प्रातः ४ बजे महान् कर्मठ आचार्य प० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीने अपने नश्वर शरीरको छोड़ दिया।

—बैजनाथसिह 'विनोद'

आचार्यदेव

श्री मैथिलीशरण गुप्तजी स्व० आचार्य पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजी के बड़े प्रिय शिष्य है। उन्होने आचार्य द्विवेदीजीके इस संस्मरण में यह प्रकट किया है कि किस प्रकार द्विवेदीजीने उन्हें बनाया था। इसीलिए इस संस्मरणका ऐतिहासिक महत्त्व है। इसी दृष्टिसे यहाँ इसे दिया जा रहा है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तका परिचय अन्यत्र उनको लिखे गये पत्रोंके प्रसंगमे दिया जा रहा है।

आचार्यदेव

मैं जब और कुछ न बन सका तब मैने कवि बननेकी ठानी। हाय, कहीं सब पोले बाँस वेणु बन सकते !

एक जन, जो गधे पर बैठनेकी भी योग्यता न रखता था, बनानेवालोंके बढ़ावेमे आकर घोड़े पर चढ़ बैठा। घोड़ा भी ऐसा, जो धरती पर पैर ही न रखना चाहता था। ऐसा आरोही तो उसके लिए अपमानजनक था। परन्तु क्या जाने, घोड़ेको भी विनोद सूझा और वह उसे एक वर्जित स्थानमे ले दौड़ा। वहाँका प्रहरी सतर्क होकर चिल्लाया—सावधान! परन्तु आरोही सावधान होकर भी क्या करे? तब प्रहरीने शस्त्र सँभालकर कहा—अच्छा, चला आ—ऐसे ही! अब आरोही चिल्लाया—दुहाई आपकी, मै स्वयं नही आ रहा हूँ, यह दुर्मुख मुझे लिये आ रहा है! प्रहरी भी समझ गया और जिसे अनधिकार प्रवेश करनेका दण्ड देने जा रहा था उस भाग्यहीन अथवा भाग्यवानकी उसे उलटी सँभाल करनी पड़ी।

कवि तो बनाये नही जाते, परन्तु कोप-भाजन होने योग्य होकर भी मैं पूज्य द्विवेदीजी महाराजका अनुग्रह-भाजन हो गया। इससे बढ़कर किसीका क्या सौभाग्य होगा।

उन्चास-पचास वर्ष पहलेकी बात है। मैं कुछ पद्य बनाने लगा था। पण्डितजी उन दिनो झाँसीमे ही थे। उनका नाम मै सुन चुका था और उनकी 'सरस्वती' के दर्शन भी मैने पा लिये थे। मेरे मनमे प्रश्न उठा—क्या 'सरस्वती' मे अन्य कवियोकी भाँति मेरा नाम नहीं छप सकता? इसका

उत्तर अपने ही दीर्घ निःश्वासके रूपमे मुझे मिल जाना चाहिए था, परन्तु लड़कपन अल्हड़ होता है और दुस्साहसी भी।

पिताजीके साकेतवासके पीछे, उनके नाते कृपा बनाये रखनेके प्रार्थी होकर, अपने काकाजीके साथ, हमलोग पहली बार कलक्टर साहबको जुहारने झाँसी गये थे। मेरे जानेका प्रधान उत्साह और ही था। भीतर-भीतर 'सरस्वती' मे अपना नाम छपानेका डौल लगानेकी लालसासे और बाहर-बाहर ऐसे महानुभावके दर्शन करनेकी इच्छासे, अपने अग्रजको साथ लेकर मैं पण्डितजीके स्थानपर पहुँचा। घर छोटा ही था। द्वारपर बाँसकी सींकों की बनी लिपटी हुई चिक बँधी थी, जिसकी गोटका हरा कपड़ा कुछ फीका पड़ चला था। एक ओर उनके नामकी पट्टी लगी थी। दूसरी ओर भी एक पटली थी। उसमे लिखा था—सवेरे भेंट न होगी। हमलोग इस बातको सुन चुके थे। अतएव, तीसरे पहर गये थे। तब भी वे आफ़िससे नहीं लौटे थे। छोटेसे उसारेमे एक बेंच पड़ी थी। उसीपर हम बैठ गये। भीतर कमरेमें खुली अलमारियोकी पुस्तकोकी दूसरी दीवार-सी बनी थी। बाईं ओरके पक्खेसे सटकर एक पलंग पड़ा था। उसपर लपेटे हुए बिछौनेने लोड़का रूप धारण कर रक्खा था। दाईं ओरके पक्खेसे लगी दो तीन कुर्सियाँ पड़ीं थीं। बीचके रिक्त स्थानमे पलंगसे कुछ हटकर प्रवेशद्वारके खुले किवाड़ को छूता हुआ एक छोटा-सा टेबुल या चेयर डैस्क था। उसके सामने भी एक कुर्सी पड़ी थी। टेबुल लिखने-पढ़नेकी सामग्रीसे भरा था, परन्तु सब सामग्री बड़े ढंगसे सजाई गई थी। प्रवेश-द्वारके सामने ही भीतर जाने का द्वार था, उसमेसे एक मझपौरिया दिखाई देती थी। सारा स्थान बहुत ही परिष्कृत, स्वच्छ और शान्त-कान्त दिखाई पड़ता था। तो भी पण्डित जीके आनेका समय निकट जानकर घरकी परिचारिका हाथमे गमछा लिये उसे कमरेमे इधर-उधर फटकार रही थी। ऐसा जान पड़ता था मानो यह एक विधि है, जिसे आवश्यक हो या न हो, पूरा करना ही चाहिये। ऐसी

समझदार और कुशल सेविकाएँ विरली ही होती हैं। बड़ी अपनाहटके साथ उसने हम लोगोका स्वागत-सत्कार किया। उसकी मृत्यु होनेपर पण्डितजीने मुझे यथार्थ ही लिखा था—ऐसा जन अब मिलनेका नहीं।

तनिक देर पीछे उसने एक बार इधर-उधर देखा फिर उसारेसे नीचे उतरकर कुछ दूर तक पण्डितजीके आनेका मार्ग भी बुहार दिया। इतना करके मानो वह उस समयके कार्यसे निश्चिन्त हो गई। उसी समय पण्डितजी आते हुए दिखाई दिये। व्यक्तियोकी विशिष्टता मानो उनके आगे चलती है। हम लोगोने देखते ही समझ लिया, यही पण्डितजी है, यद्यपि बिना पगडीके मै पण्डितोका अनुमान ही न कर सकता था और उनके सिर पर टोपी थी। मैने सन्ध्या समय दफ्तरसे लौटते हुए बहुतसे बाबुओको झासीमे ही देखा था। परन्तु पण्डितजी जैसा कोई बाबू न देखा था। जान पड़ा, 'बाबू' के वेशमे वे कोई 'साहब' है। विलायती साहब बहादुरसे तो हमलोग मिल ही चुके थे। उसका जो तेज था वह बहुत कुछ उसके अधिकारके कारण था, पण्डितजीका प्रताप सर्वथा व्यक्तिगत। हम लोग ससम्भ्रम उठ खड़े हुए। जाडेके दिन थे। वे हलके कत्थई रङ्गका नीचा ऊनी कोट या अचकन पहने थे और ऊनी ही सफ़ेद फलालैनका पतलून जैसा पाजामा। बायें हाथमे कुछ कागद-पत्र लिये थे, दायेंमे छड़ी। दफ्तरसे लौटनेवालोंके विपरीत अनातुर धीर गतिसे पैदल आ रहे थे। ऐसे, मानो अभी सवारीसे उतरे हो आफिस दूर न था और पैदल आने-जानेसे वे छोटे नही होते थे, क्योकि स्वभावतः बडे थे। झूठे सम्मानके पीछे वे टहलनेके सुयोगसे वंचित क्यो होते जब सच्चा सम्मान उन्हे सुलभ था। ऊँचे ललाटके नीचे घनी और मोटी भौहे उसके अनुरूप ही थीं। उनकी छायामे विशेष चमकती हुई आँखे बड़ी न होने पर भी तेजसे भरी दिखाई देती थीं। पण्डितजी वेश-भूषासे सुसंस्कृत आकृतिसे गौरवशाली और प्रकृतिसे गम्भीर तथा चिन्तनशील जान पडते थे। हम लोगोका प्रणाम स्वीकार कर और हमपर

एक दृष्टि डालकर वे कमरेके भीतर जाकर ही रुके। वहा इधर-उधर देख कर और तुरन्त ही 'आइये' कहकर उन्होने हमे भीतर बुलाया। जबतक हम कमरेमे पहुँचे तब तक छड़ी और कागद-पत्र यथास्थान रखकर उन्होने अपनी टाइमपीस घड़ी उठा ली थी और उसमे ताली देना आरम्भ कर दिया था। वे बडे ही नियमबद्ध थे और सम्भवतः आफिससे लौटकर घड़ी कूकनेका समय उन्होने बॉध रक्खा था।

"बैठिए" सुनकर भी हमलोग खडे ही रहे। हमारा भाव समझकर घड़ी रखते हुए वे पलंग पर बैठ गये। सामनेकी कुर्सियोकी ओर हाथ बढाते हुए फिर स्निग्ध स्वरमे बोले—बैठिए। हमलोगोके नाम और परिचयसे वे कुछ आकर्षितसे हुए और हाल ही मे हमे पितृहीन हुआ सुनकर सहानुभूति प्रकट करने लगे। पिताजीकी अनन्य भक्तिकी चर्चाके प्रसंगमे उन्होने यह भी पूछा कि आपलोग किस सम्प्रदायके अनुयायी है। 'विशिष्टाद्वैत' सुनकर बोले—हॉ। बहुत दिन पीछे प्रसिद्ध विद्वान् माननीय 'बार्हस्पत्य'जीसे जब मै पहली बार मिला तब उन्होने भी मुझसे यही पूछा था और उत्तर सुनकर कहा था, हम विशिष्टाद्वैत मतके नही है पर अच्छा उसीको मानते हैं। यह कहकर वे मुसकराने लगे थे। मै भी उन्हीका अनुसरण करके हॅस गया था। पण्डितजीने 'हॉ' कहते हुए अपना सम्प्रदाय भी बताया था, सम्भवतः वल्लभ। इसी संबन्धमे उन्होने एक बार कहा था, हमारे पिता कुछ लिखनेके पहले लिखा करते थे—'श्रीलाड़लेश्वराय नमः'। परन्तु अब हम देखते हैं यह 'लाड़ले' और 'ईश्वर' का संधि-संयोग ही ठीक नही है।

पण्डितजीसे हम लोगोकी बात-चीत आरम्भ ही हुई थी, इतनेमे भीतरसे एक सुन्दर और हृष्ट-पुष्ट बिल्ली आई और उछलकर पण्डितजीकी गोदमे आ बैठी। उनके कण्ठस्वरसे उन्हे आया जान कर ही वह भीतरसे दौड़ी आई थी। पशु-पक्षी मैंने भी पाले है, परन्तु पली बिल्ली मैंने पहले-पहल

वही देखी थी। मुझे बड़ा कौतूहल हुआ। मैंने देखा, पण्डितजी धीरे-धीरे उस पर हाथ फेर रहे है और वह हर्ष और गर्वसे एक असाधारण शब्द कर रही है। जो लोग पक्के गानेसे चिढ़कर उसे बिल्लियोका लड़ाना कहते हैं, वे कहीं उस बिल्लीका शब्द सुनते तो जानते बिल्लिया भी स्नेह मे कैसा प्यारा बोलती हैं। पण्डितजीने पशु-पक्षियोकी चेष्टाओं पर 'सरस्वती'मे एक लेख लिखा था। मुझे ठीक स्मरण नही, इस बिल्लीको देखकर मुझे उसका ध्यान आ गया था अथवा उसे देखकर इसका।

परन्तु जिस उद्देश्यको लेकर मै पण्डितजीके यहाँ गया था उसके विषयमे कुछ कहनेका मुझे साहस ही न हुआ। मेरा सारा उत्साह न जाने कहाँ चला गया। मेरे अग्रजने प्रसंग चलाकर एक बार कहा भी कि ये भी कुछ कविता बनाते हैं। 'बड़ी अच्छी बात है' कहकर पण्डितजीने मेरी ओर देखा। मै तो कुछ नही, कुछ नही, कह कर संकोचसे सिकुड़-सा गया। मुझे विपत्तिमे पड़ा देखकर फिर उन्होंने कुछ नही कहा। कुछ कहनेके लिए मैंने कहा—हम लोग तो सबेरे ही आने वाले थे, परन्तु सुना कि सन्ध्याको ही आपसे भेट होती है, इसलिए इस समय सेवामे उपस्थित हुए हैं। वे हँसकर बोले—हाँ, सबेरे हम 'सरस्वती' का काम करते हैं और कुछ लेख आदि लिखते है। फिर अवकाश नही पाते। परन्तु जब आप इतनी दूरसे आये हैं तब क्या हम उस समय भी आपसे न मिलते। कभी झाँसी आया कीजिये और सुविधा हो तो मिला कीजिये।

उनका अधिक समय लेना अपराध करना था। रोकने पर भी हम लोगोको विदा करने वे बाहर आये। आगतका स्वागत सभी करते है, परन्तु अपने छोटोके प्रति भी उनका सदा ऐसा ही उदार व्यवहार रहा।

अपने पद्योंके विषयमे प्रत्यक्ष कुछ कहनेकी अपेक्षा पत्र-व्यवहार करने में ही मुझे सुविधा दिखाई पड़ी। वस्तुतः उनके प्रभावसे मैं अभिभूत हो

गया। पीछे न जाने कितनी बार उनकी सेवामे उपस्थित होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, वे भी कृपाकर एक बार यहाँ पधारे, परन्तु वैसा आतंक कभी नहीं जान पड़ा। इसके विरुद्ध जैसे-जैसे निकटसे उनका परिचय मिलता गया, वैसे-वैसे उनकी सदयता और सहृदयताका ही अधिकाधिक अनुभव होता रहा। अपने कर्त्तव्यमे ही वे कठोर प्रतीत होते थे, आत्म-सम्मानका प्रश्न आ जाने पर उनमे उग्रता भी आ जाती थी, अन्यथा उनका-सा कोमल हृदय दुर्लभ ही है। एक बार वाद-विवादमे दूसरे पक्षने लिखा—यह विवाद व्यर्थ है। आप तो ब्राह्मण हैं, आपको क्षमा नहीं छोड़नी चाहिये। पण्डितजीने उत्तरमे लिखा—हमने जो आरोप लगाये है उन्हें व्यर्थ कहनेसे काम न चलेगा। या तो कहिये वे झूठे है, हम आपसे क्षमा याचना करेंगे या उनके लिए खेद प्रकट कीजिये। उस समय हम आपको हृदयसे क्षमा न कर दें तो ब्राह्मण नही।

उनकी वैसी वेश-भूषा भी फिर मैंने नही देखी। एक बार पैण्टके साथ उन्हें बण्डा कोट पहने देखकर तो ऐसा लगा, जैसे यह उनके अनुरूप न हो। इधर प्रायः कुरता और धोती ही वे पहना करते थे और यह वेश उन्हे बहुत सोहाता भी था। अभिनन्दनके अवसर पर भी वे इसी परिच्छदमे थे। अस्तु।

उस दिन लौटकर मुझे कुछ आत्मग्लानि-सी हुई कि मै क्यो इतना हतप्रभ हो गया कि अपनी बात भी उनसे न कह सका। और, झूठ क्यो कहूँ, उनके प्रति कुछ ईर्ष्या भी मनमे उत्पन्न हो गई। परन्तु 'सरस्वती' मे नाम छपनेका लोभ प्रबल था। आशा भी बलवती थी। कुछ दिन पीछे मैंने एक रचना भेज ही दी और उत्सुकतासे मैं उनके पत्रकी प्रतीक्षा करने लगा। मुझे स्मरण नही, इतने लंबे समयमे भी, पण्डितजीने मेरे किसी पत्रका उत्तर देनेमे विलंब किया हो। इतनी तत्परता मैने और किसीके पत्र-व्यव-

डारमे नही पाई। मैने भी बहुत दिन उनका अनुकरण करनेकी चेष्टा की, परन्तु अन्तमे मै हार गया और अब तो शरीर और मन प्रकृतिस्थ न रहनेसे एक आध पत्र लिखना भी भारी हो उठा है। परन्तु पण्डितजी वृद्ध और क्षीण होने पर भी अन्त तक अपना नियम निभाते रहे, कितनी दृढता थी उनमे।

यथासमय उनका उत्तर आ गया—"आपकी कविता पुरानी भाषामे लिखी गई है। 'सरस्वती' मे हम बोल-चालकी भाषामे ही लिखी गई कविताएँ छापना पसन्द करते हैं।" राय कृष्णदास जैसे बन्धुके संसर्गसे भी जो एक चिट भी यत्नसे छाँट कर रखते है, मै पत्रोके संग्रहमे उदासीन ही हूँ। इसके लिए समय-समय पर मुझे अनुताप भी हुआ है। इसी प्रकार डायरी न रखनेसे प्रसंगवश अथवा अचानक उठे हुए कितने विचार किंवा भाव भी मुझे खो देने पडे है। परन्तु पण्डितजीके पत्र न जाने कैसे मै आरंभसे ही रखता रहा। कुछ प्रारम्भिक पत्रोकी एक गिड्डी संभवतः कही ऐसी सुरक्षित रक्खी है कि इस समय मुझे भी नही मिल रही है! ऊपर मैंने जिस पत्रका उद्धरण दिया है, संभव है, उसमे शब्दोका हेर-फेर हो, किन्तु बात वही है।

'बोल-चालकी भाषा' अर्थात् 'खड़ी बोली' और 'पुरानी भाषा', अर्थात् 'ब्रजभाषा।' पाठक ही समझ ले, मेरे मनमे अपनी रचनाकी अस्वीकृति खली या ब्रजभाषाकी उपेक्षा। मन कुछ विद्रोही था ही, आशा भी पूरी न हुई। अब क्या था, एक कडा-सा पत्र लिख दिया। एक बात सुनी थी कि शेख सादी साहबको फ़ारसी भाषाकी मधुरताका बड़ा अभिमान था। एक बार वे यहाँ आये। ब्रजभाषाकी प्रशसा सुनकर उन्होने नाक सिकोड़ी और भौह चढ़ाई। घूमते-घूमते वे ब्रजमे पहुँचे। वहाँ मार्गमे पहले-पहल उन्होंने एक छोटी-सी लड़कीकी बात सुनी। वह अपनी मातासे

कह रही थी—'मायरी माय, मग चल्यौ न जाय, साँकरी गली, पाय काँकरी गड़तु है।' इस बातका संकेत भी मैंने अपने पत्रमे कर दिया और समझ लिया कि बदला ले लिया। परन्तु उस पत्रका कोई उत्तर न मिला। भगवान् ही जाने, इसे मै अपनी जीत समझा या अपने प्रहारको सर्वथा निष्फल समझ कर और भी हताश हो गया। प्रतिघात सह लिया जा सकता है किन्तु आघातका व्यर्थ होना प्रतिघातसे भी कठोर होता है। तथापि मेरी क्षुद्रता का वे क्या उत्तर देते? मैंने धृष्टतापूर्वक एक पत्र और भी इस सम्बन्धमे भेजा। वह वैसा ही लौट आया अथवा लौटा दिया गया।

इस बीच कलकत्तेके 'वैश्योपकारक' मासिक पत्रमे मेरे पद्य छपने लगे थे। इससे मुझे कुछ अभिमान भी हो गया था। परन्तु हिन्दीकी एक मात्र प्रतिष्ठित पत्रिका 'सरस्वती' थी। मन मेरा उधर ही लगा था। झख मार कर खड़ी बोलीके नामसे 'हेमन्त' शीर्षक कुछ पद्य लिखे। उन्ही दिनो स्वर्गीय राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' की 'शरद' नामकी एक कविता 'सरस्वती' मे छपी थी। वह पुरानी भाषामे ही थी। 'शरद्' छपी तो 'हेमन्त' भी छप सकता है। उसे भेजते हुए मैंने निर्लज्जतापूर्वक इतना और लिख दिया कि प्रसन्नताकी बात है, अब 'पुरानी भाषा' के सम्बन्धमे आपका वह विचार बदला है। जिस दिन उत्तर मिलना चाहिए था, उत्सुकतापूर्वक मै स्वयं डाकघर पहुँचा। उनका उत्तर पोस्टकार्डके रूपमे उपस्थित था। धड़कते हृदयसे पढ़ा। लिखा था—'आपकी कविता मिली। राय साहबकी कविता अच्छी होनेसे हमने छापी है।' अब समझमे आया कि नई-पुरानी भाषा का तो एक बहाना था, मेरी कविता अच्छी न होनेसे न छप सकी थी। यह उस समय भी न समझमे आया कि मेरी रचना अच्छी न थी, फिर भी उन्होने उसे बुरा न बताकर भाषाकी बात कह कर कितनी शिष्टतासे मुझे उत्तर दिया, यद्यपि यह ठीक था कि बोल-चालकी भाषाकी कविताके ही वे पक्षपाती थे और उसीका प्रचार भी कर रहे थे। जो हो, मेरा जी बैठ

गया। 'सरस्वती' आई पर 'हेमन्त' न आया। वह क्यों नहीं आया, आवेगा भी या नहीं, यह पूछनेका भी धीरज न रहा। कन्नौजसे 'मोहिनी' नामकी एक समाचार-पत्रिका निकलती थी। उसीमें छपनेके लिए मैंने 'हेमन्त' भेज दिया और अगले सप्ताह ही वह छपकर आ गया। एक द्विवेदीजी न सही तो दूसरे गुणग्राहक तो विद्यमान हैं, यों मैंने मन समझानेकी चेष्टा की। मनने मान भी लिया, कारण, अपमान भी उसीने माना था। तथापि उसके एक कोनेसे यह शब्द उठे बिना न रहा कि—हाय सरस्वती।

नये वर्षकी 'सरस्वती' आई, नई ही सज-धज से। अब उसका रूप-रङ्ग और भी सुन्दर हो गया। देखकर जी ललच गया। परन्तु जिस बात की आशा भी न थी उस 'हेमन्त' को भी वह ले आई। मेरा रोम-रोम पुलक उठा। जिस रूपमें मैंने उसे भेजा था उससे दूसरी ही वस्तु वह दिखाई पड़ती थी, बाहरसे ही नहीं भीतरसे भी। पढ़ने पर मेरा आनन्द आश्चर्यमें बदल गया। इसमें तो इतना संशोधन और परिवर्धन हुआ था कि यह मेरी रचना ही नहीं कही जा सकती थी। कहाँ वह कंकाल और कहाँ यह मूर्ति! वह कितना विकृत और यह कितनी परिष्कृत। फिर भी शिल्पीके स्थानपर नाम तो मेरा ही छपा है। मुझे अपनी हीनता पर लज्जा आई और पण्डितजीकी उदारता देखकर श्रद्धासे मेरा मस्तक झुक गया। इतना परिश्रम उन्होंने किया और उसका फल मुझे दे डाला। यह तो मुझे पीछे ज्ञात हुआ कि मेरे ऐसे न जाने कितने लोग उनसे इस प्रकार उपकृत हुए हैं। नामकी अपेक्षा न रखकर काम करना साधारण बात नहीं, परन्तु काम आप करके नाम दूसरेका करना और भी असाधारण है। पण्डितजी अपने संपादकीय जीवन भर यही करते रहे। उनके तप और त्यागका मूल्य आँकना सहज नहीं। हिन्दीके प्रभविष्णु कवि स्वर्गीय नाथूराम शंकर शर्माने एक पत्रमें मुझे लिखा था—"सम्पादकजी बहुधा कविताओंमें संशोधन भी कर देते हैं। 'केरलकी तारा' नामकी कवितामें मैंने लिखा था—

"पीठ पर टपका पड़ा तो आँख मेरी खुल गई।
चार बूँदोंसे मिले मनकी लँगोटी धुल गई॥"

इसमे नीचेकी पंक्ति उन्होने बदल कर छापी—

"विशद बूँदोंसे मिले मन मौज मिसरी घुल गई।"

लाभसे मेरा लोभ और भी बढ़ गया। कुछ दिन पीछे 'क्रोधाष्टक' नामक एक तुकबन्दी मैंने और भेज दी। उपद्रव सहनेकी भी एक सीमा होती है। इस बार क्षुब्ध होकर उन्होने जो पत्र लिखा वह, इधर स्मृति विकृत होने पर भी, मुझे भली भाँति स्मरण है—

"हम लोग सिद्ध कवि नहीं। बहुत परिश्रम और विचारपूर्वक लिखने से ही हमारे पद्य पढ़ने योग्य बन पाते है। आप दो बातोमेसे एक भी नही करना चाहते। कुछ भी लिख कर उसे छपा देना ही आपका उद्देश्य जान पड़ता है। आपने 'क्रोधाष्टक' थोडे ही समयमे लिखा होगा परन्तु उसे ठीक करनेमे हमारे चार घंटे लग गये। पहला ही पद्य लीजिए—

"होवे तुरन्त उनकी बलहीन काया।
जाने न वे तनिक भी अपना-पराया॥
होवें विवेक वर बुद्धि विहीन पापी।
रे क्रोध, जो जन करें तुझको कदापि॥"

क्या आप क्रोधको आशीर्वाद दे रहे है जो आपने ऐसी क्रियाओंका प्रयोग किया? इसे हम अवश्य 'सरस्वती' मे छापेंगे, परन्तु आगेसे आप 'सरस्वती' के लिए लिखना चाहे तो इधर-उधर अपनी कविताएँ छपानेका विचार छोड़ दीजिये। जिस कविताको हम चाहे उसे छापेंगे। जिसे न चाहे उसे न कही दूसरी जगह छपाइए, न किसीको दिखाइए। तालेमें वन्द करके रखिये।"

रोष ही मेरे लिए परितोष बन गया। अयोग्य देखकर भी पण्डितजीने मुझे त्यागा नही, सदाके लिए अपना लिया। इसी पद्यमे मुझे बोल-चालकी भाषामे पद्य रचनेका 'गुर' मिल गया। बाते इतनी ही नहीं है। परन्तु आज मैं और कुछ न लिखकर अपने प्रभुसे यही प्रार्थना करता हूँ कि परलोकमे भी उनका-सा पथप्रदर्शक मुझे प्राप्त हो।

—मैथिलीशरण
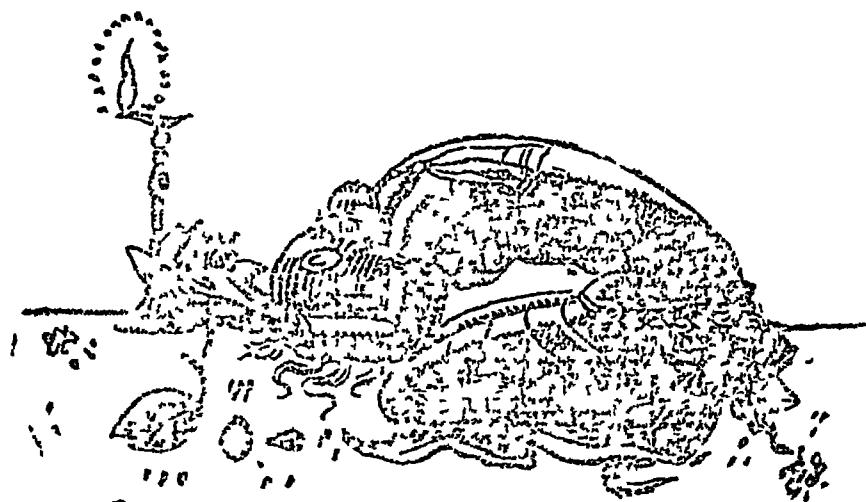
द्विवेदीजी अपनी नज़रमें

[१]

निर्मलजीको स्लिपोंपर लिखी, ६ स्लिपें

निर्मलजी,

आपका पोस्टकार्ड मिला। प्रूफ देखकर आपने मुझपर बड़ी कृपा की।

उचित समझिए तो साथके विज्ञापनको 'भारत'मे किसी अच्छी जगह छाप दीजिए। मात्राएँ बहुत न टूटने पावें। अन्तमें आप मेरी तरफसे अपने नोटमे, यह लिख दीजिए कि जिन पत्रोंने इस विषयमे कुछ लिखा हो वे कृपा करके मेरी इस विज्ञापनाको भी अपने पत्रमें छाप दें।

१३।५।३२]   म० प्र० द्विवेदी

मेरी जन्म-तिथि वैशाख शुक्ल ४ संवत् १६२१ है। इस हिसाबसे ६ मई १६३२ को मै ६८ वर्षका हो गया। अब मैंने उनहत्तरवे वर्षमे प्रवेश किया है। इस उपलक्ष्यमे मुझे मेरे अनेक मित्रो और हितैषियोने बधाइयाँ दी है और खुशियाँ मनाई है। कितने ही पत्रो और तारो द्वारा मेरी शुभकामना की गई है। कई समाचार-पत्रो और सामयिक पुस्तकोमे भी मेरा अभिनन्दन किया गया है। मुझपर कृपा करनेवाले सज्जनोने कहीं-कहीं समुदाय रूपसे भी मेरी हितचिन्तना की है। इन सभी सज्जनो लेखको, पत्र-प्रेषको और अभिनन्दन करनेवालोको मेरे शतशः प्रणाम। मैं उनके चरणो पर भक्तिभाव पूर्वक, अपना मस्तक झुकाता हूँ, मैं उन्हे अपना मातृ-पितृ-स्थानीय समझता हूँ, क्योकि स्वाभाविकतया माता-पिता ही अपने बच्चेकी वर्षगाँठ मनाते हैं।

पिता तो मेरे विदेशवासी थे। बारह-तेरह वर्षकी उम्र तक मेरी माता ही ने मेरी वर्षगाठ मनाई थी। हर साल उस अवसर पर उसे जिस सुख और सन्तोष, तथा मुझे जिस कौतूहल और आनन्दकी प्राप्ति होती थी उसका स्मरण आज नया हो गया। इस स्मरणने मेरा कण्ठावरोध कर दिया और मेरे नेत्रोसे प्रेमाश्रु बरसा दिये। वर्षगाठके दिन मै अपनी मॉसे खाने, पीने और पहनने आदिकी अपनी अभिलषित चीज़ें मागता था; और वह जहॉतक उसका वश चलता था, उनकी पूर्ति करती थी। इस उम्रमे—अपनी वर्तमान स्थितिमे—मुझे अब उन चीज़ोकी चाह नहीं। अब तो मुझे एक और ही चीजकी चाह है। अतएव जिन उदारचरित महानुभावोने मेरी वर्षगाठ मनाई या मुझे बधाई दी है, उनसे मै वही चीज़ मॉगना चाहता हूँ। वे सभी सज्जन हैं। सज्जन न होते तो मुझपर इतनी कृपा क्यो करते। उनसे मेरी माग है—

"सन्त सरल चित जगतहित जानि सुभाउ सनेहु।
बाल विनय सुनि करि कृपा रामचरन - रति देहु॥"

इस समय मुझे इसीकी सबसे अधिक ज़रूरत है। आशा है, यदि वे मेरी अभिलषित वस्तुकी प्राप्ति करा देनेके लिए परमात्मासे प्रार्थना करेंगे, तो उससे मेरा अवश्य ही कल्याण होगा।

"सर्वं नृजन्म मम निष्फलमेव याति"

किसी-किसीने ६ मई १९३२ को मेरी सरसठवी ही वर्षगाठ मनाई है। जान पड़ता है, इन सज्जनोके हृदयमे मेरे विषयके वात्सल्य भावकी मात्रा कुछ अधिक है। इसीसे उन्होने मेरी उम्र एक वर्ष कम बता दी है। कौन माता-पिता या गुरुजन ऐसा होगा जो अपने प्रेम-भाजनकी उम्र कम बताकर उसके जीवनावधिको और भी आगे बढ़ा देनेकी चेष्टा न करेगा? अतएव इन महानुभावोका मैं और भी अधिक कृतज्ञ हूँ।

हिन्दी-भाषा और साहित्यके सम्बन्धमे, पूर्वोक्त अवसरपर बहुत कुछ कहा गया है। मैंने यह किया, मैंने वह किया आदि। मेरा निवेदन है कि मैं इस प्रशसाका पात्र नहीं। २२ वर्षोंतक रेलवेकी मुलाज़िमत करके जब मैंने रजत-शृंखलाएँ तोड़ीं तब मैने अपनेको और किसी कामके योग्य ही न पाया। लाचार होकर, हिन्दी लिखकर मैंने अपनी और अपने आश्रितोकी उदर-पूर्ति की। मेरे इस कामसे यदि हिन्दी साहित्यको कुछ लाभ पहुँचा हो तो आप उसे मेरे कामका आनुषङ्गिक फल समझ लीजिए। बस, इससे अधिक और कुछ नही। मेरे इस कामको मेरे मित्रो और हितैषियोने जो विशेष महत्त्व दिया है वह एकमात्र उनकी उदारता और उनके हृदयकी महत्ताका सूचक है।

सज्जन स्वभावसे ही उदार और कृपालु होते है। वे तो अनधिकारियोको भी अपना दयाका पात्र समझते है :—

"सन्तस्त्वभाजनजनेप्वपि निर्निमित्तं
चित्तंवहन्ति करुणामृतसारसिद्धिम् ॥"

दौलतपुर, रायबरेली
१३।५।३२

महावीरप्रसाद द्विवेदी

पं० श्रीधर पाठक

पं० श्रीधर पाठकका जन्म, आगरा ज़िलाके फ़िरोजाबाद परगने के जोंधरी ग्राममें माघ कृष्ण चतुर्दशी सं० १९१६ को हुआ। प्रारम्भमें इन्हें संस्कृत पढ़ाई गई। दस वर्षकी अवस्थामें यह संस्कृत बोलने लग गये थे। सन् १८७५ ई० में प्रवेशिका परीक्षा पास की। सन् १८८० ई० मे एंट्रेंस पास किया।

सन् १८८१ ई० से नौकरी शुरू की। पहले कलकत्तेके सेंसस कमिश्नरके दफ़्तरमे नौकरी की। फिर शिमला गये। शिमलासे लौट कर प्रयागमें आ गये। यहाँ ज़्यादा दिनो तक बने रहे।

प० श्रीधर पाठकमें काव्य-प्रतिभा प्रारम्भसे ही थी। संस्कृत, फ़ारसी और अंग्रेज़ी तीनों भाषाओं पर आपको अधिकार प्राप्त था। ब्रजभाषा और हिन्दी भाषा दोनोंमें आप समान गतिसे कविता कर लेते थे। गोल्डस्मिथके तीन ग्रन्थोंका पद्यानुवाद आपने "एकान्तवासी योगी" "ऊजड़ ग्राम" और 'श्रान्त पथिक' नाम से किया। "काश्मीर-सुषमा" नामक प्रकृति पर इनका बहुत सुन्दर काव्य है। हिन्दीमें रोमांचक काव्य शैलीके आप जन्मदाता माने जाते हैं।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजी से आपका बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध था। द्विवेदीजीसे पाठकजीका बहुत पत्र-व्यवहार भी हुआ। कुछ पत्र प्रयाग नगरपालिका-संग्रहालयमें सुरक्षित हैं। उन्हींमें से महत्त्व-पूर्ण पत्रोंको यहाँ दिया जाता है।

[प० ब्रजमोहन व्यासजी द्वारा, प्रयाग नगरपालिका
संग्रहालयके सौजन्यसे]

[२]

झाँसी

१५ फरवरी १८९६

प्रिय महोदय,

बहुत दिनसे आपकी कौशल्यशालिनी लेखनीने कोई नूतन ग्रन्थ हिन्दी साहित्यके कोशमे नहीं स्थापन किया। आपका "ऊजड़ ग्राम" और "योगी" तो इतना ललित और स्वाभाविक हैं कि अनेक बार पढने पर भी फिर-फिर पढनेको जी चाहा करता है। कहा भी है "क्षणं क्षणं यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः"। कथानक अच्छा न होनेसे "ऊजड़ ग्राम" उतना हृदयंगम नही जान पड़ता जितना "एकान्तवासी योगी" जान पड़ता है। फिर चाहे हमारी क्षुद्र बुद्धि ही का यह भ्रम हो। "पथिक"की वक्तता ऐसी स्वाभाविक रीतिसे प्रतिबिम्बित की गई है कि मूलसे भी हमारी समझमे कहीं बढके है। हम तो इसे बहुधा पढते हैं और अपने मित्रोंसे भी (जिनमे कई एक केनिंग कालिजके छात्र हैं) उसे पढाकर सुनते है। इलियट पैरा-डाइज लास्ट, इत्यादि और भी मनोहर काव्य अंगरेजीमें हैं। आप चाहेगे तो उन्हें भी किसी विचित्र मीटरमे अनुवाद करके अपूर्व रसका आस्वादन हम सबको सुलभ कर देगे।

पॉच-सात वर्ष हुए "हिन्दोस्थान" मे हमने आपका किया हुआ ऋतु-संहारके शरदृतुका भाषान्तर पढा था। क्या आपने एक ही सर्गका अनुवाद किया है अथवा समग्र पुस्तकका? हमने कारणवशात् लाला सीताराम बी० ए० कृत 'कुमारसंभव' भाषाकी एक विस्तृत समालोचना लिखी है। वह क्रमशः काशी पत्रिकामे छप रही है। १२ पृष्ठ निकल चुके हैं। उन्हींके

किये हुए ऋतुसंहारके अनुवादकी भी समालोचना लिखनेका विचार है। उनके अनुवादको एक उत्तम अनुवादके साथ कंपेयर करनेकी इच्छा है। क्षमा कीजिए कई जगह अंगरेज़ी शब्द आ गये। समय पर क्या आप अपना अनुवाद भेज सकेंगे। मैं उसे वापस कर दूँगा और किसी प्रकार नष्ट न होने पावेगा।

"काशके फूल दुकूल, खिले अरविंदनमें मुख सुन्दरताई।"
[काशांशुका विकचपद्ममनोजवक्त्रा]
और
"सोहत या ऋतुमें सरिता गजगामिनि कामिनि-सी रस बोरी।"
[मदं प्रयान्ति समदा प्रमदा इवाद्याः]

यह अभी तक हमारे हृदयमे चिह्नित हो रहे है।

ईश्वर आपको स्वस्थ रखे और, और भी ऐसे काव्य लिखनेकी शक्ति देवे यही उससे प्रार्थना है।

आपका
महावीरप्रसाद द्विवेदी

[३]

समस्तीपुर
२४–८–०५

प्रिय मित्र,

२२ ता० का कृपापत्र मिला। आप 'सरस्वती'की लेख-प्रणाली निर्दोष देखना चाहते है यह हमारे लिए सौभाग्यकी बात है। मित्रोका यह धर्म ही है। इसलिए हम आपके कृतज्ञ है।

"पापान्निवारयति योजयते हिताय"

इस नियमका पालन यदि मित्रने न किया तो वह मित्र ही नही।

हम पुरानी प्रथाके सर्वतोभावसे प्रतिकूल नही। पर हम यह भी नही

कहते कि वह सर्वथा निर्दोष है। कोई-कोई पुरानी रचना ऐसी है जिसे देखकर घिन लगती है। बोलनेमे व्याकरणके नियमोंका यदि अनुसरण न किया जाय तो विशेष आक्षेपकी बात नही। पर लिखनेमे ऐसा होना अच्छा नही। संस्कृत क्यो अबतक निर्दोष बनी है? उसकी रचना व्याकरण के अनुसार होती है, इसलिए। पालि और प्राकृत आदि भाषाएँ क्यो लोप हो गई? उनका व्याकरण निर्दोष नहीं। अतएव उनकी रचना भी निर्दोष नही। हिन्दीमे कोई अच्छा व्याकरण नही जिसे सब लोग माने। इससे जिसके जी मे जो आता है उसे ही वह लिखता है। यह भाषाका दुर्भाग्य है। इससे उसे कभी स्थिरता न प्राप्त होगी। अखबारोमे हम ऐसे अनेक वाक्य देखते हैं जिनका Parsing ही नहीं हो सकता।

उदाहरणार्थ :—

उसने आज्ञा दी कि जिन दिनों गंगाजल गँदला रहे उन दिनो उसमे यह दवा दो ग्रेनके हिसाबसे डालकर साफ़ किया जावे।

इसमें "वह" शब्द अपेक्षित है। उसके बिना वाक्य सूना है। हम यह नहीं कहते कि सब कहीं कर्ता प्रकट रहे। कहीं-कहीं वह लुप्त भी रहता है। और उसके लुप्त रहनेसे वाक्यकी शोभा नही बिगड़ती। पर ऐसे स्थानमें नही। एक बात और भी है। सबकी रुचि और सबकी श्रुति-पटुता एक-सी नही होती। जिस वाक्यको आप मधुर और मनोहर समझेंगे, संभव है हमे वह वैसी न लगे। क्योंकि यह कुछ कायदेकी बात तो है नही, रुचि-वैचित्र्यकी बात है।

आपके पहले उदाहरणमे "अपने" के पहले "उसने" की हम जरूरत नहीं समझते पर "अपने" या "बनाने" के पहले "वह" की हम बड़ी जरूरत समझते हैं। व्याकरण भी "वह" मॉगता है और हमारी रुचिके अनुसार रोचक भी। दूसरे उदाहरणमें "पर" के बाद तो नहीं परन्तु "नीचे" के बाद हम "उन्होंने" की ज़रूरत समझते हैं। सकर्मक और

अकर्मक क्रियाओंके कर्तृपदमे भेद होता है। यदि सब लेखक मिलकर इस भेदको दूर कर दे और इसका एक नियम बना ले तो हम भी उसे मंजूर कर लेंगे। तीसरे उदाहरणमे कर्ता "वह" का न होना नहीं खटकता। "चल जाय तो अच्छा है" कहना ही अच्छा लगता है।

हम मुहाविरेके विरोधी नहीं। परन्तु 'जब', 'तब', 'जिस समय', 'उस समय' आदि सम्बन्धी मुहाविरा ऐसा नही है जिसे सब मानते हो। काल-वाचक सर्वनामके जोड़मे उसी तरहका सर्वनाम क्यो न हो?

'गया' की जगह 'हुआ' हो सकता है। इसमे हमे कोई एतराज़ नही। पर अर्थमे किंचित् भेद ज़रूर हो जाता है।

श्रीमदीय

महावीरप्रसाद

आज हम यहाँसे कानपुर वापस जाते है।

[४]

कानपुर

२८-४-०६

प्रिय मित्र,

कृपा-पत्र आया। आप हमसे अब कापी लिखाना चाहते है। सो नहीं होनेका। जैसा हम लिखेंगे वैसा ही आपको पढ़ना पडेगा। दफ्तरमें भी तो बदखत कागज आपको पढ़ने पड़ते होगे।

आप क्या समझते है कि हम नीरोग रहते है। हमारी हालत तो शायद आपकीसे भी बुरी है। पर करे क्या—जिस स्थितिमें ईश्वर रक्खे उसीमे सन्तोषपूर्वक रहना चाहिए। और अपने कर्तव्य भी करने चाहिए। आप भी ऐसा ही कीजिए। हम तो यही कहेगे। आप चाहे मानें या

अच्छा किया आप भी ऐनक लगाने लगे। रोग और ऐनक दोनोमें हमारी और आपकी सदृशता हो गई।

'सरस्वती'के मैनेजर न आये तो न सही। यदि कभी हम आवेंगे तो हम खुद ही आपके काश्मीरके फोटो ले लेंगे। पर सिर्फ फोटोसे क्या होगा। उनपर कुछ लिखना भी तो चाहिए।

फोटोका बहुवचन फोटो ही हो तो अच्छा। और कुछ अच्छा न लगेगा।

आशा है आप आनन्दपूर्वक है।

भवदीय
महावीरप्रसाद

[५]

कानपुर
२९—४—०६

प्रिय मित्र,

कृपा-पत्र आया। उससे जान पड़ता है आप उर्दू मिश्रित हिन्दीके विरोधी है। हमे स्मरण है आपने एक बार हमे लिखा था कि आपको 'भारतमित्र'की भाषा पसन्द है। परन्तु उसमे तो उर्दू-फ़ारसी शब्दोकी और भी अधिक भरमार रहती है। 'सरस्वती' मे कुछ लेख जानबूझकर उर्दू मिश्रित भाषामे लिखे जाते हैं। कारण यही है कि गवर्नमेण्ट इन प्रान्तो-की भाषा एक करना चाहती है। इसीसे हिन्दी और उर्दू रीडरोकी भाषा एक रक्खी गई है। 'सरस्वती' का प्रचार मदरसोमे बहुत है। अतएव कोई कोई लेख मदरसोके लड़को और मुदर्रिसो ही के लाभके लिए लिखे जाते हैं। ठेठ हिन्दी या संस्कृत मिश्रित हिन्दीका आदर करनेवाले बहुत कम हैं। यदि सरस्वतीके खर्चका भार उनपर ही छोड़ दिया जाय तो उसका निक-लना ही बन्द हो जाय। परन्तु इससे आप यह न समझिए कि हम आपको

लेख लिखनेसे मना करते हैं। यदि आपके लेखसे हिन्दीका कुछ भी हित होनेकी आशा हो तो आप अवश्य लिखिए। हम उसे सिर आँखोपर लेंगे। पर यदि किसीकी प्रणाली-विशेष पर आक्षेप न हो तो अच्छा। लेख ऐसा हो कि उसकी बाते सब पर घटित हो सके। आपको लेखनीसे आपको भी 'सरस्वती'के विरोधमे लेख अच्छा न लगेगा, क्योकि इस तरहकी प्रणाली औरोकी भी तो है। आप समझदार है, जो कुछ आप उचित समझेंगे वही करेंगे। प्रयागमे कुछ काम है। १०–५ दिनमे वहाँ जानेका इरादा है। यदि जाना हुआ तो आपसे भी मिल लेंगे।

विनयावनत

महावीरप्रसाद

बाबू राधाकृष्णदास

बा० राधाकृष्णदासजीका जन्म श्रावण सुदी पूर्णिमा संवत् १९२२ को हुआ। इनके पिताका नाम कल्याणदास था। जब ये १० महीनेके थे, तभी इनके पिताकी मृत्यु हो गई। इसके बाद भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजीने इनको अपने घर बुला लिया। ये भारतेन्दुके फुफेरे भाई थे।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजीके यहाँ ही इनका लालन-पालन हुआ। घर पर ही इन्होने विद्याभ्यास किया। संस्कृत, बंगला, फ़ारसी, गुजराती, हिन्दीका अच्छा अभ्यास किया। मैट्रिक तक अंगरेज़ीका अध्ययन किया। ये प्रारम्भसे ही साहित्यिक रुचिके थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजीने इनको साहित्यकी प्रेरणा भी दी। इन्होने २५ ग्रंथो की रचना की। "दुःखिनी बाला", "निस्सहाय हिन्दू", "महारानी-पद्मावती", "प्रताप नाटक" आदि इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ है।

नागरीप्रचारिणी सभा काशीके निर्माणमे बा० राधाकृष्णदास का मुख्य हाथ था। यह उसके प्रमुख नेताओमे से एक थे। काशी के अग्रवाल समाजके चौधरी भी थे। ४२ वर्षकी अवस्थामें ता० २ अप्रैल सन् १९०७ को आपकी मृत्यु हो गई।

[६]

झांसी
१२ अगस्त ९८

महोदय,

कार्ड आपका आया—उस काग़ज़को कृपापूर्वक वापस कर दीजिए—आपको स्मरण होगा, हमने लिखा था कि इन पद्योंको देखिए और ठीक हो तो सभाको सुनाइए—कर्त्ताधर्त्ता तो आप ही है यदि छपनेके योग्य न थी तो कहिए तो सही कि फिर आपने सभामे उसे ले जाने और सुनानेका परिश्रम क्यो किया—क्या गलहस्त दिलाना ही आपको इष्ट था—ऐसा तो कदापि न होगा—आप स्वयं लौटा देते तो हमे बहुत सन्तोष होता—आप अपनी सभाके नियमोसे बखूबी वाकिफ है, फिर क्यो आपने ऐसा किया, नही मालूम :—

"दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालैर्दूरीकृताः करिवरेण मदान्धबुद्धय।
तस्यैव गण्डयुगमण्डनहानिरेषा भृङ्गः पुनर्विकचपद्मवने वसन्ति ॥"

अंग्रेजी काव्यका छन्दबद्ध अनुवाद भेजनेके लिए आपने आज्ञा दी तो शिरसाधार्य है परन्तु मुश्किल तो यह है कि अमुक कविताको आप और आपकी सभा "उत्तम, उपदेशमय और हृदयग्राहिणी" समझेगी और अमुकको न समझेगी, इतना ही तो हमको समझ नही पड़ता—खैर, हम आपकी आज्ञा-पालन करनेकी कोशिश करेंगे—परन्तु कविके अभिलषित विषय पर ही उसकी कविता अच्छी होती है यह हमारा मत है—सभाका अलबत्ते यह मत न होगा यह हम जानते ही है।

भवदीय
महावीर

[७]

झांसी

२४—१०—१९०३

श्रीमान् बाबूसाहब,

आपका 'रहिमन-विलास' हम आज देखते थे। उसका ८५वां पद्य विचारणीय है। दांत, केश, नख, मनुज अपने ही स्थानपर शोभा पाते है यह समझमे नही आया—मनुजकी शोभा यदि अपने ही घरमे हुई तो कोई प्रशंसाकी बात नही—नखसे कोई शोभा अंगुलियोकी नही होगी—दांत, केश दूसरी जगह जा नही सकते—काटनेसे उनकी गिनती कूडेमे होगी।

भवदीय

महावीर

[८]

झांसी

१२—१—१९०४

प्रिय महाशय,

कृपा-कार्ड आया। यदि हम आपकी कोई सहायता कर सकेंगे तो हम प्रसन्नतापूर्वक करगे, परन्तु इस समय हमारे पास एक ऐसा काम आ गया है कि शायद कई महीने तक हमको सिर उठानेकी फुरसत न मिलेगी—इसलिए कविताके लिए आप हमको क्षमा करे—एकआध लेख हमारे पास चतुर्भाषाके योग्य अधलिखे रक्खे है उनको हम, आवश्यकता पड़ने पर, समाप्त करके आपको भेजेंगे।

भवदीय

महावीर

पं० पद्मसिंह शर्मा

पं० पद्मसिंह शर्माका जन्म बिजनौर ज़िलेके नायक नगला ग्राम में सं० १९३३ की फाल्गुन सुदी १२ को हुआ। उनके पिताका नाम उमरावसिंह था। ये भूमिहार थे।

खेती और ज़मीन्दारी इनका पारिवारिक पेशा था। १२ वर्ष की उम्रसे विद्याध्ययन प्रारम्भ किया। प्रारम्भमें उर्दू और फारसी का अध्ययन किया। फिर पं० भीमसेन शर्माकी संस्कृत पाठशाला में सस्कृतका अध्ययन किया। सं० १९६१ में उत्तर प्रदेशकी आर्य प्रतिनिधि सभाके उपदेशक नियुक्त हुए। इसके बाद महात्मा मुंशी-राम [स्वामी श्रद्धानन्द] के साप्ताहिक पत्र "सत्यवादी" के सम्पा-दकीय विभागमे काम करने लगे। १९६५ में अजमेरके "परोपकारी" और "अनाथ-रक्षक" का सम्पादन किया। इसके बाद आठ वर्ष तक ज्वालापुर महाविद्यालयमे काम किये। सं १९७६ मे काशीके ज्ञानमण्डल कार्यालयमे पुस्तक-प्रकाशन विभागमें आ गये। यहीं उनकी बिहारी-सतसईके भूमिका-भागका प्रकाशन हुआ। इसी समय सतसई संहार पर "सरस्वती" मे उनके लेख प्रकाशित हुए।

'बिहारी सतसई' पर आपको मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्राप्त हुआ। सं० १९८५ में मुजफ्फरपुर हिन्दी साहित्य सम्मेलनके सभापति हुए। सं० १९८९ मे हिन्दुस्तानी एकेडमीमें व्याख्यान दिया। स० १९८९ से प्लेग रोगसे आपकी मृत्यु हो गई।

पं० पद्मसिंह शर्माका पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीसे बहुत घना सम्बन्ध था। द्विवेदीजीसे आपका बहुत पत्र-व्यवहार हुआ था।

[६]

कानपुर

१८—१०—०५

प्रिय पण्डितजी

कृपा-पत्र आया। यह रसीद, पारसलमे १—तरुणोपदेश, २—सोहागरात, ३—शिक्षा-सरोज ६ भाग, ४—देशोपालम्भ (कविता) है, पहुँच लिखिए। १—का जीर्णोद्धार करके २—के साथ पढ़ चुकने पर वापिस कीजिएगा, ३—आपके लिए है।

कही-कहीं एकआध किताबमे हमने पेन्सिलसे संशोधन किये है, वे मिट सकते है, रीडर्स हमारे पास और नही, सिर्फ़ वही जोड़ा है, जो हमने आपको भेजा है।

हमारे जीवन-चरितमे क्या रक्खा है? आपको जो हमारा चरित्र (!) बहुत ही पसन्द हो तो आप ही लिखिएगा। इस संसारमे हमारे आगे-पीछे कोई नहीं है। वसीयतनामा लिखकर राही मुल्क बका होनेके लिए तैयार बैठे है, अपने चरितके नोटस् लिखनेको हमे फ़ुरसत नही है।

ठाकुर शिवरत्नसिंहका समाचार सुनकर बड़ा आनन्द हुआ। ऐसे स्वाधीनचेता, विद्या-व्यसनी और देशभक्त सज्जनोको ईश्वर चिरायु करे।

देशोपालम्भ सिर्फ़ आपके देखनेके लिए है, प्रकाशके लिए नही।

श्रीमदीय

महावीरप्रसाद

पुनश्च—

माफ कीजिए हमने इस टुकड़े ही पर आपको यह पत्र लिख दिया।

म० प्र०

[१०]

कानपुर
११-१२-०५

बहुविध प्रणामानन्तर निवेदन—

७ तारीखका कृपापत्र मिला।

पहले पत्रका उत्तर जालन्धर गया है, न मिला हो तो मँगा लीजिएगा। पुस्तकें मिलीं, टोपी भी, 'मेनी थैंक्स'।

गुप्ताजीकी बाबत हम पहले पत्रमे आपको लिख चुके है।

हम इनके मसखरेपन और कुटिल कटाक्षोंकी ओर दृक्पात नही करते आये।

पर कई आदमियोंकी राय है कि व्याकरणका विषय महत्त्वका है।

इससे इस दफा जवाब देना चाहिए।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[११]

जूही, कानपुर
११-१-०६

प्रणाम!

कृपा-पत्र मिला। हमने तो लाला मुशीरामको लिखा था कि क्यो आपने हमारे पत्रोका जवाब नही दिया, और अब आप कहाँ है? एक कार्ड हमने जालन्धरको आपके नाम भेजा है, उसे मँगा लीजिए और उसी को प्रयाग भेजकर हमारी दोनों रीडर्स इण्डियन प्रेससे मँगा लीजिए— उन्होंने कृपा करके अपनी प्रतियोंमेसे दो प्रतियाँ आपको देनेका वादा किया है। हमने कोई २०-२५ पृष्ठमे वेंकटेश्वर और भारत-मित्रके (दो अकोके) आक्षेपोका उत्तर लिखा था, पर प्रयागमे इस विषयका जो

विचार हुआ उसमे यह स्थिर हुआ कि ····को बातका उत्तर न दिया जाय।

हमने दो-एक व्यङ्गथपूर्ण और हास्यरसानुयायी गद्य-पद्यमय लेख लिखे हैं, उनका सम्बन्ध ऐसे लोगोंकी समालोचनाओंसे है, जो कुछ नहीं जानते पर सब कुछ जाननेका दावा करते हैं। अगर सलाह हुई तो उनको शायद हम क्रम-क्रमसे प्रकाशित कर दे। भाषा और व्याकरण पर एक और लेख लिखनेका हमारा इरादा है। उसमे भी हम हरिश्चन्द्र की त्रुटियाँ दिखलायेंगे, और अच्छी तरह दिखलायेंगे। काशीके कई पण्डितोंने अनस्थिरताको साधु बतलाया। संस्कृत पत्रिकाके सम्पादक अप्पा शास्त्री विद्यावागीशने तो कई तरहसे उसकी साधुता साबित की।

आप कब तक जालन्धर वापस जाइएगा। आपने जो वन्देमातरम् वाले श्लोक भिजवाये थे, उनका निर्णय हमने लिख भेजा था, आप हमारा सीमासे अधिक गौरव करते है। हम आपके सामने ऐसे मामलोमे कोई चीज नहीं। हमारा निर्णय पसन्द आया या नही।

श्रीमदीय
महावीरप्रसाद

[१२]

कानपुर
२२–१–०६

प्रणाम !

२० ता० का कृपा-पत्र मिला—भाषा और व्याकरण पर एक और लेख लिखा है—उसमे कुछ आक्षेपोंका जवाब भी है, यहाँ सब लोगोंकी सलाह हुई तो छपेगा।

वन्देमातरम् वाले श्लोक हमने कागडी हरिद्वार भेजे थे, ला०

मुंशीरामके पास—उन्हीने हमको भेजा था, इससे हमारा फैसिला भी उन्हीके पास गया।

ठाकुर साहबकी पुस्तके अभी रक्खी है, शिक्षा हमे अधिक पसन्द है। पहले उसीके लिखनेका विचार है। यह सुनकर बड़ी खुशी हुई कि आपको नौकरीकी विशेप परवा नही। फिर क्या ज़रूरत जालन्धर जानेकी? इस समय समालोचनाओकी ज्वाला जल रही है, कुछ दिन विद्यालयकी पुस्तकोकी बात नई न कीजिए—आप चाहे तो कुछ तब तक लिख रक्खे, मगर, हमसे अभी कुछ न लिखाइए, नही तो प्रलय हो जानेका डर है, आपको नूह बनना पडेगा।

भवदीय
महावीरप्रसाद

[१३]

कानपुर
२—२—०६

प्रणाम!

३० का पत्र मिला—आपने जो अनुमान किया ठीक है—नलदम्भके बारेमे लिखना जरूर चाहिए था, न लिखना हमारी भूल है, खैर अब लिख देंगे, पाञ्चालके सम्बन्धके लेख हमे पढने है। फुरसत मिले तो इकट्ठे करके पढे—बहुत करके आप हीका अनुमान ठीक होगा। इंगलैड और अमेरिकासे हमारे पास दो-एक ऐसी सामयिक पुस्तके आती हैं, जिनमे ऐसी-ऐसी अद्भुत-अद्भुत बाते रहती हैं "सच है या झूठ राम जाने"। रीडर्स पहुँच जाये तब लिखिएगा—और सब कुशल है। बगवासीमे किसीने "आत्मारामकी टे टे" लिखना शुरू किया है।

भवदीय
म० प्र०

[१४]

फ़तेहपुर
४—६—०६

प्रियवर,

कृपापत्र मिला। दो चार दिनके लिए यहाँ हम कृत्रिम हीरावालोंसे मिलने आये हैं, आपकी राय हमने उनको सुनाकर खुश किया और, और ऐसे ही लेख लिखनेके लिए उत्तेजित भी किया।

चाँदनीका पता-ठिकाना मालूम नहीं, बिना पताके वह लेख हमारे पास आया था, लिखना तो पुरुषका ऐसा मालूम होता था, पर सम्भव है वह स्त्री ही का हो।

नाथूरामजीकी कविताकी कई सज्जनोंने तारीफ़ की है, वे सचमुच सुकवि है, हमने उनसे और भी कविता भेजनेके लिए प्रार्थना की है। आपका साधुवाद भी हम उन्हे भेजते हैं। हाँ, ये वही "शंकरसरोज" वाले हैं, बडे सज्जन जान पड़ते है।

हिन्दी-ग्रन्थ-मालाका पहला अंक निकल गया, शिक्षाका अनुवाद शुरू क्या, आधा हो गया। देखने पर आपको मालूम होगा कि उसका ढंग कैसा है, उर्दूवालेसे अच्छा नही तो बुरा भी न होगा। शिक्षाका संस्कृत अनुवाद मैसूरमे किसीने किया है पर अधिक पता नही चला। मैसूर प्रेसवालेने लिख भेजा, कोई कापी शेष नही।

श्रीहर्ष, मोमिन और गालिबके एकार्थबोधक पद्य जरूर देंगे, दया करके हमारे लिए एक छोटा-सा नोट भेज दीजिए और उसीमें इन तीनों पद्योंका तारतम्य दिखला दीजिए, इतना काम हमारे लिए नहीं तो "सरस्वती" के लिए कीजिए, हमको बड़ा काम है।

लाला देवराजके सिवा और लोगोंने भी "सरस्वती" को लूटना शुरू

किया है। बम्बईके कई गुजराती अखबार उसके लेख गड़प कर रहे हैं। पटनेके विद्या-विनोदने भी कृपा की है।

भवदीय
महावीर

[१५]

कानपुर
१७-६-०६

प्रिय पण्डितजी प्रणाम,

कृपा-पत्र मिला। पं० भीमसेनजीके श्लोक हम 'सरस्वती'मे धन्यवाद-पूर्वक प्रकाशित करेंगे, दारिद्रयके विषयमे चारुदत्त और मोमिनकी उक्ति खूब मिलती है।

वह नोट हमने लिख लिया है, आप कष्ट न उठाइएगा।

"नोटके लिए अभी कुछ उपयुक्त सूझा नहीं क्या लिखूँ"

वाह, क्या आप भी बहानेबाजी करने लगे? साफ इन्कार लिखा कीजिए।

दो-चार दिनमे एक महीनेके लिए अपने गाँव जानेका इरादा है।

आमकी फसल आ गई—

भवदीय
महावीरप्रसाद

[१६]

दौलतपुर
२६-७-०६

नमो नमः,

काव्यमालाके १३ वे गुच्छकके ८ वे पृष्ठ पर रामभद्र दीक्षितकृत "वर्णमालास्तोत्र" का यह श्लोक पढ़िए:—

"सर्गस्थितिप्रलयकर्म्मसु चोदयन्ती माया गुणत्रयमयी जगतो भवन्तम्।
ब्रह्मेति विष्णुरिति रुद्र इति वृथा ते, नाम प्रभो दिशति चित्रमजन्मनोऽपि"॥

इसमें "वृथा" शब्दका "वृ" संयुक्त अक्षर क्यों माना गया है, क्या "ऋ" व्यञ्जन भी कभी माना जाता है, अथवा, वृथा क्या कभी व्रथा भी लिखा जाता है।

इस विषयमे एक महाराष्ट्र पण्डितसे हमसे विवाद हो चुका है।

क्या आपने "समयमातृका" और "कुट्टनीमतम्" काव्य देखे है?

भवदीय
म० प्र०

[१७]

दौलतपुर
२६-७-०६

प्रिय पण्डितजी,

१६ ता० का कृपाकार्ड मिला, सरस्वतीको लोग बीच ही मे रोक लेते है, प्रेसवालोका अपराध नही, जूनकी एक सख्या हमारे पास थी, उसे आज आपको भेजते है।

'आर्य मुसाफिर' को धन्यवाद—उस अंककी कोई कापी आपके पास फ़ालतू हो तो भेज दीजिए, "कुचकलश" को आपने पसंद किया है तो किसी समय प्रकाशित करना ही होगा। ५-७ दिनमे कानपुर लौटनेका इरादा है।

भवदीय
महावीरप्रसाद

[१८]

कानपुर
११-८-०६

प्रणाम,

७ ता० के कृपा-पत्रके लिए धन्यवाद। "आर्य मुसाफिर" की कापियाँ मिली, पढ़ ली, वापस भी आज करते है, पहुँच लिखिएगा।

आपकी कलाकी बीमारीका वृत्त सुनकर रंज हुआ, ईश्वर शीघ्र ही उसे अच्छा करे।

'सरस्वती'की कापी लौटानेकी जरूरत नही, इस देशमे कोई बात प्रचलित हो जानेसे उसका छूटना कठिन हो जाता है—"हिन्दू" शब्द लोगोके हाड़-मासमे प्रविष्ट हो गया है, अतएव जब-तक सब लोग आर्यसमाजके ऐसे विचारोके न हो जायँगे इसका प्रयोग बन्द न होगा। शब्दोके अर्थ हमेशा बदला करते हैं। बुरेका भला और भलेका बुरा हो जाया करता है। "आर्य" शब्दके विषयमे भी एक लेख देना है।

परलोकके पत्र मन-गढन्त मालूम होते है। कहिए ऐसी बाते न लिखा करें। पर लोग पढ़ते बडे भावसे हैं। "दो कदीम शहर" अगरेजी Archaeological Reports की बदोलत है।

खजुराहो, देवगढकी पुरानी इमारते, मथुराका कंकाली टीला आदि इस तरहके कई लेख तैयार हैं, पर नीरस होनेके कारण देनेको जी नही चाहता।

शेक्सपियरके कई नाटकोकी आख्यायिकाएँ निकल चुकी है। "और भी निकालेंगे" की सूचनाके लिए धन्यवाद।

संस्कृतमे "पवनदूत" है, पर यह उसकी नकल नहीं, संस्कृतवालेको पढे हमें थोडे ही दिन हुए।

पं० भीमसेनजीके खिचड़ी पद्य छापेंगे, तब तक उन्हें धन्यवाद दीजिए, जयपुरके पण्डित रामकृष्णने ऐसे अनेक श्लोक "जयपुरविलास" मे लिखे हैं। पण्डितजीका योगदर्शन आया है, उत्तम है, लाहौरके एक पण्डितकी भूमिकामें अच्छी खबर ली है।

भवदीय
म० प्र०

[१९]

कानपुर
२१–८–०६

प्रणाम !

आपकी कलाकी मृत्युवार्ता सुनकर रंज हुआ, बच्चोंके इस तरहके चिर-वियोगसे तो शायद न होना ही अच्छा है पर क्या किया जाय, शोक चाहे कितना ही क्यों न हो धैर्य ही धरना पड़ता है।

आज्ञानुसार योगदर्शनकी आलोचना करेंगे।

विनयावनत
महावीर

[२०]

कानपुर
५–९–०६

प्रिय पण्डितवर,

३ ता० का कृपा-पत्र मिला, यह हम देख रहे हैं कि यदि सरस्वतीमें स्थान मिले तो धीरे-धीरे विक्रमाङ्क चर्चा छाप दें, और साथ ही कुछ कापियाँ उसकी अलग भी कर लें, यदि यह न हो सका तो इण्डियन प्रेससे हम कहेंगे कि वह अलग ही छाप दी जाय, कालिदासविषयक हमारे पास कुछ सामग्री इकट्ठी है, कुछ और हो जाय तो एक छोटा-सा प्रबंध कवि-कुलगुरु पर हम लिखें, संस्कृत-पत्रिकामें कालिदास पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है, सो आपने देखा ही होगा। बंगालियोंमें बाबू रामदास सेनने भी कुछ लिखा है।

'विक्रमाङ्क चरित' आपने पढ लिया, कृपा की, नव साहसाङ्क-चरित भी शायद आपने पढ़ा होगा। "शिक्षा" का संस्कृत-अनुवाद (Curator Govt. Book Depot) के यहाँ मिलता था, शायद किसी मदरासीका किया हुआ है, परन्तु क्यूरेटर साहबने जवाब दिया है कि सब कापियाँ बिक गईं।

अनुवादककी तलाशमे हम है, पता लग गया तो उससे मँगावेगे। बहुत अच्छा, यदि हुआ होगा, तो मराठीका भी अनुवाद मँगावेगे।

बिजनौरसे कोई माँग किताबोकी नहीं आई, आप अपने मित्रसे इस बारेमे कुछ न कहिएगा। ठाकुर शिवरत्नसिंहको हम पुस्तके भेज देंगे।

आपकी इस कृपाके लिए अनेक धन्यवाद। व्याकरण बनानेके लिए बहुत विद्या, बुद्धि, पठन और सामग्रीकी दरकार है। वह हममे नहीं, फिर हम करे क्या क्या ? "शिक्षा" को लिखे या कालिदासको लिखे या 'सरस्वती' को लिखे, किस-किसको लिखे, आप तो बहुत काम बतलाते है। हम कलसे एक छोटा-सा प्रबन्ध "भाषा और व्याकरण" पर लिख रहे है। उसमे जब तबका भी ज़िकर आवेगा। कहिए, आपके पास पहले देखनेको भेज दे ? "वेंकटेश्वर" इत्यादि "सरस्वती" का नाम शायद इसलिए नही लेते क्योंकि हमने आज तक उनकी समालोचना नही की। इससे हम असन्तुष्ट नही, सरस्वतीके रक्षक आपके सदृश विद्वान् है।

औरोंने यदि उसका नाम भी लिया तो कोई हानि नही। तीन दिन हुए लाला बदरीदासका पत्र आया था, उन्होंने लिखा है कि हमारा पत्र उन्होने लाला देवराजको दिखाया, वे माफी माँगनेको तैयार हैं। और कहते है यथासम्भव उन्होने 'सरस्वती'का नाम देनेकी कोशिश की है। किसी अच्छे लेखकके न मिलनेसे उन्होंने किताबे लिखी है। और यदि हम सूचना दे तो उसके अनुसार संशोधन भी करनेको तैयार है। हमने लिखा

है, हमारा पत्र कमिटीमे पेश कीजिए । 'सरस्वती'का नाम देनेकी कोशिश नही की गई । अच्छी किताबे लिखनेवाले मिल सकते थे, और अब भी मिल सकते है । आज "शिक्षामणि" आई है । लालासाहबकी किताबो से अच्छी है । मौका आने पर उसका भी हम हवाला देगे । और आगे आपकी क्या राय है ? हॉ, आपसे एक काम है, झॉसीमे जब तक हम रहे पंजाबसे पट्टी मँगाकर जाडेके सूट बनवाते रहे । अब मार्ग बन्द हो गया, आप अमृतसर और लाहौरके पास है । अक्टोबरके शुरूमे क्या आप एक शुतरी (बादामी) रङ्गकी अच्छी पट्टी नौ-दस रुपयेकी मँगा-कर भेज सकते है । एक उसी रङ्गकी मलीदेकी किश्तीनुमा टोपी भी चाहिए, गोल मिले तो और अच्छा, नाप टोपीकी रुपयोंके साथ पहले भेजेगे ।

श्रीमद्दीय
महावीर

[२१]

कानपुर
२९–९–०६

प्रणाम,

कृपाकार्ड मिला । आपकी बीमारी और तीमारदारीका हाल सुनकर दुःख हुआ । आशा है अब सब प्रकार कुशल होगे । हम भी ८ रोज बुखारमे मुब्तिला रहे । अब अच्छे है । सैयद साहब दमोह ज़िलेके रहने-वाले है । हिन्दी कवितासे शौक है । आप शायद तिजारत करते हैं । उस 'नोट' के लिए लेखक महाशयने शिकायत की है एतदर्थ एकऔर नोट देना पड़ा । वह अक्टूबरमे निकलेगा । सचमुच महाराज साहबका कोई दोष नही । अगस्तकी ग्रन्थमाला निकले एक महीना हुआ, आप दूसरी कापी मँगाइए, पहली शायद खो गई ।

भवदीय
महावीर

[२२]

कानपुर
१०-१०-०६

प्रियवर !

कृपा-पत्र मिला—कई रोजसे हमारे नेत्र विकृत हो रहे हैं। लिखनेमे कष्ट होता है, कहीं धृतराष्ट्रताको न प्राप्त हो जायँ यही डर रहता है, पर आपका पत्र पढ़कर उत्तर दिये बिना नही रहा जाता। आपके पत्र बड़े ही विद्वत्तापूर्ण और मनोरंजक होते है। इस पत्रको हमने दो दफे पढा, "भागा" वाला पद्य हमारी पाकेटबुकमे पहले ही से नोट है। खूब मनोरंजक है। प्रकाशित करेंगे, सूचनाके लिए धन्यवाद, उसीके पास पण्डितराज जगन्नाथरायका यह श्लोक भी नोट किया हुआ है।

"मत्तातपादै रचिते निबन्धे निरूपिता नूतनयुक्तिरेषा।
अङ्गङ्गवां पूर्वमहो पवित्रं कथन्न वा रासभधर्मपत्न्याः॥"

इसमे क्या खूबी है, सो ठीक ठीक ध्यानमे नही आती। आप लिखिए साधारण अर्थमे तो कोई विशेषता नही, क्या नवा और न वाके भङ्गश्लेष पर तो पण्डितेन्द्र नही टूटे ?

महिलाजी मिर्जापुरवासिनी बंगालिनी है। पति उनके विद्वान् है। वहीं एक अंग्रेज वणिकके यहाँ नौकर है। महिलाजीको हिन्दी, बंगला दोनोसे शौक है। चिरोरी और अकचकाकर इधर खूब बोले जाते है। इन शब्दोंमे हमे एक प्रकारकी सरसता मालूम होती है। इससे हमने नहीं निकाले।

कान्यकुब्ज-अबला-विलापको आपने खूब पहचाना, आपका अनुमान ठीक है। हालीका "चुपकी दाद" देखकर ही हमने उसे लिखा है। बरेली अनाथालयके शेरसिहका हाल हमे एक सज्जनने पहले ही लिखा था, वह छप भी गया। इस महीनेकी 'सरस्वती'मे आपको मिलेगा।

शङ्करजीकी कविताका क्या कहना है । पञ्चाशिका उत्कृष्ट कविता है । तिसपर भी न० प्र० वाले सरस्वतीकी कविताको भद्दी बताते हैं । "क्षीणात्मशिक्षित" पद्य समय पर याद नही आया, नही तो हम ज़रूर लिख देते, सम्भव है शङ्करजीने अपने पद्यमे इसी कालिदासीय उक्तिकी छाया ली हो । आपकी 'सरस्वती' पर बड़ी कृपा है । आप और भी एक आध कविता लिख रहे हैं । "चकास्ति योग्येन हि योग्यसङ्गमः" । आपने खूब कही, पर 'सरस्वती' अभी अपनेको योग्य नही समझती । जिस तरह अनामिकाबाईने कालिदासकी सहृदयतापर आक्षेप किया था, आप श्रीहर्षकी सहृदयता पर आक्षेप कीजिए । नैषधसे दो-चार श्लोक चुनकर आप उनकी आलोचना कीजिए ।

आप हमारा कभी कहना नहीं करते । कभी हमारी प्रार्थना नही सुनते, पर हम आपकी आज्ञाका यथाशक्ति सदा पालन करते है । ऐसा क्यो ? अच्छा बहुत अच्छा, हम 'सरस्वती' के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लेखकोंके चित्र आपकी आज्ञासे देने जाते है । बहुत जल्द इसका आरम्भ होगा, और भी दो-एक सज्जनोंने इस विषयमे हमें लिखा है । पर आप ही की आज्ञाको हम अधिक महत्त्व देते है । अब आप नैषधकी आलोचना भेजिए और साथ ही अपना एक अच्छा फोटो भी ।

शिक्षा समाप्त हो गई, बाबू शिवरत्नसिहकी पुस्तक कहाँ लौटावे क्या वे अभी तक जालन्धर ही मे हैं ।

इण्डियन प्रेसमें बेहद काम रहता है ।

गनीमत समझिए जो सरस्वती निकल जाती है । विक्रमाङ्कचर्चा आधी छपी हुई खटाईमे पड़ी है, हम उन्हे याद भी नही दिलाते । खुशी होगी तब छापेगे ।

जब तक "विष" का प्याला सामने न आवे तब तक "औषध" तैयार करना ठीक नहीं, व्यर्थ श्रम करना पड़े, कौन ठिकाना, शायद धमकी

हो, क्योंकि "जानि न जाय निशाचर माया" मसाला तैयार है, समय आते ही बहुत जल्द पुस्तक छप जायगी।

'सरस्वती'की ग्राहक-संख्या अब १५०० तक पहुँचना चाहती है। यदि "औषध" बनी तो कोई मात्रा बाकी न रह जायगी। बल्कि दो-चार चीजें जो आज तक किसीने नही देखी वे भी घोल दी जायँगी। "रमता राम" है श्री पण्डित माधवप्रसाद मिश्र। उनका और हमारे मित्रका षडष्टक योग है, और है किसका नही ? वेंकटेश्वर, बंगवासी, मोहिनी, भारतजीवन, सरस्वती सबसे आपका वही सम्बन्ध है जो ३६ का एक दूसरेसे है।

प्रेमास्पद
महावीर

[२३]

जूही, कानपुर
४—११—०६

सविनय प्रणाम !

२६ ता० का कृपा-पत्र यथासमय मिला। उधर आप बुखारमे परेशान, इधर हम। आज ७-८ रोज़मे चित्त कुछ स्वस्थ हुआ है। परन्तु दौर्बल्य अधिक है। इससे छोटा ही पत्र लिखेंगे, आपका पत्र तो बड़ा ही मनोरंजक है। उसे हमने दो बार पढा।

आप अपना फोटो जरूर भेजिए और नैषध पर एक लेख भी लिखिए। टालबाजीसे काम न चलेगा। ठाकुर शिवरत्नसिंहको हमने जालन्धर पत्र भेजा था, पर वहाँसे उत्तर अब तक नही आया। शङ्करजी की कविता अवश्य अच्छी होती है। हम तो चित्रो पर उन्हींसे कविता

लिखाना चाहते हैं। पर तीन चित्र भेजे ६ महीने हुए। इतने दिनोमे उन्होने सिर्फ़ तारा पर कविता लिखी। अभी दो उनके पास और हैं। आप ही कृपा करके हमारी सिफ़ारिश कीजिए।

'सरस्वती'की अक्टूबरवाली संख्यामे जो "शरद" है, वह प्रायः अनुवाद मय है। किरातके कई पद्योका अविकल अनुवाद उसमे है।

टेसूके विषयमे जो कुछ ज्ञात था लिखा, आगेकी राम जाने।

हमें कादियानीका वहुत कम हाल मालूम है, इसीसे हमने उसका चरित छाप दिया। तिस पर भी हमने नोट दिया ही है। उसका चित्र रह गया था, समय पर न आया था, सो प्रेसवालोने इस महीनेकी 'सरस्वती'मे लगा दिया। आप एक छोटा-सा लेख उसके उत्तरमे भेजिए, हम छाप देंगे। शिष्टताका उल्लंघन न हो और धार्मिक बातें जहाँ तक बचाई जा सके बचाइएगा। सिर्फ़ कादियानीसे सम्बन्ध रखनेवाली ही बातें लिखिएगा। योगदर्शनकी आलोचना निकलेगी, क्या करे स्थल ही नही मिलता, इससे समालोचनाएँ रह जाती है। भरसक इस महीने कुछ निकलेगी। शरद्-वर्णनमे माघवाला श्लोक प्रसिद्ध ही है। पर अब शरद गई, इससे इस विषयके अब और कोई पद्य सरस्वतीमे न निकलेगे। पर आपने जो श्लोक भेजे उत्तम है। हेमन्तवाला "लज्जा प्रौढ़े मृगीदृशां" दिसम्बरमे निकालनेकी कोशिश करेंगे।

नवम्बरके लिए शरद् पर कविता गई। इस "मृगीदृशा" वालेमे "प्रणयिता वाराङ्गनानामिव" की जगह "प्रणयिनो वाराङ्गनानामिव" हो तो कैसे ?

"वासराः" का उपमान "प्रणयिता" ठीक होगा ?

भवदीय
महावीरप्रसाद

कविताविषयक पद्य बहुत करके आपको दिसम्बरमें मिलेंगे।

[२४]

दौलतपुर, डाकघर—भोजपुर
रायबरेली
१४—११—०६

प्रिय मित्र !

८ ता० का कार्ड मिला। हमारी वृद्ध माता सख्त बीमार हैं। इससे उनकी आज्ञा पाकर हम यहाँ आये हैं। उनका हाल देखकर कानपुर जायँगे।

"प्रणयिनः" पर आपने जो भाष्य रचा सो हमारी मोटी बुद्धिमे ठीक-ठीक नहीं आया। हमे क्या करना है। हम आपका प्रेमी "प्रणयिता" ही रहने देंगे।

योगदर्शनकी आलोचना लिखी रक्खी है, किसी संख्यामे अवश्य निकलेगी। कविताविषयक पद्य बहुत करके इसी महीनेमे निकल जायँगे। आपके भी दो-एक पद्य उसमे रहेंगे। "शीत" वाला पद्य नोट कर रक्खा है। देनेका वादा नही करते।

"निद्राकोपकषायितेव दयिता सत्यज्य दूरं गता ' ' '... .. ..
नो क्षीयते शर्वरी" भी देने लायक है। हमारे खास मतलबकी जो बात हमारे पत्रमे थी उसका उत्तर आपने नही दिया। हम भी आपके कादियानीवाले पत्रांशका उत्तर नहीं देंगे। यहाँ एक देहातीने हमे एक यह श्लोक कल सुनाया—

"माषपेषणमिषेण मृगाक्ष्या दोलितो बहुरतीव-नितम्बः।
प्रोषिते प्रियतमे चिरकालं विस्मृतं सुरतमभ्यसतीव" ॥१॥

विनीत
महावीर

[२५]

जूही, कानपुर
७–१२–०६

प्रणाम !

कल रातको यहाँ आये। खतरनाक प्लेग है। कल फिर प्रस्थान है। शायद फ़ैजाबाद, गोरखपुर वग़ैरह आकर कुछ दिन रहे। पत्र-व्यवहार कानपुरके ही पतेसे रहे। श्रीकंठचरित इस उजलतमे नही भेज सकते।

स्थिति-स्थापकता हो जाने पर कानपुर लौटकर भेजेगे। कोई अपना चरित (जन्मभूमि आदिका विवरण) बतलावे ही नही तो क्या किया जाय?

हम तो वही चाहते है जो आप पर लाचारी है। आप अपना फोटो भेजकर, कृपा कर हमारी इस इच्छाको पूर्ण कीजिएगा। आपने नवम्बरकी 'सरस्वती' पसन्द की। चलो हमारा परिश्रम सफल हो गया।

"शुष्कस्तनी" विषयक आपका आशय हमारेसे अच्छा है।

कृपा करके जब कभी श्लोक भेजा कीजिए तब उनका भाव भी लिख दिया कीजिए। "कथाखंड" को फिर लिखकर भावार्थ सहित भेजनेकी दया दिखाइए। आपने जो समानार्थक सस्कृत, उर्दू, फ़ारसीके पद्य भेजे है, सब रक्खे है। सब प्रकाशित होंगे।

"माषशिमिवत्" का मतलब हमारे ध्यानमे नहीं आता। मुमकिन है कुछ अर्थ होता हो। स्पेसरका चित्र मिल सका तो जरूर "शिक्षा" के साथ निकाला जायगा।

विनीत
महावीर

[२६]

कानपुर
२१–१–०७

प्रणाम !

कृपा पत्र-मिला। कानपुरमे कही-कहीं अभी तक प्लेग बना हुआ है। हमारे पासके एक गॉवमे खूब है। उससे हम लोग अलग रहते है।

अबकी बार अर्थशास्त्र पर एक छोटी-सी पुस्तक लिखनेका विचार है। शिक्षा अभी तक हमारे ही पास है।

कविताके लिए धन्यवाद।

गवर्नमेण्टकी किताबे बहुधा दुबारा कम छपती है। Govt. Central Book Depot लिखते है।

प्रणत
म० प्र०

[२७]

दौलतपुर
डाकघर भोजपुर [रायबरेली]
२९–४–०७

प्रियवर !

आपका कृपा-पत्र बहुत दिनोमे मिला। आजकल हम अपने गॉवमे है। १० मार्च तक कानपुर जायॅगे।

यदि विक्रमाङ्क आपको इतना पसंद है तो हमारी कापी आप अपने ही पास रहने दीजिए। खेद है, आपने सतसई अभी तक न देखी थी। उत्कृष्ट कविता है। ध्वनिका आकर है। 'लाल चन्द्रिका' न मालूम कहॉ मिलती है। कृष्ण कविने दोहोकी टीका सवैयोमे लिखी है। वह भी अच्छी है। एक सतसई बंगवासीवालोंने निकाली थी, पर हमने नहीं

देखी। अंबिकादत्तका "विहारी विहार" आपने देखा ही होगा। जो दो दोहे आपने भेजे, उनको अकेले क्या छापे, आप और दोहोके साथ भेजिएगा। सतसईकी beates आप समझाइये। आजकल हम हालीके दीवानमें जो मुकद्दमा है पढ़ रहे है। खूब लिखा है। हम हालीका चित्र 'सरस्वती'मे छापना चाहते है।

विनीत

महावीर

[२८]

चरखारी, हमीरपुर

२९–९–०७

प्रिय पण्डित जी !

बहुत दिनोंमे आपने हमारी खबर ली। सुनकर रञ्ज हुआ कि आप इतने दिनो तक बीमार रहे। आशा है अब आप बिलकुल अच्छे होगे।

बाबू साहबने "पुनन्तु"—इत्यादि तो नही कहा। पर क्षमा माँगी। इसीसे हमने और कुछ लिखनेका विचार छोड़ दिया है। वक्तव्य अब न छपेगा। प्रेससे वापस मँगा लिया।

कोई साहित्य-संसारमे विशेष बात नही हुई। हाँ, "भारतमित्र" के गुप्त जी मरे, यह सुनकर दुःख हुआ। "सुनृतवादिनी" कई महीनेसे नही निकली। ५–७ दिनमे कानपुर जायँगे, वहाँसे "देवनागर" ढूढ़कर भेजेंगे। उसके आज तक शायद दो ही अङ्क निकले हैं।

दुर्भिक्ष यहाँ भी पड़ना चाहता है। प्रजा त्राहि-त्राहि कर रही है।

विनीत

महावीरप्रसाद

[२९]

जूही, कानपुर
२२–४–०८

प्रिय मित्र, प्रणाम,

कार्ड मिला। पं० रामदयालुकी खबर सुनकर दुःख हुआ। उनसे हमारी समवेदना सूचित कीजिएगा। ईश्वर उन्हे शीघ्र अच्छा करे।

हमारा वह श्लोक दे दिया था? दो-एक दिनमे हमारा इरादा घर जाने का है। कोई एक हफ्ते बाद लौटेंगे। बाणभट्ट भेजते है। पहुँच लिखिएगा। देखकर लौटा दीजिएगा, कोई जल्दी नही है। विद्यावारिधिका वेद २ जिल्दोमे है। बड़ा है। दाम कोई १० रु० है।

हमे दुनियाके किसी पत्र और किसी भाषासे लेख उद्धृत करनेसे इनकार नहीं। पर चीज़ उद्धृत करने योग्य होनी चाहिए। "वैरागी" यदि इस लायक हो तो भेजिए। आपने जन्म भरमे एक लेख भेजा सो भी पूरा नही। पूरा करनेमे भी आप झंझट बतलाते है। वाह साहब! जाने कैसे देंगे। आपको पूरा लेख भेजना पडेगा। न पसन्द आवेगा तो आप अपने "उपकारी" मे छाप डालिएगा।

भवदीय
म० प्र०

[३०]

दौलतपुर, डाकघर—भोजपुर
रायबरेली

१६–७–०८

प्रणाम,

आजकल हम अपने जन्म-ग्राममे है। ४ अगस्त तक कानपुर जानेका विचार है। आपका कृपापत्र मिला। समानार्थक पद्योंके लिए धन्यवाद।

वे National गीत हम 'सरस्वती'मे न छापेंगे। आजकलकी राजनैतिक स्थिति आपसे छिपी नही है। लेखकको सूचना दे दीजिएगा।

और सब कुशल है। पानी थोड़ा यहाँ भी बरसा है। कृपा पूर्ववत् बनी रहे यही प्रार्थना है।

भवदीय
महावीरप्रसाद

[३१]

जूही, कानपुर
६—८—०८

प्रणाम,

ले डाला शर्माजीको।

अच्छा किया 'सरस्वती'को गालियाँ दे-देकर आप शेर हो गये थे। सो, आपने उन्हे गीदड़ बनानेका उपक्रम किया है।

आषाढ़के "परोपकारी" मे आपके लेखको पढ़कर शर्माजी पर हमें बड़ी दया आई है।

कृपा करके राजवैद्य पं० रामदयालुजीसे कोई ज्वरघ्न रामबाण दवा शर्माजीको भिजवाइए।

आपका लेख पढकर शर्माजीको ज्वर आये विना न रहेगा।

विनीत
महावीरप्रसाद

[३२]

जूही, कानपुर
१६—८—०८

प्रणाम,

१४ का कृपा-पत्र मिला, जवाब मुख़्तसिर देंगे। पं० गिरिधरशर्मा (झालरापाटन) आज हमारे यहाँ पधारे हैं। उनके साथ अभी शहर जाते हैं। यही कारण है।

चित्रके लिए प्रेसको लिख दिया। तैयार होने पर आप "शङ्कर" के करकमलोंसे कविता लिखा दीजिएगा। उन्होने "हिजड़ेकी मजलिस" नामकी कविता भेजी है। उसके छापनेमे हमे पस व पेश है। इससे शायद वे कुछ नाराज हो जायँ। एक बात सुनकर आश्चर्य हुआ। भक्तराम बी० ए० को क्यो उभार रहे है ?

वे तो आपके पासके बैठनेवाले है। किसीका कुछ किया न होगा। आप डरिएगा नहीं। वहाँकी नौकरी कौन लाख टकेकी है। जहाँ तक सम्भव होगा आपके पद्य सितम्बरमे निकाल देंगे। हमे आपके श्लोक देनेमे उज्र नही। पर याद रखिए संस्कृत श्लोकोंके ज्ञाता एक ही दो है। आप अपना-सा हाल सबका न जाने। आपका इस बारका पद्य अशुद्ध छप गया, इसका खेद है।

शङ्करजीकी कविताके संग्रहके बारेमे फिर लिखेगे।

उनकी कविता हमारे सचित्र "कविताकलाप" मे निकल जाने दीजिए, फिर देखा जायगा।

सतसईकी आलोचना आपको पहले सब भेजनी होगी। हम आपके सब प्रणयानुरोधोकी रक्षा करते आये है। आपको भी हमारे इस अनुरोध की रक्षा करनी होगी।

"भू-भ्रमण खण्डन" नही देखा।

बाणभट्टका काम हो गया हो तो लौटाइएगा।

विनीत

म० प्र०

[३३]

जूही, कानपुर
२१—८—०८

प्रणाम,

कृपा-कार्ड १—८ का मिला ।

शङ्करजीके पास कई चित्र कोई एक वर्षसे पडे हैं । एक पर भी कविता नही लिखी । उर्मिला पर तुरन्त लिख देंगे, यह कैसे आशा की जा सकती है ? हमने उन्हे लिख दिया है कि चित्रमे वही भाव रक्खा जायगा जो आपकी कवितामे होगा । आप पहिले कविता लिखिए ।

"सतसई संहार" थोड़ेमे पूरा करके भेजिए । हम उसे यथासम्भव शीघ्र छापना शुरू करेंगे । "परोपकारी" के बदले "सरस्वती" मिलती है या नही ?

भवदीय
महावीर

[३४]

जूही, कानपुर
२४-९-०८

विनयपूर्वक निवेदनमिदम् ।

ला० हरिश्चन्द्रजी आज मिले । कुछ पुड़ियाँ दीं । ४-५ दिनसे हमने जल-चिकित्सा फिर शुरू की है । उसका परिणाम देखकर यह दवा खायेंगे । "बाणभट्ट" मिल गया । "शंकर" जी को हमारी तरफसे धन्यवाद दीजिएगा । गौरीशंकरजीको 'सरस्वती' भेजनेके लिए लिख देंगे । 'प्रचारक' मे यदि कोई सप्रमाण, साधार और तर्कसंगत बात हो तो कृपा करके अपनी कापीका कटिङ्ग आप ही भेज दीजिए । यदि प्रलापमात्र हो तो जाने दीजिए ।

तबीअत हमारी अभी तक वैसी ही है। घंटे आधघंटे रातको मुश्किलसे नींद आती है। लाला हरिश्चन्द्रसे आपकी बहुत बातें होती रहीं।

न मालूम आपके अब कब दर्शन हों।

विनीत

महावीर

[३५]

जूही--कानपुर

११-१०-०८

प्रिय पंडितजी महोदय,

जिस समय हमारे पत्रके विस्तृत उत्तरकी जरूरत थी उस समय आपकी आँख उठ आई। सुनकर दुःख हुआ। हमारा दुर्भाग्य !

खूब किया जो आपने नोट दिया। क्षमा माँगनेकी क्या जरूरत। आप जिस समाजमे हैं उसकी सी भी तो कुछ करना चाहिए।

जब वह लेख "आर्यमित्र" न छापेगा तब देखा जायगा।

हमारे पूर्व पत्रका विस्तृत उत्तर, जो कोई आपकी सामाजिक हानि न हो तो, शीघ्र भेजिएगा। इस दफे हम अपने अभियोक्ताओंको सहजमे नहीं छोड़ना चाहते। अतएव ८ अक्टोबरके आर्यमित्रसे लेकर आगे जो कुछ हमारे विरुद्ध उसमे निकले कृपा करके पूरा पत्र भेजते जाइए। इतनी चीज़े और भी हमे भेजिए। १—फाल्गुनका परोपकारी, २—शिक्षामञ्जरी ३—बी० एन० शर्माकी और किताबे जो आपके पास हों, ४—१६ जूनका आर्यमित्र जिसमे बी० एन० ने आपकी आलोचनाका जवाब दिया है, ५—बी० एन० की अपील, ६—पं० बाबूराम शर्माकी किताब (रामायणकी भूमिका या और जो नाम हो)।

इस कष्टको क्षमा कीजिएगा।

विनीत—

महावीरप्रसाद

[३६]

जूही, कानपुर
१८-१०-०८

प्रणाम !

१६ का कार्ड मिला। फाल्गुनका 'परोपकारी' भी मिला। थैंक्स।

कल आपको हम पत्र भेज चुके है। ये महापुरुष दीनदयालु चौवे कौन हैं ? हम नही जानते। याद नही पड़ता कभी देखा हो। साथ रहना तो दूर रहा।

आपने खूब जवाब दिया, शान्ति तो खड्ग होती है क्षमा भी होती है :-

"क्षमाखड्गं करे यस्य दुर्जनः किं करिष्यति"। पं० गिरिधरशर्माजीका पत्र दो महीने बाद आया है।

देरीके लिए हमने उलाहना दिया है।

विनीत
महावीर

[३७]

जूही, कानपुर
३०-११-०८

प्रणाम !

३ हफ्तेके बाद परसों कानपुर लौटकर आये। २० नवम्बरका आपका पत्र मिला। अब तबीअत पहलेसे अच्छी है। पर नींद न आनेकी शिकायत बनी हुई है।

२२ नवम्बरको आगरेके बा० श्रीराम एक वहींके वकीलसाहबके साथ हमसे लखनऊमें मिले थे। दूसरे दिन पं० भगवानदीन मिश्रसे भी हमारी मुलाकात हुई।

समाजके जलसेमे हमारे कई एक आर्य-मित्र भी आये थे। वे भी मिले। सबने बी० एन० शर्मा और "आर्य्यमित्र" पत्रके लेखो और पालिसीको धिक्कारा। मिश्रजीने हमसे, क्षमाका मसविदा लिया, और कहा कि २४ नवम्बरको हम आपको खबर देंगे कि यह क्षमापत्र आर्यमित्रमे छपेगा या नही। परन्तु आजतक उनका उत्तर नहीं आया। एक हफ्ता ठहरनेके बाद अब हम नालिश दायर किये बिना नही रह सकते। विवश है। मिश्रजी कहने लगे कि यदि हम बाबूरामको बरखास्त कर दे और आर्यप्रतिनिधि सभाकी ओरसे क्षमा-पत्र छाप दे तो आप संतुष्ट हो जायँगे या नही? हमने कहा—प्रतिनिधि सभासे हमारा कोई झगड़ा नही। इससे उसकी क्षमा-प्रार्थनासे हमारे चरितकी निष्कलङ्कता साबित न होगी। जिन्होने हमे गालियाँ दी है और हम पर मिथ्या दोष लगाये है, उन्हे क्षमा माँगनी चाहिए। हाँ, यदि सभा समझती हो कि बाबूरामने अन्याय किया है तो वह उन्हे बरखास्त कर सकती है।

पं० दामोदरप्रसादका कार्ड पढ़ा। १६ नवम्बरका आर्यमित्र भी पढ़ा। अब तक हमारी आर्य-समाजसे बड़ी सहानुभूति थी, पर शास्त्री ऐसे पण्डितोके इस तरहके लेख पढ़कर अब इस समाजसे हमे घृणा हो रही है। क्षमा कीजिए। हम नही जानते थे कि पढे-लिखेजन भी इतने सङ्कीर्ण-हृदय होते है और त-अस्सुबकी आगमे इतने जल-भुन सकते है।

यदि कोई विशेष कारण न हो तो आप 'आर्यमित्र'की सम्पादकता स्वीकार कर लीजिए। आपके कारण उसकी कायापलट हो जायगी। पढ़नेवालोका वह आदर-पात्र हो जायगा। आपके आगरे आनेसे हम भी शायद कभी-कभी आपके दर्शनोका लाभ उठा सकेंगे।

लाला हरिश्चन्द्र कहते थे कि आप और आपके मित्र नरदेव शास्त्रीजी आदि मिलकर एक प्रेस करना चाहते है।

यदि ऐसा हो तो बहुत ही अच्छी बात है। इस दशामे इंडियन प्रेस या आर्यभास्कर प्रेसकी नौकरी करना अभीष्ट नहीं।

तजकरे हज़ारदास्तॉ वाला नोट हमने "जमाने" मे उसका रिव्यू पढ़कर ही लिखा है।

पुस्तक हमने नहीं देखी।

विनीत
महावीरप्रसाद

[३८]

जूही, कानपुर
२७–१–९

प्रणाम,

कृपाकार्ड मिला। प्राचीन लिपिकी बात ज्ञात हुई। पं० भगवानदीन जी कहॉ है? लिखिए, उन्हे हम पत्र भेंजे तो किस पते पर। हम नालिश करनेके ही इरादेसे शीघ्र घरसे लौट आये हैं। अनुवाद तैयार है। "वी प्रूफ" तैयार है। दो-चार दिन और ठहरे हैं। कृपा करके पण्डितजीको लिख दीजिये। जो कुछ करना हो शीघ्र करें।

भवदीय
म० प्र०

[३९]

जूही, कानपुर
१४–२–९

प्रणाम,

कृपाकार्ड मिला। आज बी० एन० शर्माजी यहॉ पधारे हैं। मुख्य-मुख्य पत्रोंमे क्षमा मागने जा रहे हैं। मसविदा ले लिया है। अब

"आर्यमित्र" वालोका शीघ्र फैसला हो जायगा। यह क्षमापत्र छपते ही शीघ्र नालिश कर देंगे। अच्छी बात है ज्वालापुर पधारिए। ईश्वर आपको इस नये काममे साफल्य प्रदान करे। किसी समय हम भी वहाँ आपके दर्शनार्थ आनेकी चेष्टा करेंगे। पं० गौरीदत्तके भाई आज कल काशीमे हैं। खेद है, सरस्वतीका सितम्बरवाला अंक कोई फालतू नहीं। स्वास्थ्य अभी हमारा पूर्ववत् चला जाता है। दया करके उस प्राचीन लिपिको लौटा दीजिए। अब-तक नही पढी गयी कब पढी जायगी। उसकी ज़रूरत क्यो पड़ी। और कुछ हमे भी सुनाइएगा।

भवदीय

म० प्र०

[४०]

जूही, कानपुर

२४-२-०९

प्रणाम,

उज्जैनसे भेजा हुआ पत्र आया। आपके जो-जो जीमे आता है लिखा करते है। यहाँ तक कि हमारी नीयत पर भी कब्ज़ा कर लेते है। हम जो हँसीकी भी कोई बात लिख देते है तो आपको "वेदना" होती है। वाह! अच्छी आपकी वेदना है। आप अपने पत्रमे हमारे और हमारे लेख आदिके विषयमे जो लिखते या छापते है, उसे हम सुनते नही तो क्या करते है। सिर्फ देखकर ही नही रह जाते। याद होगा हमने तो खुद ही आपको लिखा था कि आप जो चाहिए लिखिए हम चुपचाप सुनेंगे। फिर आपको बुरा क्यो लगना चाहिए। हमारी तन्दुरुस्ती अभी तक खराब है। २ महीनेके लिए हम कही बाहर विश्राम करने जाना

चाहते है। ज्वालापुर पहुँचकर कोई ऐसी जगह हमारे लिए तजवीज कीजिए जहाँ हम एकान्तमे आरामसे सस्त्रीक रह सकें। प्राकृतिक दृश्य अच्छा हो। भ्रमण करनेके लिए सड़कें या साफ़ रास्ते हो। खाने पीने का सामान सब मिलता हो। रहनेके लिए भी जगह आरामकी हो। ज्वालापुर ही मे अपने पास रखनेकी चेष्टा न कीजिएगा। हमारे स्वास्थ्यका ख्याल करके कोई अच्छा स्थान दूर हो या निकट, तजवीज कीजिएगा। फोटो ओझाजीसे लेकर जरूर लौटा दीजिएगा। बी० एन० जीकी क्षमा प्रार्थना 'भारतमित्र'मे छप गई। 'आर्यमित्र'ने अभी नही छापा। पं०भगवानदीनने आर्यमित्रमे आर्य्यमित्रवालोकी तरफसे भी क्षमा-प्रार्थनाका मज़मून भेजा है। मसविदा ठीक न था। इससे हमने दूसरा भेजा है। उज्जयिनीका हाल पढ़कर हमारे भी मनकी अजब हालत हुई। हम तो उज्जैनके बहुत पाससे निकल गये। पर वहाँ न जा सके अफ़सोस रहा।

ज्वालापुर पहुँचकर पत्र भेजिएगा।

भवदीय

म० प्र०

[४१]

जूही, कानपुर

२८-३-०९

प्रणाम,

२५ का कृपा कार्ड मिला। ज्वालापुर पहुँचकर वहाँका हाल लिखिएगा। हम, यदि कोई विघ्न न हुआ तो ५ एप्रिल सोमवारको सुबह ६ बजेके लगभग ज्वालापुर पहुँचेगे—सस्त्रीक बहुत करके एक दिनके लिए गौरीदत्त भी आवेंगे। और शायद हमारे मित्र बाबू सीताराम भी दो-एक दिनके

लिए आवे। बाबू सीतारामको ज्वालापुरके पोस्टमास्टर और स्वामी स्वरूपानन्द जानते है। ठहरनेका प्रबन्ध कर रखिएगा। स्थायी प्रबन्ध वहाँ आकर करेंगे।

भवदीय
म० प्र०

[४२]

जूही, कानपुर
१७—५—०९

प्रणाम,

कृपा-कार्ड मिला। १३ ता० की शामको यहाँ आ गये। स्वास्थ्य वैसा ही है। कलसे जल-चिकित्सा शुरू की है। मन्ना मजेमे हैं। यदि आपका कुछ काम निकले तो विद्यालय देखने आदिका हाल आप अपने पत्रमे दे सकते है। श्लोक भी आप दे सकते है। कोई बात बढ़ाकर न लिखी जाय। पहले ही पहल दो अक एक साथ निकालना अच्छा नहीं लगता। प्रबन्धकी त्रुटि जाहिर करता है। वैशाखसे न सही जेठसे ही। कौन बड़ा अन्तर है। यो आपकी इच्छा। पूने वालोका पता ढूढ़ेगे। मिलने पर लिखेगे। उस श्लोकमे और भी कई पाठान्तर हो सकते हैं यथा—

१—निशम्यता लेखललाममालिका

सञ्चय

२—प्रकाशने यस्य विशेषनिश्चयः

येन कृतोऽतिनिश्चयः

येन कृतो विनिश्चयः

यदि दूसरी लाइनसे "विशेष" शब्द निकाल डाला जाय तो तीसरी लाइन इस तरह हो सकती है:—

३—गृहीतसद्धर्मविशेष-सञ्चयः :—

समूह

विचार

४—चकास्ति सोऽयं भुवि भारतोदयः

विभाति सोऽयं

स शोभतेऽसौ

इनमेसे जो पाठ आपको अच्छा लगे रख लिजिए।

भवदीय
म० प्र०

[४३]

जूही, कानपुर
१—६—०९

प्रणाम,

भारतोदय अच्छा निकला। हमारी बड़ी तारीफ़ आपने कर दी। उसके हम मुस्तहक़ नही। बीमारीके विषयमे इतना न लिखना था। आप शायद देहलीका जलसा देखने गये है। वहाँ भी, सुनते है, मारपीट हुई है। झालरापाटनसे पत्र आया है। पर उस बातका जिक्र नही। शायद उतना वेतन देना उन्हें मंजूर नही। याद दिलाना हम मुनासिब नहीं समझते। कविता-कलापके कुछ चित्र अभी तक तैयार नही हुए। इसीसे निकलनेमे देरी हो रही है। कल घर (दौलतपुर) जानेका विचार है। महीना-पन्द्रह दिन वही रहेगे। स्वास्थ्यका वही हाल है। यहाँ फिर ज्वर आ गया। इससे और भी कमज़ोर हो गये हैं। भारतोदयके पहले अंककी एक-एक प्रति नमूनेकी इन लोगोको भी भेज दीजिएगा—

१—पं० श्यामबिहारी मिश्र, २—बा० श्यामसुन्दरदास, ३—कामताप्रसाद गुरु, ४—बा० मैथिलीशरण गुप्त, ५—पं० गौरीनारायण मिश्र।

भवदीय
म० प्र०

[४४]

जूही, कानपुर
९—८—०९

प्रिय मित्र,

५ ता० का पत्र मिला। शिमलेसे भेजे गये आपके पत्रका उत्तर दे चुके है। चक्करमे डालनेवाले चित्रका उत्तर ठीक है। इस विषयकी हज़ारो चिट्ठियाँ हमारे पास आ चुकी हैं। नाको दम है। अब यह प्रबन्ध आगे न चल सकेगा। वर्षा-विषयक दोहे एक नवीन कविके है। **स्वर्गसहोदर** सचमुच ही उत्तम कविता है। कई लोगोने तारीफ़ की है। सूरश्यामवाले पदके विषयमे फिर कभी पूछेंगे। अभी हम चक्करमे पड़ने वालोके उत्तरसे घबराये हुए है। प्रतिबिम्बवाले लेखकी अशुद्धियोके कारण हम लज्जित हैं। हमने गत २ महीने कुछ काम नहीं किया। 'सरस्वती' निकल रही है, यही गनीमत है। दौरेसे पत्र भेजते रहिएगा। हो सके तो एक-आध लेख भी भेजिएगा। बड़ी जरूरत है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[४५]

जूही, कानपुर
१४—१०—०९

प्रियवर,

कृपा-कार्ड मिला। सरस्वतीमे "ख़ूब" की सामग्री तो अब रामका नाम ही रहता है। यह आपकी कृपा है, जो उसे वैसा समझते हैं। आपके डेपुटेशनको ख़ूब कामयाबी हुई, सुनकर हम बहुत प्रसन्न हुए। औरोको हसद हुआ है। स्वास्थ्य ठीक नही। जनवरीसे विश्राम करेंगे।

'सरस्वती'को किसी औरको सौपेंगे।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[४६]

जूही, कानपुर
१६—१०—०९

प्रिय मित्र,

प्रणाम, आपका १४ तारीखका तार आज १६ को मिला। इसके पहले ही हम आपके कार्डका उत्तर दे चुके हैं। पहुँचा होगा। इसीसे आपके तारका उत्तर तारसे नही देते। आपकी समवेदना और सहानुभूतिके लिए अनेकानेक धन्यवाद। आपकी इस कृपाने हमारे मानसिक और शारीरिक कष्टोको बहुत कुछ कम कर दिया है। जो अपने होते है वही आपत्तिमे साथ देते है। वही आत्मीय जनोंके दुःखको अपना समझते हैं। आप इसके प्रत्यक्ष उदाहरण है। ज्वर तो हमारा जाता रहा है। नींदकी शिकायत बनी हुई है। जनवरीसे पूर्व विश्राम करनेका विचार है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[४७]

जूही, कानपुर
३०—१०—०९

प्रणाम,

रावलपिण्डीसे भेजा हुआ कृपा-कार्ड मिला। आशा है अब आप ज्वालापुर लौट आये होगे। तबीअत हमारी वैसी ही घसपस चली जाती है। कृपा करके अब कभी आप हमारे शिक्षासरोज और दूसरी रीडर्सको किसी ऐसे सज्जनको न दीजिएगा जो पाठ्य-पुस्तके बनाना चाहता हों। वे

पुस्तके बाकायदा प्रकाशित नहीं हुई। बाबू भवानीप्रसादने उनकी कई कविताएँ अपनी पुस्तकोंमे रख दी है। इस बातको आप भी जानते होंगे।

आर्य्यभाषा पाठावली प्रथम भागकी कापी हमारे पास आई है। उसमे आपके किये हुए संशोधन हैं।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[४८]

जूही, कानपुर
११–११–०९

प्रणाम

कृपा-पत्र मिला। लाला भवानीप्रसादका पत्र भी उसके साथ मिला। आपके वे आन्तरिक मित्र है। आप उनके कामको "कविता-चुराना" कह सकते हैं; हम नहीं। कविका नाम देने पर चोरीका इलजाम नहीं लगाया जा सकता। इच्छा-विरुद्ध काम करनेसे जबरदस्ती अलबत्ते कही जा-सकती है। खैर, कुछ भी हो। हमने मुख्याधिष्ठाताजीको लिख दिया है कि जो कविताएँ लाला भवानीप्रसादने रक्खी हैं रहने दी जायँ। पर इण्डियन प्रेसकी रीडरोंसे चित्र न नकल किये जायँ।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[४९]

जूही, कानपुर
९–३–१०

प्रणाम,

कृपा-कार्ड मिला। तबीअत कुछ अच्छी होने लगी थी कि फिर एकाएक खराब हो गई। एक हफ्तेसे बहुत कम नींद आई है। कारण ज्ञात नहीं, प्रूफ वगैरह देखते रहे है। शायद इसीसे हो। क्षमा कीजिए।

हम ज्वालापुर आने योग्य नहीं। यदि तबीअत अधिक खराब न हो गई तो १८ मार्चको दौलतपुर जानेका विचार है। वहाँ महीना-पन्द्रह रोज़ चुपचाप पड़े रहेंगे। बाद कानपुर आवेंगे। कविरत्नजीने दर्शन नहीं दिये। शिक्षाकी एक कापी प्रयागसे आपके पास आवेगी। वे चाहते हैं कि किसी अखबारमे आप उसकी बाबत कुछ लिख भेजें।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[५०]

कानपुर
१६—३—१०

प्रणाम,

आपका भेजा एक फ़ार्म और एक पेज पढ़ा। मुँहतोड़ जवाब है। भारतोदय आने पर उसे भी पढ़ूँगा। हस्तपत्रको मैंने पढ़ा, सख्त वाक्यों पर निशान लगाया। फिर उन्हे रायसाहबको सुनाया। उनकी रायमे पकड़ की कोई बात नहीं। पर बेहतर होगा, अगले एडिशनमे अधिक सख्त बातें कुछ नरम कर दी जायँ। हस्त-पुस्तक लौटाता हूँ। राय देवीप्रसादकी राय उसकी पीठ पर देखिये। कल आपकी हस्त-पुस्तक और प्रूफ़ पढ़ा। दो-एक अखबार भी पढ़े। इतने हीसे दिमाग़में विशेष ख़राबी पैदा हो गयी। कल रातको बिलकुल ही पलक नहीं लगी। मेरा तो यह हाल है। प० देवी-प्रसाद 'सरस्वती'मे लिखने जाते हैं कि मै अच्छा हो गया। वे शायद आपके मेलेमे आवें। उन्हींको मेरा प्रतिनिधि समझिए। पत्र आपका फाड़ डाला।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[५१]

जूही, कानपुर
२७—५—१०

प्रणाम,

कृपा-पत्र मिला। कृतार्थ किया। तबीअत मेरी अभी तक सुधरी नहीं। कुछ आराम जरूर है, पर इतना नही कि लिख-पढ़ सकूँ। इस कारण अभी 'सरस्वती'के विषयमे कुछ नही कह सकता। १ जूनको २ महीनेके लिए दौलतपुर जानेका विचार है। वहाँ भी यही करना होगा। इस हफ्तेका "भारतोदय" अवश्य मनोरञ्जक है कुछ पढ़ लिया। बाकीको भी पढ़ूँगा। "शिक्षा" की समालोचनाके लिए धन्यवाद। खूब है। पढ़कर चित्त प्रसन्न हुआ। पर आपका माफी माँगना अनुचित हुआ। स्पेन्सर उस शिक्षाको शिक्षा कहते है जिससे जीवन अच्छी तरह सार्थक हो सके। तदनुसार उनकी रायमे (मेरीमे नही) संस्कृत पढ़नेकी तादृश जरूरत नहीं।

स्पेन्सरने धर्म, कर्म्म, आर्य्यता, अनार्य्यताके खयालसे नही, किन्तु अपने किये हुए शिक्षाके लक्षणको ध्यानमे रखकर वैसा लिखा है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[५२]

दौलतपुर
२४—६—१०

प्रणाम,

कृपा-कार्ड मिला। हाँ, शायद ग़ालिबसे भी ज़्यादह। प्रायः आम ही खाते हैं। आमो ही की फिक्रमे रहते है। और आम ही ढूँढा करते है।

इससे हमारा कब्ज़ रफ़ा रहता है और नींद भी काफ़ी लगती है। दिनको भी कुछ देर सो जाते हैं। और रातको भी ४-५ घण्टे। स्वास्थ्य पहलेसे बहुत अच्छा है। "सतसई-संहार" मे सुधादीधिति पर आपकी आलोचनाने मारटिनी हेनरीका काम किया है। ....

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[५३]

दौलतपुर
१-७-१०

प्रणाम,

२७ का कार्ड पहुँचा। विद्यावारिधिजीके मित्र पं० नन्दकिशोर शर्मा वाणीभूषण परसो मिलने आये थे, एक मित्रके साथ। उनका गाँव हमारे से १४ मील पर है। संहारके कारण आप पर सख्त नाराज़ थे।

हमने उनका समाधान कर दिया। सब तरहसे आपको निर्दोष साबित कर दिया।

भवदीय
म० प्र०

[५४]

जूही, कानपुर
२१-१०-१०

प्रणाम,

१५ ता० का कृपा-कार्ड मिला। नाशङ्कसे विलज्ज सेवामे आपकी कौन भूल है ? छापेखानेके भूतोंने भूलकी होगी। उसके लिए क्या चिन्ता है ? सम्मेलनमे मैं नहीं गया। रहा तो फीका ही पर सभाको रुपया कुछ मिल गया।

अच्छा हुआ। मुझे आज दिनसे ज्वर, कफ, खाँसी आदि तंग कर रहे है। आज कुछ आराम है। काशीवासकी इच्छा हो तो माकूल तनख्वाह पर सभाके कोषका काम दिलवा दे।

भवदीय
म० प्र०

[५५]

जूही, कानपुर
३-११-१०

प्रणाम,

आपको एक बात कल लिखना भूल गये। जनवरीसे 'सरस्वती'का पाश फिर हमारे गलेमे कुछ समयके लिए पड़ेगा। हमारी तबीअत ठीक नही, लिख-पढ़ नही सकते। आप हमारे सकटको कम कीजिए। दो-एक लेख भेजिए, शीघ्र। हीलाहवाला न कीजिएगा। "यावद्गतं न च जहाति"। यही समय सहायताका है। कालिदासकी कविताकी खूबियॉ दिखलाइए। लिखिए क्यो उसकी इतनी प्रशंसा है। सोदाहरण। उनकी उपमाओं पर कुछ लिखिए। या जो आपके जीमे आवे।

भवदीय
म० प्र०

श्री मैथिलीशरण गुप्त

श्री मैथिलीशरण गुप्तजीका जन्म झांसी ज़िलेके चिरगाँव नामक क़सबेमें संवत् १९४३ में हुआ। इनके पिताका नाम लाला रामशरण गुप्त था। गुप्तजीने सम्पन्न घरमें जन्म लिया। यही नहीं, इनका परिवार संस्कृत रुचिका भी था। इनके पिता वैष्णव भक्त और कवि भी थे।

श्री मैथिलीशरण गुप्तजी आज राष्ट्रकविके रूपमें प्रख्यात है। राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसादजीने उन्हें राज्यपरिषद्‌का सदस्य भी बनाया है। "भारतभारती", "साकेत", "यशोधरा" आदि अनेक उनके प्रसिद्ध काव्य ग्रन्थ है। इस युगमे हिन्दीके सबसे प्रसिद्ध कवि यही हैं।

श्री मैथिलीशरण गुप्तजीका पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीसे बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध था। द्विवेदीजी उनके गुरु थे। गुरु-शिष्यका पत्र-व्यवहार भी बहुत हुआ था। इन पत्रोंका साहित्यिक महत्त्व भी बहुत है। गुप्तजीके पास द्विवेदीजीके कुछ पत्रोंका संग्रह भी था, जिसे उन्होने 'भारतकला भवन' काशी, को दे दिया। इन्हीं पत्रोंमेंसे छाँटकर महत्त्वपूर्ण पत्र यहाँ दिये जा रहे हैं।

[भारत कला-भवन, का० हि० वि० के सौजन्यसे]

[५६]

जूही, कानपुर
१–१–०९

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण,

कृपापत्र मिला। कविता-कलापकी कापी हम ३–४ दिनमें इण्डियन प्रेसको भेज देंगे। आपकी शेष कविताएं जब हो चुकेंगी, तब उन्हे भी पीछेसे भेज देंगे। रविवर्माके †गंगावतरण और रामचन्द्रके ‡गंगावतरण पर भी १०–१० पद्य आप लिख दें तो इन चित्रोका उद्धार हो जाय। हम अपना एक चित्र यहाँ बनवाकर छपने भेजेंगे। अभी निश्चय नहीं है।

'द्रौपदी-दुकूल' फरवरीमे निकलेगा।

भवदीय
म० प्र०

[५७]

दौलतपुर,
डाकघर भोजपुर, रायबरेली
१८–१–०९

प्रियवर बाबू मै० श०,

हमारे बहनोईका ६ फरवरीको शरीर छूट गया। वही हमारे घर पर रहते थे। अब उसे हम उजाड़ समझते है। इसीसे यहा आना पड़ा। ८–१० दिनमे कानपुर लौटेंगे। गर्विता नाम बुरा नही। सगर्वासे अच्छा है। कविता भी मजेकी है। जरा सरलताका ध्यान रक्खा कीजिए जिसमे पढ़ते ही मतलब समझमे आ जाय। कविता-कलाप छपने गया।

---

† शंकरकी जटाओंसे। ‡ धुरन्धरकृत।

अवशिष्ट कविताएं यथासम्भव शीघ्र भेजिए। आपकी कविताओंके प्रूफ हम आपको भेजेंगे। उन्हींमे जो संशोधन चाहिए कर दीजिएगा। केशो की कथाकी समालोचना पं० श्यामनाथने भेजी है। अच्छी है छपेगी।

भवदीय

म० प्र०

[५८]

जूही, कानपुर

२५-१-०९

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण,

मा० कृष्ण ७ का पत्र मिला। "गर्विता" मे स्वामी मेरे वचन कर दिया। जिन २५ कविताओंके नाम आपने लिखे वे सब कविता-कलापमे छपेगी। सीताका पृथ्वी-प्रवेश और रामचन्द्रका गंगावतरण भेज दीजिए। औरो पर (गगावतरण और महानन्दा पर) जी चाहे लिखिए जी चाहे न लिखिए। चित्रोंके नीचेके पद्य अलग-अलग काग़जके टुकड़ो पर लिखकर भेज दीजिए। महानन्दा कल्पित नाम है। जो भाव चित्रसे निकलता हो वही ठीक है। चित्र-चर्चा उत्तम विषय है। उस पर लिखिएगा। एप्रिलमे एक रगीन चित्र निकलेगा (कर्ण-कुन्ती), कविताके लिए उसे अगले महीने भेजेंगे।

भवदीय

म० प्र०

[५९]

दौलतपुर

११-२-०९

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण,

कार्ड मिला। कुमार-सम्भवसारका अनुवाद उर्दूमे नही हुआ, जहॉं

तक हम जानते हैं। किसीको अनुमति भी हमने नहीं दी और न देनेकी इच्छा है। कल या परसो आपको एक पत्र भेज चुके है।

भवदीय
महावीरप्रसाद

[६०]

इलाहाबाद
२२-६-१९०९

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण

दो रोजके लिए हम यहाँ आये है। एक आध दिन मे दौलतपुर, भोजपुर, रायबरेली वापस जायेंगे। तोतेवाली कविता यहाँ लोगोको बहुत पसन्द आई। प्रेसके मालिक उसे सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। परन्तु ज़माना नाजुक बड़ा है। लेखोका कुछका कुछ अर्थ लगाया जाता है। इससे निश्चय यह हुआ कि यह कविता अभी कुछ दिन न प्रकाशित की जाय। आशा है आप इससे खिन्न या अप्रसन्न न होगे।

"उत्तरासे अभिमन्युकी विदा" कविताके अन्तमे आपने जो अभिवचन दिया था उसे अब शीघ्र पूर्ण कीजिए। अगस्तकी सर०मे उत्तरा और अभिमन्युका रंगीन चित्र निकलेगा। चक्रव्यूहके भीतर युद्ध करके अभिमन्यु मारे गये है। उनके शवके पास बैठी हुई उत्तरा विलाप कर रही है। चित्र कलकत्ते गया है। आने पर भेजा जायगा हमने भी नही देखा। प्रेसवालोसे पूछकर चित्रकी स्थिति आदिका वर्णन लिख भेजेंगे। तब तक आप लिखना शुरू कीजिए। व्यूह-भेदन और युद्धमे अभिमन्युकी बहादुरीका कुछ हाल लिखकर उत्तराका विलाप लिखिए। विलाप हीकी प्रधानता रहे। खूब कारुणिक बनाइएगा।

छोटे लड़कोके लिए दो एक सचित्र कविता-पुस्तक छोटी-छोटी इण्डियन

प्रेसके मालिक लिखाना चाहते है। उनके नमूने विलायतसे मँगाये गये हैं। उसी तरहकी हिन्दीमे लिखना है। क्या १००—२०० लाइनें आप भी लिख सकेंगे? पुरस्कार देनेको कहते है। हमारी समझमे लेनेमे कुछ हर्ज नहीं। विलायतमे बड़े-बड़े लोग लेते है। योही आप लिखना चाहे तो योही लिख दीजिए। पं० नाथूरामने लिखना स्वीकार किया था। पर अबतक कुछ नहीं लिखा।

शुभेच्छु
म० प्र० द्विवेदी

[६१]

दौलतपुर,
भोजपुर, रायबरेली
२८—६—०९

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण गुप्त,

प्रयागसे हम लौट आये। वहाँसे हमने एक पत्र आपको भेजा है। पहुँचा होगा। 'पञ्जरबद्ध कीर' अभी कुछ दिन न छापेंगे। यही फैसला हुआ है। न छापना ही अच्छा है। "हरिणोक्ति" आपने अच्छी लिखी। बड़ा अच्छा अवसरोपयोगी पद्य है। हम तद्गत उक्तिको यथार्थ समझते है। कभी जीमे आवे तो ऐसी ही दस-पाँच अन्योक्तियाँ आप भी लिखिए— पर नई नई। अभी यहाँ गाँवमे कोई एक महीना रहनेका विचार है। आपकी सलाह बहुत अच्छी है।

भदैनीके रामजीसहायको नही जानते। आप इन अपरिचित लोगोके कहने पर ध्यान न दीजिए। कविता-कलापको छापकर कुछ दिन बिकने दीजिए। उसकी माग आप हीकी कविताके कारण होगी। बड़ी विशाल पुस्तक निकलेगी। १०—१५ दिनमे तैयार हो जायगी। दाम कोई २॥) होगे। आपकी कविता अलग छपनेसे उसकी माग कम हो जायगी। प्रेस

वालोको घाटा होगा। उन्होंने बहुत रुपया उसके छापनेमे खर्च किया है। तब तक आपकी दस पांच कविताएं और तैयार हो जायँगी।' फिर हम उन सबको एकत्र पुस्तकाकार छापनेके लिए इंडियन प्रेससे कहेगे। आप औरोके कहनेमे न आइए। 'भारत-मित्र'ने आपकी रत्नावली कविताको क्लिष्ट बताया है। उसका नोट आपने देखा ही होगा। "स्वर्ग-सहोदर" की हम राह देख रहे है। सरल होनी चाहिए।

भवदीय

म० प्र०

[६२]

जूही, कानपुर

१४—५—१०

प्रियवर बाबू मैथलीशरण,

कृपा-पत्र मिला। आपकी आखोका हाल सुनकर दुख हुआ। उनकी रक्षाका खूब ख्याल रखिये। आशा है अब अच्छी हो गई होगी।

राजा रामपालसिंह हमारे ही ज़िलेके है। कुछ दिनोतक हम और वे रायबरेलीके एक ही स्कूलमे पढते थे। उनका चरित्र भी हमने उनके एक मित्र राजाके कहनेसे छापा है। पर एक दफ़े पहले हमने एक पत्र लिखा था। उसकी पहुँच तक उन्होने न लिखी। उनके प्राइवेट सेक्रेटरी तिलकसिंहने—एक लम्बा लेख हमारे पास छपने भेजा था। अच्छा न था। इससे हमने उसे नही छापा। इसीसे शायद राजा और राजसेवक दोनो अप्रसन्न हो गये। यह पत्र 'क्षत्रिय मित्र'के एडीटरने या तो लिखा है या तिलकसिंहने—राजासाहबके हाथका लिखा हुआ नहीं जान पड़ता। आप जो मुनासिब समझें उत्तर दे दें। या चुप रहे।

खड्गविलास प्रेस वालोने हमे उस विषयमे कुछ नहीं लिखा। कल 'रंगमे भंग' पुस्तक एक पंजाबी महात्माको हमने सुनाई। सुनकर बड़े ही प्रसन्न हुए।

संयोगिनी और वियोगिनी पर कविता करना उचित नही। 'सरस्वती'मे उनपर कविता छपना और भी अनुचित है।

गोबर्धन-धारणपर लिखिए। हमने कई दफे इण्डियन प्रेससे कई चित्र बनानेके लिए कहा। कोई शकुन्तलाके सम्बन्धमे था, कोई था कुमार-सम्भवमे वर्णित पार्वतीके विषयमे। पर नही बन सके। उस समय महाभारतके चित्रोकी धूम थी। आप उनको लिखिए। अब शायद फुरसत हो और आपकी सूचनाके अनुसार चित्र बन सकें।

बुन्देलखण्डकी घटनाओंके आलम्ब पर अवश्य कविता लिखिए। दूर राजपूताने जानेकी जरूरत नहीं। कभी फुरसत मिले तो सीताका वनगमन, भरतमिलाप, अशोक-वनमे सीता और रावणकी बातचीत आदि विषयो पर भी कुछ लिख डालिएगा।

तबीअत हमारी पहलेसे कुछ अच्छी है। ३ जून तक दौलतपुर जानेका विचार है—२ महीनेके लिए।

शुभेच्छु
म० प्र० द्विवेदी

नोट—

१ जूनको मैं बहुत करके अपने गॉव चला जाऊँगा। अजमेरीको लिख दीजिए ३१ मईके बाद यहॉ आनेका कष्ट न उठावें।

इसे देख लिया। ध्यानसे। यत्र-तत्र पेंसलके निशान और सूचनाएँ देख जाइए। उत्तम काव्य है। उत्तरार्द्ध और पूर्वार्द्ध करनेकी अपेक्षा ७ सर्गोंमे विभक्त करना अच्छा हुआ। एक खासा काव्य हो गया। इसमे कही-कही पर क्लिष्टता खटकती है। यथासम्भव उसे दूर करनेका यत्न कीजिएगा। नही तो टिप्पणियॉ दे दीजिएगा।

'मेघनाद-वध' बड़ा ही ओजस्वी काव्य है। १० सर्गसे कममे है। याद तो ऐसा ही पड़ता है। गीतिमे बंगलाके प्रसिद्ध कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरने गाने योग्य कविता की है। उसमे ६ राग है—पीलू, जागड़ा, मलार, धनाश्री आदि। विषय अनेक है। इन्होने तो नाट्य-नियमोके अनुसार इसकी रचना की है। औरोकी बात मालूम नही।

वैदेहीका वनवास आदि फिर कभी खूब फुरसतके वक्त लिखिएगा। अभी आप और जो कुछ चाहे लिखें।

राजपूतानेकी घटना पर भी काव्य लिखिए। एक बातका विचार रखिएगा। भाषा सरल हो। भाव सार्वजनीन और सार्वकालिक हो। सब देशोके सब मनुष्योके मनोविकार प्रायः एक-से होते है। काव्य ऐसा होना चाहिए जो सबके मनोविकारोको उत्तेजित करे—देश-कालसे मर्यादा बद्ध न हो। ऐसी ही कविता अमर होती है।

शुभेच्छु

२२-५-१० म० प्र० द्वि०

[६३]

जूही, कानपुर
१-६-१०

प्रियवर बाबू मै० श० गुप्त,

कलका कार्ड मिला। चौथा चरण अनुचित है। तीसरेका उत्तरार्ध भी खटकता है। 'दैया' शब्द भी साधु भाषामे अच्छा नहीं लगता। इस पद्य ही को जाने दीजिए। आज एक काम लग गया। कल शामकी गाड़ीसे प्रस्थान है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[६४]

जूही, कानपुर
२७–३–११

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी,

राजा साहबकी चिठी पढ़ी। मुसद्दस हमारे पास था। क्यो उन्हे कष्ट दिया। जरूर ऐसा काव्य लिखिए। पर तबीअतको संभालकर। आपने राजा साहबका जो पत्र भेजा है, उसका जिक्र न करके हम भी राजा साहबको धन्यवाद देंगे—उनके ऐसे साधु-भावपर। मुसद्दसको सुनिए, उसीसे (आपको) सामग्री मिल जायगी।

४ एप्रिलको, हम दो महीनेके लिए गॉव जायँगे।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[६५]

जूही, कानपुर
३०–३–११

प्रिय बाबू मैथिलीशरणजी,

सुकवि-सङ्कीर्तन मईमे छपेगा। स्वर्गीय-संगीतका उठान अच्छा है। लिखिए। पूरा कर दीजिए। भेजा हुआ अंश जूनमे निकलेगा। ग्राम्य जीवन भी लिखिएगा। उसके जीवनको अधिक सचेतन करनेकी चेष्टा कीजिएगा।

राजा साहबका पत्र अपने पत्रोके ढेरमे हमने डाल दिया है। ढूँढ़ा, नही मिला। एक-एक चिट्ठी देखनेसे उसका पता लग सकेगा। जैसा कहिए किया जाय। राजा साहबकी सुरुचिकी हमने प्रशंसा की है। यह भी लिख दिया है कि मुसद्दसके सदृश कविता इस समय छापेगा कौन और

लेखककी रक्षा भी कौन करेगा। पं० गिरिधर शर्माकी कविताएँ आपने जल्दीमे देखीं। दो घंटे हमारे खर्च हुए। फिर भी मनकी नही।

दवाके बिगड़ जानेका दुःख है। अब कष्ट न उठाइएगा। फिर देखा जायगा।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[६६]

दौलतपुर
१९-४-११

आशीष,

१४ ता० का पत्र मिला। शकुन्तलावाली कविता छपनेके लिए भेज दी। उस पद्यमे "वंश-व्याधियों" पाठ ठीक रक्खा है।

मुसद्दसको किसी मौलवीसे जरूर सुनिए और समझिए। हरिगीतिका छन्द बुरा नही। कविता खूब ओजस्विनी और यथास्थान कारुणिक होनी चाहिए। सँभल-सँभल लिखिएगा। देरी हो तो हर्ज नहीं। नमूनेके लिए थोड़ी 'सरस्वती'मे पहले छापेंगे।

बुद्धको आपहीने अवतार माना है। वेदोंको भी आपहीने ईश्वर कृत मान रक्खा है। ईश्वरके यहाँसे इन विषयोमे कोई दस्तावेज हम लोगोके पास नहीं। जब यज्ञोमे पशुहिंसा अधिक होने लगी तब समझदार आदमी घबराये। वे सुधारकी बातें सोचने लगे। ऐसोमे बुद्ध सबसे बढ़कर निकले। उन्हें अपने काममे कामयाबी हुई। इससे वे अवतार मान लिये गये। पशुहिंसा कम हो गई। परन्तु पशुहिंसा वेदोक्त है। और वेद ईश्वर कृत माने गये हैं। अतएव उनकी प्रतिष्ठा अक्षुण्ण रखनेके लिए शंकराचार्यको बौद्धमतका खण्डन करना पड़ा।

दत्तका इतिहास सभासे मँगा लीजिए। उससे पुरानी बातें बहुत कुछ मालूम हो जायँगी। और कोई पुस्तक हिन्दीमे नहीं। राजस्थानके आदिमे भी कुछ हाल है।

सुलोचनावाली कविताकी हस्तलिखित कापी यहाँ हमारे पास नही। नहीं कह सकते क्यो हमने परिवर्तन किया। छन्दोभंग नहीं है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[६७]

दौलतपुर
२७-८

आशीष,

'भारत-भारती'का कोई अंश (२०-२५ पद्य) सरस्वतीमे छपनेके लिए भेजिए।

३ सितम्बर तक कानपुर जानेका विचार है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[६८]

उत्तरमें निवेदन

यहा हमारे पास कोई पुस्तक नही जिससे पारसियोके आनेका समय बतावें। कैफीका कहना ठीक है। मुसलमानोने पारसियोपर अत्याचार आरम्भ किया—मरो या मुसलमान बनो। बहुत थोड़ेसे पारसी अत्याचार से पीड़ित होकर हिन्दुस्तानको भाग आये। उन्हे शायद गुजरातके किसी हिन्दू राजाने शरण दी। ३ सित० को कानपुर जानेका विचार है। वहाँ किताबे देखकर सही-सही हाल लिख सकेंगे।

२८-८-१२ म० प्र० द्वि०

[६९]

जूही, कानपुर
८—९—१२

आशीष,

'भारत-भारती'की समाप्तिका समाचार सुनकर बड़ी खुशी हुई। फुरसतमे दुहरा-तिहरा कर छपाइएगा। फ़ारसमे पहले पारसियोका राज्य था। तीसरे ईसदीगिर्द राजाके समयमे अरब लोगोने उस पर चढ़ाई की और उनके मन्दिर आदि तोड़-फोड़ डाले। मरो या मुसलमान हो—यही शर्त थी। लाखो पारसी मारे गये। करोड़ो मुसलमान हो गये। हजार पॉच सौ बच रहे। हज़ारो भारतकी तरफ़ भागे। करोडो मुसलमानोने पीछा किया। भारत पहुँचते-पहुँचते बहुत थोडे रह गये। यहा वे खंभात की खाड़ीमे ड्यू (Deu) नामके बन्दरगाहमे उतरे। १९ वर्ष वहा रहकर वे संजान नामक नगरको ७१७ ई० के लगभग आये। वहॉ उस समय यादव राना नामक हिन्दू राजा था। उससे रक्षाकी प्रार्थना की। उसने प्रार्थना स्वीकार की और संजानमे पारसियोको बसने दिया। संजान इस समय उजाड़ है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[७०]

बरेली
२९—९—१२

आशीष,

आपकी तबीअतका हाल सुनकर दुःख हुआ। ईश्वर कुछ मुझसे ऐसा रूठा है कि वह मेरे सहायक मित्रोको भी नीरोग नही रहने देता। मेरा

चित्त बहुत विषण्ण था। इससे ४-५ दिनके लिए बाहर घूमने निकल आया हूँ। पहली अक्टोबर तक कानपुर लौट जाऊँगा।

विनयकी कविता आप सीधे प्रेसको भेज दीजिएगा।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[७१]

जूही, कानपुर
२३-१०-१२

आशीष,

शुकलाल पाडेकी कविता मिली। आपने बड़ी कृपा की जो इसका संशोधन कर दिया। 'भारत-भारती'मे हेडिंग्स हो तो सब कही हो। न हो तो कही नही। बेहतर तो यही है कि हेडिंग्स आप सर्वत्र कर दीजिए।

शुभैषी
म० प्र० द्वि०

[७२]

जूही, कानपुर
११-११-१२

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। चिट्ठी मिली। वह मासिक पुस्तक भी मिल गई। बड़ी कृपा होगी, नया काव्य बनाकर भेजिए। जनवरीसे छापूँगा। प्रतिज्ञाबद्ध होना अच्छा नही। जनवरीमे उस काव्यका प्रथमाश छापकर उसी सख्यामे जो कुछ लिखना होगा, लिख दूँगा। नही जैसा कहिए, करूँ। सियारामशरणजीका काव्य भी भेजिएगा।

कल मुरादाबादके पं० ज्वालादत्त शर्मा आये थे। बडे काव्य-प्रेमी और रसिक हैं। आपकी कविताओकी बड़ी प्रशंसा करते थे। अपने पिताके

सम्बन्धमे श्रीधरजीकी लिखी विशेषणावली छापनेके कारण मुझे बहुत फटकारा।

पण्डित रामजीलालने इण्डियन प्रेस छोड़ दिया। वहीं निजका छापाखाना किया है।

शुभैषी
म० प्र० द्वि०

[७३]

जूही, कानपुर
२७-११-१३

श्रीयुत मैथिलीशरणजी,

जयद्रथ-वधकी जिल्द-बँधी कापी मिली। बड़ी सुन्दर जिल्द है। जिल्दपर जो फूल या चक्र है उसे देखनेसे आपके मोनोग्राम (नामाक्षरो) का भ्रम होता है। कल एक कार्ड आपको भेज चुका हूँ।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[७४]

दौलतपुर
२१-१२-१३

आशीष,

१७ ता० का कार्ड मिला। बौद्ध-धर्मविषयक आपका अनुवाद अवश्य प्रकाशित करूँगा। उसके नीचे मैंने अभी तो आपका ही नाम लिख दिया है। जो कल्पित नाम आप देना चाहे बताइए। मैं वही लिख दूँगा।

शुभाध्यायी
म० प्र० द्विवेदी

[७५]

दौलतपुर
२४–१२–१३

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। पाञ्चाल पण्डिताकी कापी मिली। वे पद्य तो मेरे ही लिखे मालूम होते है। पर कब और कहाँ छप चुके हैं, याद नहीं। लाला देवराज को लिखता हूँ कि इस कवियित्रीके कान पकड़े।

७, ८ जनवरी तक कानपुर लौट जानेका विचार है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[७६]

जूही, कानपुर
३१–१०–१३

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी,

टालस्टायका वह अधूरा पत्र मेरी समझमे पत्रावलीमे रखने योग्य नही। तरुदत्तके फ्रेंच भाषाके पत्रका पता मुझे मालूम नही।

स्वामी रामतीर्थ नामक पुस्तकके प्रथम भागमे उनका कोई पत्र नही। इसीकी समालोचना 'सरस्वती'मे निकली है।

लाहौरमे एक महाशय औरंगजेबके पत्रोका अनुवाद हिन्दीमे कर रहे है। उनका नाम और पता है :—हरिवल्लभशर्मा बी० ए०, मूलचन्दकी कोठी, अनारकली, लाहौर। सरस्वतीमे छपाने कहते है। मैने नमूनेका एक पत्र माँगा है। इन पत्रोंमे दो-एक आपकी पत्रावली योग्य अवश्य होगे। मुझे मिले तो मै आपको भेज दूँगा। बेहतर होगा आप इनसे स्वयं पत्र-व्यवहार करे।

विवेकानन्दके जो पत्र पुस्तकाकार हिन्दीमे निकले है, उनमेसे एक आधको लीजिए। शायद पं० लक्ष्मीधरने उनका अनुवाद किया है। मेरे पास पुस्तक नहीं आई। पं० श्रीधर पाठककी कविताकी कल्लोलोंसे 'मर्यादा' उमड़ रही है। हालकी संख्यामे तीन कविताएं निकली हैं। उनकी जैसी कविता होती है वैसी ही ये भी है। सरस्वतीका पद्य भाग अब बहुत ही कमजोर हो चला है। हमारी दौड़ सिर्फ आप तक है। आप न लिख सकें तो बा० सियारामशरण ही को तैयार कीजिए। हर महीने एक उनसे भिजवाइए। परसोंसे मुझे जुकाम है। ज्वराश हो रहा है। आशा है आपकी तबीअत अब सुधर चली होगी।

शुभैषी
म० प्र०

[७७]

जूही, कानपुर
१६—१—१४

प्रियवर मैथिलीशरणजी,

आशीष। बाबू वृन्दावनलालका पत्र पढ़ा। मुझे इतनी गालियाँ दी; उससे मेरा क्या बिगड़ा? करने दीजिए समालोचना, देने दीजिए गालियाँ। उस भावी समालोचनाका उत्तर जनवरीकी सरस्वतीमे पहले ही निकल जायगा। "सभ्य समालोचक" कविता पढिएगा। आप एक हफ्ते तक और काम बन्द कर दीजिए। अन्योक्तिपरक एक खूब चुटीली कविता लिखिए। उर्दू-मिश्रित भाषामे। उसमे इन लोगोकी खबर लीजिए तो अच्छा हो।

आपके मित्रकी दोनो आख्यायिकाएँ छापनेके इरादेसे रख ली है। अवनीतलबद्धतिशील—वैसे ही रहने दिया है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

गोपनीय

उस गालीगलौजके लेखक है शिवसागर पाण्डे एम० ए०, एल-एल० बी०, म्यूरकालेजके एक अध्यापक। कानपुरके रहनेवाले २५ वर्षके विद्वान्। मेरे पूर्व मित्र जो मेरी बीमारीके समय मेरी जगह—सम्पादककी—मॉगते थे।

[७८]

जूही, कानपुर
१७—२—१४

आशीष,

दक्षिण अफरीका, कनाडा और आस्ट्रेलियामे भारतीय प्रवासियो और निवासियोकी जो दुर्दशा हो रही है, आप जानते ही है। उस विषय पर दो एक कविताएँ लिखिए। समय-सूचकता बड़ा भारी गुण है। समयानुकूल कविताका बड़ा असर होता है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी.

[७९]

दौलतपुर,
भोजपुर, रायबरेली
१८—४—१४

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी,

मै यहॉ कल आया। पैकेट, आपका भेजा हुआ, परसो कानपुर ही मे मिल गया था।

अहिल्याबाईका पत्र बहुत पसन्द आया। बडे महत्त्वका है। यह तो और भी बड़ा होना चाहिए था। विचार-विस्तारके लिए बहुत जगह थी।

मईकी स०मे छापूँगा। नीचे लिखे अनुसार उसमे शोधन करना चाहता हूँ। ठीक न हो तो आप कर दीजिए :—

१. पद्य २ पंक्तिया २—३ विख्यात वीरे करते जिससे विरोध होता किसे—

२. पद्य ३ चरण ३—दूँ आपको अब न जो शत साधुवाद।

३. पद्य १३ चरण १—वीराग्रगण्य यह भी अब सोच लीजे।

४. पद्य १५ चरण ४—फिर सोचिये किसलिए इतना अनर्थ।

पद्य ५ मे—है भूलते सुमति भी सब एक बार—यह खटकता है। कोई नियम नही कि सभी सुमतिवाले भूलें और एक ही दफ़े भूलें।

पद्य ६—सैन्य शब्द पुलिग हो तो अच्छा।

पद्य ९—डरना किस पापसे चाहिए।

कविता छपने भेजता हूँ। संशोधन करना हो तो पद्योका हवाला देकर लिख भेजिए। वही पत्र प्रेसको भेज दूँगा। व्यायोगका अनुवाद अच्छा है। सही है। पद्य भाग तो बहुत ही अच्छा है। आपने पद्यमे मूलका बड़ी हठतासे अनुसरण किया है। यह ठीक नही। उसके शब्दार्थ की परवाह न करके उसके भावोका ही अनुवाद होना चाहिए। वह भी बामुहाविरा हिन्दोमे। जितं जितं का आप जीते आप जीते—हिन्दीका मुहाविरा नही। गद्यकी हिन्दी इसी कारण बहुत क्लिष्ट हो गई है। मुनासिब समझिए तो गद्य भागका संशोधन कर दीजिए। दो ही चार घंटेका काम है। सरल बामुहाविरा हिन्दी कर देनेसे बड़ी अच्छी पुस्तक होती। मै स०मे छापूँगा। जितनी कापियाँ दरकार हो पुस्तकाकार ले लीजिएगा।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[८०]

दौलतपुर

२७-४-१४

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण गुप्त,

२३ का पत्र पहुँचा। अहिल्याबाईके पत्रमे इस प्रकार संशोधन कर दिया:—

पद्य ५—जो भूल हो उचित है उसका सुधार।

पद्य १५—तो सोचिए किसलिए इतना अनर्थ।

पद्य ६—सैन्य स्त्रीलिंग ही रहने दिया।

पद्य ६—'पापको' भी रहने दिया।

पद्य २-३-१३ मे अपने किये संशोधन रहने दिये।

पद्य १५ मे 'तो' की जगह 'फिर' करना मेरी भूल थी। मेरा बुद्धि-वैकल्य अब दिन पर दिन बढ़ रहा है।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[८१]

दौलतपुर

२५-७-१४

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी,

२२ का कार्ड और २३ का पत्र मिला। कविता और गीत पहुँचे, बड़ी कृपा की। धन्यवाद।

जायसवालजीकी जाति क्या है, यह बात पाटलिपुत्रके मालिकसे छिपी न थी। यदि वे ब्राह्मण ही चाहते थे तो जायसवालजीको पहले ही क्यो रक्खा। असल बात क्या है सो हम लोग नही जान सकते।

शिवाजी पर जो काव्य संस्कृतमे है उसका नाम शायद शिव-विजय है। बहुत वर्ष हुए तब पढ़ा था। मेरे संग्रहमे था। परन्तु जब वह लेख लिखने लगा, जिसका कि आपने हवाला दिया है, तब ढूँढ़ा तो न मिला। शायद कोई ले गया। मराठीवाली पुस्तक है। उसका पता कानपुर पहुँचकर लिखूँगा।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[८२]

दौलतपुर
२९—७—१४

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी,

२५ का पत्र मिला। साहित्य-सम्बन्धी कवितामे अभिज्ञका अविज्ञ कर दिया। शकुन्तला कविताके हेडिंगके नीचे "जन्म और बाल्यकाल" लिख दिया।

कालिदास नामकी पुस्तकमे तो नहीं, पर शकुन्तलामे शायद आपके मतलबकी बातें मिलें। बहुत समय हुआ इसे पढ़े। ठीक याद नही। पर पुस्तक बहुत अच्छी है। ज़रूर मँगाकर पढ़िए। कविता लिखनेमे काम न आवे न सही। निर्भयभीमव्यायोग भेजनेकी अब जल्दी नही। सावकाश भेजिएगा। गद्य भाग ठीक हो जाने पर।

जायसवालजीकी लीला जानी जाने योग्य नही। *

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

* स्व० डॉ० के० पी० जायसवालसे आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी-

[८३]

दौलतपुर

१३–८–१४

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

८ अगस्तके पाटलिपुत्रमे आपकी कविता पढी। वही दूसरे कालममे बैरिस्टर साहबका* नोट पढ़ लीजिएगा। † ग्रन्थ मालाकी समालोचनासे मतलब है। शायद दूधके नाम पानी और अनुवादकर्त्ताकी धूलभरी बुद्धिका चरणोदक आपने भी पिया है। पिया हो तो पिलानेवालेको पाटलिपुत्रके जजके सिपुर्द करके सजा दिलाइए।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[८४]

जूही, कानपुर

१९–८–१४

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण गुप्त,

२१ का कार्ड समय पर मिल गया था। लेख भी मिल गया। जिस महीनेकी 'सरस्वती'मे कहिए उसी महीनेमे छापूँ।

जीका १९०३ से मतभेद था। यह मतभेद जायसवालजीके किसी लेखको लेकर था। मतभेद सम्बन्धी जायसवालजीका १९०३ का पत्र द्विवेदीजीके नागरी प्रचारिणी सभावाले संग्रहमे है, जिसे मैंने देखा है।

*के० पी० जायसवाल।

† प्रकाशन-संस्थाका नाम जानबूझकर हटा दिया गया है। मूल पत्रमें सुरक्षित है।

मौर्य्य विजयकी कापी भी मिल गई। थैंक्स।

आर्टका समानार्थकवाची शब्द संस्कृतमे मुझे ढूँढ़े नही मिलता। शिल्प, शिल्प-चातुर्य्य, कला, कलाकौशल, कारीगरी आदि कह सकते हैं।

'भारत-भारती'की समालोचना पर बैरिस्टर साहबने मुझपर जो पुष्प-वृष्टि की है सो आपने देखी ही होगी। न देखी हो तो भेजूँ। मुझे एक अपमानसूचक कार्ड भेजा है कि तुमने हरप्रसाद शास्त्रीको "गाली" दी। बाबू सीतारामने नालिश भी की है। मै चुप हूँ। न उत्तर दिया, न 'सरस्वती'मे कुछ लिखनेका विचार। यह घमण्डाचार्य्य त्रिलोकके विद्वानोको अँगूठेपर रक्खे घूमता है।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[८५]

जूही, कानपुर

३१-८-१४

आशीष,

"उत्तर" वाली चिट्ठी और इसके साथ "दुबे" वाला कार्ड दोनों चीजें मिल गईं। आपके घरकी बीमारीका हाल सुनकर बड़ा दुःख हुआ। न मालूम कैसी बीमारी है, अब तक नही दूर हुई। मैं आपके दुःखका अच्छी तरह अनुमान कर सकता हूँ। मैने तो कोई पुण्यकार्य किया नहीं। इससे ईश्वरसे बहुत दूर हूँ। तथापि उससे मेरी प्रार्थना है कि वह आपकी चिन्ताको शीघ्र दूर करे।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[८६]

दौलतपुर

१५-१२-१४

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

१३ का पोस्टकार्ड मिला। २५०) की बात मैने किसी पत्रमे नहीं पढ़ी। किस पत्रमे छपी है? जो लोग सम्मेलनमे गये थे वे अलबत्ते मुझसे कहते थे और माँगनेवालेकी "निष्काम हिन्दी सेवा" की तारीफ़ करते थे। सम्भव है, यह अफवाह झूठ हो।

आर्य्य-समाजी अब मेरी नालायकी, खुशामद और पक्षपात यह लिख-लिखकर साबित कर रहे है कि नाथूराम शङ्करकी कविताको, जो आपकी कवितासे बढ़कर है; मैंने सिर्फ़ "खासी" कह दिया और आपकी कविताकी तारीफ़ मे कलेजा निकालकर रख दिया।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[८७]

दौलतपुर

१९-११-१४

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। १५ और १८ दिसम्बरके कार्ड मिले। रवीन्द्रबाबूकी कविताका अनुवाद चाहे गीतोमे चाहे अन्य पद्यमे। गद्यमे नहीं। आपको फ़ुरसत न हो तो भाई साहब ही को करने दीजिए। "नैवेद्य" से भी कुछ अनुवाद होना चाहिए।

हिन्दी समाचार भेजनेकी ज़रूरत नहीं, "दास" महाशयके औदार्य्य की मुझे पूरी थाह है। आर्य-समाजियोको कुत्सा करने दीजिए। उनके

कारण मैं अपने कर्त्तव्यसे च्युत नहीं हो सकता। सर्वानन्दजीकी भी पूरी कृपा है, वे आपको "ऊँचे दरजेका कवि" और मुझे अपना "गुरु" कह चुके हैं। तथापि इस समय वे और ही पाशमे बँधे हुए है।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[८८]

जूही, कानपुर
१५-१-१५

आशीष,

जनवरी १५ के (कलकत्तेके) मार्डन रिव्यू (Modern Review) मे औरंगजेबके ऐतिहासिक पत्र पढिए।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[८९]

जूही, कानपुर

२०-३-१५

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। १९ का कार्ड मिला। कविताका नमूना मुझे पसन्द है। पूरी करके भेजिए। कोई बात समय और सरकारके विरुद्ध न रहे। इशारा भी न रहे। कल नया कानून बना है। कानून क्या मार्शल्ला—जंगी कानून—है। फासी तक की सजा है।

कविताके सम्बन्धमे आप जो लिख रहे थे उसका क्या हुआ। वह बहुत सामयिक होती। उसे पहले भेजना चाहिए। बिना आपकी कविता के 'सरस्वती' फीकी रहेगी। इसका ख्याल रखिएगा।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[९०]

उत्तरका संक्षेप

'भारत-भारती' इस प्रशंसाके योग्य नही तथापि आप जैसे महानुभावो के वाक्य मेरे लिए बहुत कुछ-उत्साहवर्द्धक है ।

आप अपनी सबसे अच्छी कविता-पुस्तककी एक कापी वी० पी० द्वारा मुझे भेजिए। साथ ही भा० भा० के १० प्रारम्भिक पद्योका गुजराती अनुवाद भी भेजिए। इस सामग्रीको देखकर मै अपने निश्चयकी सूचना आपको दूँगा।

इनके आ जाने पर आप इन्हे पं० बदरीनाथ भट्टको भेजिएगा। वे गुजराती काव्यके अच्छे ज्ञाता है। यदि वे कहें कि अवस्थी जी अच्छे और प्रसिद्ध कवि हैं, तो अनुवाद करनेकी अनुमति दे दी जाएगी। Royalty उनको देनी पडेगी। शर्तें पीछेसे तै हो जायॅगी।

कल कान्यकुब्ज स्कूलका जलसा था। लड़कोने भा० भा० के अन्त का गीत गाया। श्रोता गद्गद हो गये। बड़ी खुशी हुई। ऐसे समयोचित गीत दो-चार और लिख डालिए।

२२-३-१५ म० प्र० द्वि०

[९१]

जूही, कानपुर
१६-४-१५

प्रिय मैथिलीशरणजी,

आशीष। चिट्ठी मिली। तिलोत्तमाकी कापी भी मिली। मेरी तबीअत आठ रोजसे अच्छी नहीं। नींद बहुत कम आती है। चित्त उदासीन रहता है। काम नहीं होता। तबीअत सुधरने पर तिलोत्तमा देखूँगा।

आठ-दस दिन बाद गाँव जानेका इरादा है। वे कौन साहब हैं जिन्होंने रद्दी भरकर आपको धोखा दिया। आपका इसमें क्या अपराध, अपने ही कर्म्मोंसे वे जल गये। आपके भाई साहब अबतक नहीं आये। मिलने पर उन्हें "बङ्ग भाषा" दे दूँगा। फाल्गुनके बादका 'भारतवर्ष' नही आया। अगली कापियाँ भेजनेके लिए लिखता हूँ। आप न भेजिएगा।

बार्हस्पत्यको न अब मैं कभी उस विषयमे लिखूँगा न आप लिखें। मैंने चुना चुनी एक चिट्ठी लिखी थी। उत्तर आया कि बहुत पढ़ने-लिखनेसे दृष्टि खराब हो गई है। कुछ नही लिख सकता। पेंशन लेनेके बाद लिखूँगा। जब वे पेंशन ले लें तभी आप उर्म्मिला लिखें। उसके पहले शायद उसे पढ़नेकी फुरसत ही न मिले।

मोटो कोई प्रूफ पढ़ा तो बताऊँगा। मोटो आप ही चुनिए तो अच्छा हो। जितने आपने चुने है सब अच्छे है।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[९२]

दौलतपुर

२५—५—१५

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण गुप्त,

आशीष। कृषक कथाकी कापी मिली। तीन नही, तो दो महीनेके लिए ज़रूर काफ़ी होगी। जूनकी 'सरस्वती' कम्पोज हो रही है। अब यह कथा जुलाईसे निकलेगी, 'फीज़ी'का हाल इससे निकाल दिया, यह बहुत अच्छा किया। ज़माना फिर नाजुक आ गया है।

छन्द बदलनेकी अब ज़रूरत नहीं। लक्ष्मीको न पढ़ना ही अच्छा है। सिकन्दर और उस योगीपर अवश्य लिखिए। विषय बड़ा ही हृदयाकर्षक है।

हम्मीरकृत चित्तौड़के उद्धारपर भी नाटक लिखिए। यह भी अच्छा विषय है, आशा है, बाबू सियारामशरणकी तबीअत अब अच्छी होगी।

मैंने अपना हाल आपको नहीं लिखा। मेरा कौटुम्बिक जीवन विषमय हो रहा है। मेरे शरीरकी रक्षा करनेवाला कोई नहीं। जिनको मैंने अपना कुटुम्बी बनाया है वे मुझे फलवान् वृक्ष समझकर डंडो और ईंटोकी मारसे शीघ्र ही कच्चे, पक्के फल गिराकर हड़प कर जाना चाहते हैं।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[९३]

दौलतपुर

२–६–१५

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। इन नीचोंकी बातोंपर ध्यान न देना चाहिए। जो लोग १६ हजार रुपया दे डालनेकी शक्ति मुझमे समझते है वे पागलके सिवा और कुछ नही। डरानेके लिए आप चाहे एक नोटिस भले ही भेज दें। और कुछ करनेकी जरूरत नही। इस महात्माने कई दफ़े मुझे धोखा दिया है। लिखें आप, नाम नीचे दे दे स्त्रीका।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[९४]

दौलतपुर, रायबरेली

१८–६–१५

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरण गुप्त,

आशीष। कार्ड मिला। व्रजाङ्गनाकी कापी भी मिली। मुझे तो छपाई पसन्द है। मात्राएँ ज़रूर टूटी है, पर पढ़ा जा सकता है। इस

पुस्तककी जो-जो कविताएँ 'सरस्वती'मे नहीं निकलीं उनके नाम लिख भेजिए। मौका मिला तो 'सरस्वती'मे छापूँगा। कृषक कथाका अर्धांश जुलाईमे छपने भेज दिया।

हम्मीर आदि लिखना शुरू कर दीजिए, विषय माकूल है। कल एक गॉव गया था। जनेऊ था। एक बिगडे दिल ब्रह्मचारी मिले। शिक्षित है। गंगातटपर एक ब्रह्मचर्याश्रम खोल रक्खा है। आपके बडे भक्त है। सारी भा० भा० कण्ठाग्र है। कहते थे—रोज़ गीताकी तरह उसका पाठ करता हूँ और शिष्योंसे कराता हूँ। कोई ५०० आदमियोका मजमा था। अनेक लोग उनमे शिक्षित थे। भा० भा० के कितने ही अंश गाकर उन्होंने सबको मुग्ध कर दिया। मुझे जो खुशी हुई उसकी सीमा नहीं।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[९५]

जूही, कानपुर
१–४–१६

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। पत्र मिला। रजिस्टर्ड पैकेट भी आ गया। 'तिलोत्तमा' बहुत ही अच्छी छपी। जैसी सुन्दर छपाई है वैसा ही सुन्दर जिल्द और काग़ज है।

'साकेत'के दोनो सर्ग धीरे-धीरे अवकाशानुसार पढ़ूंगा। तब आपकी बातोका उत्तर दूँगा। मेरी राय है कि आप इस विषयमें मुझसे अधिक ज्ञान रखते है। रामायणकी ग्रन्थिल बातोपर मैने कभी विचार नहीं किया।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[९६]

जूही, कानपुर
१४—४—१६

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। पद्य-प्रबन्धके दूसरे संस्करणकी कापी मिली। थैंक्स।

'साकेत' देखनेके लिए अब तक समय नही मिला। अब शीघ्र ही देखूँगा।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[९७]

जूही, कानपुर
२२—४—१६

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी गुप्त,

आशीष। १९ की चिट्ठी मिली। हो सका तो 'साकेत'के दोनो सर्ग दो ही अङ्कोमे छाप दूँगा। नही तो आपके लेखानुसार एक-एक अङ्कमे आधा आधा छापूँगा।

अभी मै कुछ भी संशोधन न करूँगा। पुस्तकाकार छपानेके पहले जब आप पुस्तकको दुहरावें तब उचित संशोधन कर दीजिएगा।

एक ही छन्दका दो, तीन, चार सर्गोमे भी महाकवियोने प्रयोग किया है। आप भी ऐसा ही करें। जो छन्द खूब मंजे हुए हो उनका प्रयोग अधिक कीजिए। "क्षमा छाया तले नत था, निरत था"—यह छन्द बुरा नहीं। "वह पारायण, हे नारायण"—भी मजेका है। "पर श्री कमला-सी कल्याणी"—पढनेमे अच्छा नही लगता। वसन्त-तिलका, वंशस्थ, उपजाति, इन्द्रोपेन्द्रवज्रा, द्रुत०, शिखरिणी आदि भी रखिए। पर रखिए

वही जो आसानीसे बन जायँ और पढ़नेमे अच्छी मालूम हों। गणवृत्तोकी अपेक्षा मात्रावृत्त बनानेमे कम परिश्रम पड़ेगा। क्यो न एक सर्ग सवैया छन्दमें लिखा जाय?

मेरा इरादा १ मईको दौलतपुर जाने का है।

शुभाकांक्षी
म० प्र० द्विवेदी

[९८]

जूही, कानपुर
२९–४–१६

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। सुहाग शब्दका जो भाव है (हिन्दीमें) वह सौभाग्यसे ठीक-ठीक व्यक्त नहीं होता। इस कारण भाग-सुहाग पाठ सुख-सौभाग्यसे अधिक उपयुक्त है।

भाग-सुहागकी जगह सुखद-सुहाग भी हो सकता है। जो पद्य आपने लिखा उसका दूसरा चरण मुझसे ठीक पढ़ते नहीं बनता। गति ठीक है न?

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[९९]

जूही, कानपुर
१७–४–१७

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी गुप्त,

आशीष। १४ का कार्ड मिला। अर्जुनके तरकसके विषयमें आपका बताया आशय ही ठीक है:—

"सर्वदा सर्वदोऽसीति त्वं मिथ्या कथ्यसे बुधैः।
नारयो लेभिरे पृष्ठं न वक्षः परयोषितः॥"

और कुशल। ८, १० रोज़ बाद दौलतपुर जानेका विचार है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१००]

दौलतपुर, रायबरेली
६—५—१७

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी गुप्त,

आशीष। वैतालिक नाम बुरा नहीं। यही रहने दीजिए। पद्य कोमल और भाव बहुत ऊँचे हैं। पुस्तिका छपने योग्य है। छपा डालिए।

यहाँपर मेरे असिस्टेण्ट नहीं। कापी करनेके लिए मुझे समय नहीं। यदि कोई लेखक कभी आपको मिल जाय, तो १०, १५ पद्य लिखाकर भेज दीजिएगा। चुन-चुनकर जो बहुत अच्छे हो वही भेजिएगा। कापी लौटाता हूँ।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

****

राय कृष्णदास

राय कृष्णदास काशीके प्रसिद्ध राय खानदानके है । ये प्रसिद्ध राजा पट्टनीमलके वशज है । इनके पिता राय प्रह्लाददास भारतेन्दुजीके भांजे थे । ये काशीके प्रसिद्ध रईसोमे थे । सस्कृत और हिन्दी साहित्यमें इनकी विशेष रुचि थी ।

राय कृष्णदासजीका जन्म काशीमें सं० १९४९ मे हुआ । इनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई । १२ वर्षकी अवस्थामे ही इनके पिताकी मृत्यु हो गई । बचपनसे ही कला और साहित्यकी ओर इनकी विशेष रुचि थी । अपनी विपुल सम्पत्तिके ये मालिक भी थे । अतः थोड़े समयमे ही इनका साहित्य-जगत्के प्रसिद्ध व्यक्तियोसे सम्पर्क और सम्बन्ध हो गया । इस कारण इनकी कलात्मक प्रतिभा का तेजीसे विकास हुआ । हिन्दीके कहानी-साहित्य और गद्य-काव्यके क्षेत्रमें इनका अपना स्थान बन गया ।

राय कृष्णदासजी चित्रकलाके अपूर्व पारखी हैं । चित्रकलाका ऐसा मार्मिक आलोचक हिन्दीमें दूसरा नही है । भारतीय मूर्तिकला के भी यह प्रथम श्रेणीके विद्वान् हैं । कलाके प्रत्येक क्षेत्रमें आपकी दृष्टि सधी है । वस्तुत. कलाकी आराधनामे ही इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन लगा दिया । अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति स्वाहा कर दी । 'भारतकला भवन' इनकी सम्पूर्ण साधनाका रूप हैं ।

****

इनकी रचनाएं इस प्रकार हैं :—

१. गद्य काव्य—साधना, छायापथ, संलाप, प्रवाल ।

२. कविता-संग्रह—भावुक ब्रजरज ।

३. कहानी-संग्रह—अनाख्या, सुधांशु, आंखोंकी थाह ।

४. कलाकी आलोचना—भारतीय चित्रकला, भारतीय मूर्ति-कला, भारतीय चित्रकला पर एक वृहद् ग्रन्थ अभी अप्रकाशित है ।

५. चित्र-चर्चा [अप्रकाशित] ।

६ इतिहास—इक्ष्वाकु वंश, भारतीय संगीत कला अभी अप्रकाशित है ।

राय कृष्णदासजीका पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीसे घनिष्ठ सम्पर्क था । उनके पास द्विवेदीजीके बहुतसे पत्र हैं । उन पत्रोंमेसे छाँटकर कुछ पत्रोंको यहाँ दिया जा रहा है ।

[१०१]

लखनऊ

१२–१–०९

प्रिय महाशय,

२–५–०६ का कृपा-पत्र मिला। काशीमे आपसे न मिलनेका हमें भी बड़ा रंज हुआ। जी हाँ, हम हरद्वार गये थे। वहाँसे डेढ़ महीने बाद अब लौट रहे हैं। कल कानपुर चले जाएँगे। संस्कृतमे दर्शक और द्रष्टा भिन्नार्थवाचक शब्द है। पर हिन्दी और मराठीमे दर्शक शब्द देखने वालेके अर्थमे भी प्रयुक्त होता है :—दर्शकवृन्द, दर्शक-मण्डली आदि उदाहरण है। मार्चकी 'सरस्वती' पास नही। नही मालूम उसमें क्या लिखा गया है।

निवेदक

महावीरप्रसाद द्विवेदी

[१०२]

जूही, कानपुर

२–१०–१०

आशीष,

कल शामको ८ बजे आपका तार मिला। उसका उसी क्षण उत्तर दिया कि मै १२ अक्टोबरके बाद आऊँगा। आज अभी ७ बजे आपका दूसरा तार आया। आपकी आज्ञा है—"Start within next week please"।

पाठकजीसे मै अपना हाल कह चुका हूँ। उनके चले जानेपर मुझे ज्वर आ गया। पर एक ही दिन आया। विशेष कष्ट नही हुआ तथापि कमजोरी है। मेरे एक मित्र लखनऊमे है। उनसे मैने वादा कर लिया है कि दुर्गापूजाके दिनोमे मै उनसे मिलने जाऊँगा और ३, ४ दिन उनके यहाँ रहूँगा। मेरा इरादा था कि मै ६ या ७ ता० को लखनऊ जाऊँ। १० को प्रयाग रहूँ। ११ को मिर्जापुर। बाद आपके यहाँ जाऊँ। आप कृपा करके यह लिखिए कि मेरे लिए काम क्या है? कल शाम तक आपको यह पत्र मिल जायगा। परसो उत्तर आप पोस्ट कर दीजिए। नरसो ५ को वह मुझे मिल जायगा। तब मै आपको अपना निश्चय सूचित कर दूँगा। मै सम्मेलनमे शरीक नहीं होना चाहता और न सम्मेलनके दिनोमे काशीमे रहनेकी इच्छा है। इसीसे मै उसके बाद आना चाहता हूँ। आपका उसके पहले ही बुलानेका क्या अभिप्राय है? सो साफ़ लिखनेकी कृपा कीजिए। यदि १२ ता० के पहले मेरे आनेसे आपका कोई काम हो सके जो कि बादमे आनेसे न हो सकता हो तो कृपा करके वैसा लिखिए। मै नही चाहता कि मै वहाँ आऊँ और लोग मुझे सम्मेलनमे जानेके लिए लाचार करे। सम्मेलनसे मेरा कोई विरोध या द्वेष नही। मै उसमे इसलिए शरीक नही होना चाहता कि सभाके भवनपर अहातेमे वह होगा और सभा हीके कार्यकर्त्ता उसके कार्यकर्त्ता हैं। जिस सभाने मुझे सभासे हटानेकी कोशिश की और जिसके मैंने इतने दोष दिखलाये, उससे मै अब सम्पर्क नही रखना चाहता। यह मेरी कैफियत आपके जाननेके लिए है, प्रकाशित करनेके लिए नही। आप अब अपनी कैफियत स्पष्टतापूर्वक लिखनेकी कृपा कीजिए। मै ६ ता० तक आपके पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१०३]

दौलतपुर,
डाकघर भोजपुर, रायबरेली
२६-४-१२

आशीर्वचांसि विलसन्तुतराम्

पत्र मिला। आपकी माताकी बीमारीका हाल सुनकर दुःख हुआ। ईश्वरको धन्यवाद है जिसने नैरोग्य प्रदान किया।

पं० कृष्णकान्त मालवीयजीके जो जीमे आवे करे। हमलोग अपना कर्त्तव्य यथाशक्ति करनेमे त्रुटि न करेंगे।

आप अपने चित्र औरोको तो देते है हमे क्यो नही देते ? दो-एक देनेकी कृपा कीजिए—शीघ्र।

इलियड आफ़ दि ईस्ट पर हमने क्या लिखा था याद नही। आप कुछ लिखिए जिससे याद आ जाय।

मथुरा-सम्बन्धिनी कालिदासकी भूलका उल्लेख 'सरस्वती'मे कर देंगे। निरङ्कुशताविषयक आपके मतभेदको हम प्रकाशित कर देंगे। शर्त यह है कि आप अवशिष्ट भूलोको भूल स्वीकार करें और उस लेखकी उपयोगिता और अनुपयोगिता आदिपर भी कुछ लिखें। आपके पत्रके साथ आपका कोई लेख नहीं मिला।

अभी कुछ दिन मेरा विचार यही अपने गॉवमे रहनेका है।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

[१०४]

दौलतपुर,
भोजपुर, रायबरेली
२८—४—११

आशीष,

मुझे इस लेखके छापनेमे जरा भी उज्र नहीं। पर मेरी राय है कि आप इसे अभ्युदय या हितवार्ताको भेज दें। ऐसा करनेसे इसका महत्त्व बढ़ जायगा। लोग जानते हैं कि मुझसे और आपसे स्नेह है। अतएव आपकी कृत प्रशंसा 'सरस्वती'मे जरा कम अच्छी लगेगी। एक बात और है। मईकी 'सरस्वती' छप चुकी। जूनकी निकलनेमे अभी सवा महीनेकी देरी है। अतएव तबतक इस लेखको ठहरना पडेगा। पूर्वोक्त पत्रोंमे भेजनेसे शीघ्र ही निकल भी जायगा और प्रभाव भी इसका अच्छा होगा। यदि आपको मेरा कहना अच्छा न समझ पडे तो रघुवंशके उन श्लोकोंको लिखकर लेख लौटा दीजिए। मै 'सरस्वती'मे ही छाप दूँगा। रघुवंश यहाँ मेरे पास नही। पुरानी 'सरस्वती' भी नही।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१०५]

दौलतपुर,
डाकघर भोजपुर, रायबरेली
३०—७—११

आशीष,

आपके दोनो कार्ड मिले। मै आपका बहुत कृतज्ञ हूँ। हितचिन्तनाके लिए अनेक धन्यवाद। मेरे कुटुम्बमे कोई दस आदमी हैं। वे सब मेरे आश्रित हैं। मै इस फिक्रमे हू कि कोई काम ऐसा करूँ जिससे उन लोगों

को कोई कष्ट न हो। उनकी जीविका चलती रहे। इसका प्रबन्ध हो जानेपर साहित्यके कार्यसे किनाराकश हो जाऊँगा। तबतक किसी तरह चलाना ही पड़ेगा।

शुभाध्यायी
म० प्र० द्विवेदी

[१०६]

Commercial Press
Cawnpore.
२२ फरवरी १९१२

आशीष,

कौटिल्य-कुठार मिल गया। पोस्टकार्ड भी मिला। आशा है आपकी तबीअत दिन पर दिन अच्छी होती जायगी।

मैंने अपने एक मित्रके साझेमे एक छोटा-सा प्रेस कर लिया है। अंगरेज़ी, हिन्दी, उर्दू तीनो भाषाओमे काम होता है। यदि आपका या आपके मित्रोंका मै कोई काम कर सकूँ तो याद कीजिएगा। कृपा होगी।

शुभैषी
महावीरप्रसाद द्विवेदी

[इसीके साथ]

लीजिए,

न्याय करो तो निबाह नही पै दया जो करो तो हया रहती है।

१६–३–१२ **म० प्र० द्विवेदी**

[१०७]

दौलतपुर, रायबरेली
२६–६–२०

आयुष्मान्,

पो० का० मिला। आम-काम कुछ न भेजिए। विपत्तिग्रस्त हूँ। १६ जूनकी रातको मेरे घर यहाँ चोरी हुई। नक़द, जेवर, कपड़े, बर्त्तन कोई २०००) का माल उठ गया। यहाँ और था ही क्या। १० रोज हुए न चोरीका पता न चोरोंका। जूता टोपी तक मेरी गई। धोती मात्र रह गई। नंगा बैठा हूँ। कुटुम्बियोंकी प्रायः यही हालत है। कानपुरसे पहननेके कपड़े मँगाने है। मै शान्त हूँ। संसार ही नाशवान है, चीज़-वस्तुकी कौन बात। पर कुटुम्बियोंको बहुत कष्ट हुआ है।

शुभानिध्यायी
म० प्र० द्विवेदी

[१०८]

दौलतपुर, रायबरेली
८ जुलाई २०

आयुष्मान,

आपके पत्रके उत्तरमे मैने एक पोस्टकार्ड भेजा था। कोई एक हफ्तेसे अधिक हुआ। उसमे चोरीका हाल भी लिखा था। उस समय चित्त क्षुब्ध था। इस कारण यदि कोई बात अनुचित लिख गई हो तो ख़याल न कीजिएगा।

आम भेजनेकी कोई ऐसी ज़रूरत नहीं। लेकिन मेरा मना कर देना यदि आपको खटके तो आप पारसल Takia station O. X. R.P. (Cawnpore—Rai Bareli Branch) को भेज दीजिए।

रसीद मुझे दौलतपुर। आम क़रीब-क़रीब कच्चे हो। पारसल मज़बूतीसे बँधा हो।

मेरे घरसे जो कपड़ा चोरी गया है उसमे बहुत-सी चीज़े काशीकी भी थी। उनमेसे कुछ लेनी पड़ेगी। कुटुम्बियोको उनके चले जानेका रंज है। आप कृपा करके अपने किसी जानकार मुलाजिमको बाजार भेजकर नीचे लिखी चीज़ोके दाम दरियाफ़्त करा लीजिए—

१—पीताबर रेशमी, नारंगी रंग, सफेद ज़री किनारी बारीक अंगुल डेढ़ अंगुल चौड़ी, पल्लुवोमे भी वैसा ही जरीका काम।

२—उपरना (दुपट्टा) नंबर (१) के सदृश।

३—पीताबर मामूली, रंग पीला, रेशमी किनारी (रंग लाल या नीला) किनारी पतली।

४—उपरना (दुपट्टा) नंबर (३) के सदृश।

५—साड़ी बनारसी, रंग कजई या और कोई खुशनुमा, ज़री किनारी, हल्की।

६—एक दुपट्टा काशी सिल्कका मामूली।

७—आसाम या ऐंडी सिल्क, एक कोटके लिए।

ये चीज़े मेरे सदृश मामूली गृहस्थोके योग्य जो हो उन्हीके दाम जानना चाहता हूँ। जियादह क़ीमती चीजोके नही।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[१०६]

दौलतपुर, रायबरेली
९—८—२९

बहुविध आशीष,

७ अगस्तका पोस्टकार्ड मिला। आपके कुटुम्बपर वज्रपात होनेकी

सूचना मुझे काशीसे बाबू मैथिलीशरणने समयपर दी थी। मैने उसी वक्त अपनी समवेदना-सूचक पत्री उन्हे भेजी, यथा बुद्धि सान्त्वना भी दी। शायद उन्होने इसकी खबर आपको दी हो।

मै भुक्तभोगी हूँ। अपने अनुभवसे जानता हूँ कि आपपर क्या बीती होगी और अब भी आपके मनकी क्या दशा होगी। यह रोग समझाने-बुझानेसे नही जाता। इसका कुछ इलाज यदि किसीके हाथमें है तो समयकी गतिके हाथमे है। संसार छोड़नेसे छूटता नही। सैकड़ो प्रकारके मायाजाल या बन्धनोसे मनुष्य जकड़ा हुआ है। विरक्ति काम विरलो हीके आती है। जो दशा हो उसीमे समाधान माननेके सिवा और कोई उपाय नही। मुझपर जो बीत रही है मै ही जानता हूँ। पर उसके विलेखन और तदर्थ रोदनसे क्या लाभ?

एक बात आपकी मुझे खटकी। "कभी-कभी अवश्य स्मरण कीजिए"। यह ठेना क्यो? सत्तरके घर-घाट मै आपका स्मरण करूँ और कलके बच्चे आप मुझ जरठ, अपाहिज, अशक्त और मरणोन्मुखका स्मरण न किया करे! यह कहाँका न्याय है? बूढ़ोका सहारा या अन्धोकी लकड़ी तो बच्चे ही होते हैं।

काशीमे कई पुस्तक-प्रकाशक है। मेरे फुटकर लेखोके कई संग्रह मेरे पास है। विषय भिन्न-भिन्न है। मुनासिब उजरत देकर कोई छापे और प्रकाशित करे तो बताइएगा। १५, २० पुस्तके निकल गई। कुछ ही बाकी है।

शुभाकांक्षी
म० प्र० द्विवेदी

[११०]

दौलतपुर, रायबरेली
२७—८—२९

शुभाशिषः सन्तु

चिट्ठी २३ अगस्तकी मिली। अच्छा तो आप भी पुस्तक-प्रकाशक बन गये। आशा है काम अच्छा चलता होगा। मेरे लेख-संग्रहकी कोई १६ पुस्तकें तो छप गईं। कोई ८ छप रही है। ६ बाकी हैं। उनके नाम आदि अलग काग़ज़पर इसी लिफ़ाफ़ेमे मिलेंगे।

वाद-विवादवाले लेख वाग्विलास नामक पुस्तकमे गये। वह दरभङ्गा (लहेरियासरायवालो) ने ले ली है। बहुत-सी समालोचनाएँ नं० ६ पुस्तकमे है। आर्य्य-समाजका कोप वग़ैरह लेख और छोटे-छोटे नोट विचार-विमर्शमे है। उसके आठ खण्ड या अध्याय है।

कुछ प्रकाशकोने मुझे धोखा दिया है। साहित्यालाप नामक पुस्तक खड्गविलास प्रेसने छापा है। छपे ५ महीने हो गये। ५००) से ऊपर उनसे पाना है। पर चिट्ठीका जवाब तक नही देते। आपकी जान-पहचानका वहाँ कोई हो तो उसकी मारफ़त उलाहना दिलाया जाय।

मेरी पुस्तके यो ही सरपटकी है। विशेष बिक्री होनेकी संभावना नही। छापनेसे कही आपको घाटा न हो।

जिन पुस्तकोके नाम मैं भेज रहा हूँ उनमेसे कुछ मतवालावालोने माँगा है — साहित्य-सीकर आदि। कुछके विषयमें प्रयागके बाबू रामनारायणसे लिखा-पढ़ी हो रही है।

आपकी प्रकाशित पुस्तके बड़े महत्त्वकी हैं। जो मुझे भेजीं उनके लिए मैं कृतज्ञ हुआ। भैय्या, मैं अब १०, १५ मिनटसे अधिक नहीं

पढ़ सकता। सिर-दर्द हो जाता है। आगे कोई पुस्तक भेजना हो तो मुझसे पूछकर भेजिएगा।

ईश्वर आपको चिरञ्जीव करे और सुखी रक्खे।

शुभचिन्तक

म० प्र० द्विवेदी

१. विचार-विमर्श—साहित्य-समालोचना, विवेचना, पुस्तक-परिचय आदि ८ अध्यायोंमे, छोटे-छोटे मेरे १८१ नोट, १६ पेजी पुस्तककी पृष्ठ-संख्या कोई ३००।
२. विशिष्ट वार्ता—पुरातत्त्व-विषयक लेख, पृ० १५०।
३. साहित्य-सीकर—साहित्य-विषयक लेख, पृ० २००।
४. निबन्ध-संग्रह—फुटकर लेख पृ० १८०।
५. संकलन—फुटकर लेख पृ० १८०।
६. समालोचना-समुच्चय—आलोचनाएँ पृ० ३००।

[१११]

दौलतपुर, रायबरेली

६—१०—२९

आशीष,

मै कानपुरमे सिर्फ़ ३ हफ्ते रहने पाया। यहाँ मेरे दोनों कुटुम्बी सख्त बीमार हो गये। इससे बीच हीमे लौट आना पड़ा।

आपका २० सितम्बरका पोस्टकार्ड मेरी गैरहाजिरीमे कानपुर पहुँचा। इधर-उधर घूमता रहा। कल शामको मुझे यहाँ मिला। अब तक मै बड़ी चिन्तामे था। सन्देह हुआ कि कही आप बीमार तो नहीं जो पुस्तकोंकी पहुँच तक न लिख सके। इसीसे तीन चार रोज हुए मैने बाबू श्यामसुन्दर

दासको लिखा कि किसीको आपके पास भेजकर आपका हाल दरियाफ्त करें और मुझे लिखें।

कार्डमे आपने जो चुनाचुनीकी बातें लिखीं उनकी ज़रूरत न थी। "निधि" दी और "गौरवान्वित किया"—यह क्या?

आप मुझे रुपया न भेजे। मुझे अभी रुपयेकी जरूरत नही। कम-से-कम "विचार-विमर्श" को किसी अच्छे प्रेसमे छपनेको जल्द दे दे। पुस्तकमे १६ पेजी शायद ४०० पृष्ठोंसे कम न होगे। देखिए क्या खर्च आपको पड़ता है। कितनी कीमत आप रखते है। बिकनेकी कितनी उम्मेद है। तब सुभीता अपना देखकर रुपया जनवरी-फरवरीमे भेजिएगा। अभी तक पुस्तक छापनेका आपने वादा किया है।

एक बात और। प्रयागमे रामनारायणलाल अच्छे प्रकाशक है। उनकी स्कूली किताबे भी कई जारी है। उनका तकाज़ा है कि मै अपने लेखोंके संग्रहकी कुछ ऐसी पुस्तकें उन्हे दूँ जो Intcr, B. A. और M. A. मे कोर्स हो जायँ। उधर प्रयाग विश्वविद्यालयके हिन्दीके प्रोफेसर पं० देवीप्रसाद शुक्ल भी यही काम मुझसे कराना चाहते है। मैने इन दोनोंको अभी दुटप्पी जवाब दे दिया है—आज्ञापालनकी चेष्टा करूँगा। विचार-विमर्शमे मेरे सब तरहके छोटे-मोटे लेख है। उनका समय भी व्यापक है—१ से २० वर्ष पहले तकका। संभव है, कोशिश करनेसे यह पुस्तक कोर्स-करार दे दी जाय। काशी और आगरेवाले भी बहुत करके इसे ले लेगे। अतएव इसे ज़ल्दी छपवा दीजिए। छप जानेपर मैं इन लोगोंको लिख दूँगा कि एक वैसी पुस्तक तैयार हो गई। इसकी पहुँच शीघ्र लिखिएगा।

शुभाकांक्षी

म० प्र० द्विवेदी

[११२]

दौलतपुर, रायबरेली
२१-१-३०

शुभाशिषः सन्तु

बहुत दिनोके बाद आज आपका १८ जनवरीका पोस्टकार्ड मिला।

खड्गविलास प्रेसवालोने बहुत तंग किया। तब मैने जायसवालजीको लिखा। उन्होने रुपया भिजवा दिया।

सभाकी पत्रिकासे यह तो मुझे मालूम हो गया था कि आपने कला-परिषद्को सभाके भवनमे मिला दिया है, पर यह आज आप हीसे मालूम हुआ कि उसका सारा काम भी आप हीको करना पड़ता है। कीजिए। आप ही इसके योग्य भी है।

आप अपने वादेको भूल-सा गये है। आपने मुझे लिखा था कि मेरी पुस्तके जनवरीके अन्त तक छप जायँगी। आपने अपने किसी विज्ञापनमे भी उनके शीघ्र निकलनेकी घोषणा की थी। खैर लाचारी है। आप और काममे लग गये। क्या किया जाता।

कृपा करके लिखिये, कुछ काम हुआ या नही। हुआ तो कितना हुआ और किस प्रेसमे हुआ। यदि कुछ फार्म छप गये हो तो उनकी एक-एक कापी मुझे भेज दीजिए।

अब मेरी पुस्तकोके प्रकाशनका क्या प्रबन्ध आपने किया है और कबतक निकल जायँगी, यह भी लिखनेकी कृपा कीजिए।

आपने अपने एक पत्रमे दिवाली तक मुझे रुपया भेजनेको लिखा था। पर मैने मना कर दिया था। मै आपको लिखनेवाला ही था। इतनेमे आपका कार्ड आ गया। नये सालका आरम्भ है। कुछ ग़ैरमामूली खर्च आ रहे है। मेरे भानजेकी बहू अपने मायके प्रयाग गई हुई है। उसको भी कुछ रुपया भेजना है। अतएव विशेष कष्ट न हो तो जो कुछ आप पुस्तकोके

हिसाबमें मुझे देना चाहते हों, उसका अर्द्धांश मुझे अभी भेज दीजिए। अवशिष्ट अर्द्धांश पुस्तकें छप जाने या मुझे उसकी जरूरत होनेपर भेजिएगा।

मैं अभी कहीं बाहर जानेका विचार नहीं रखता। कहीं दूरका सफ़र करने योग्य मैं अब हूँ भी नहीं।

कुम्भ-यात्रामें स्वास्थ्य-रक्षाका खूब ख्याल रखिएगा।

शुभाकांक्षी
म० प्र० द्विवेदी

[११३]

दौलतपुर, रायबरेली
२९—११—३३

शुभाशिषः सन्तु,

बहुत दिनोंसे आपके हाल नहीं मिले। आशा है आप अच्छी तरह हैं। कुछ समयसे मेरा उन्नीद्र रोग बढ गया है। बहुमूत्र (Diabetes) के भी लक्षण दिखायी दे रहे हैं। देखूँ कबतक शरीर चलता है।

पेन्शनको छोड़कर मेरी आमदनीके और सब ज़रिये अब प्रायः बन्द-से हैं। सहूलियतके लिए कुछ काश्तकारी भी यहाँ कर ली है। उसके लगानका तकाजा है। सख्ती हो रही है। मेरी पुस्तकोंके हिसाबमे अगर आप सुभीतेके साथ कुछ भेज सकें तो भेज दीजिए। मगर मेरे कारण कष्ट न उठावें। प्रयागके एक प्रकाशकसे रुपया मिलना है। पर पत्रका उत्तर तक वे नहीं देते। औदार्य्य!

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[११४]

कमर्शल प्रेस
कानपुर
२२–१२–३४

आशीष,

आज मुझे जनरल मैनेजर न्यूज पेपर्स लिमिटेडसे आपके हिसाबमें १००) मिल गये। आपकी इस कृपाके लिए धन्यवाद।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[११५]

दौलतपुर, रायबरेली
१०–३–३५

शुभाशिषः सन्तु,

५ वर्षसे अधिक हुआ, मैंने आपको लिखा था कि बनारसमें कोई प्रकाशक मेरी दो-एक पुस्तकें ले सके तो बताइए। इसपर आपने खुद ही मेरी पुस्तकें ले लीं और अपने ५-१०-२६ के पत्रमें लिखा :—

"भारती भण्डारकी महत्ता इन पुस्तकोंसे बहुत बढ़ गई। अतः यह अपनेको अत्यन्त गौरवास्पद समझता है। अपने पूज्य आचार्यसे इस जनको आशीष रूपमें जो दिव्य निधियाँ मिली हैं उनकी भेंट यह दीवाली तक सेवामें उपस्थित करेगा।"

फिर ११ मार्च १६३० के पत्रमें आपने लिखा—

"आपके दोनों ग्रन्थोंके लिए मेरा विचार ५५१) श्री-चरणोंमें भेंट करनेका है। × × × आगामी १५ जूनके भीतर-भीतर यह भेंट सेवामें अवश्य पहुँच जायगी।"

अपनी पुस्तके लेनेके लिए न तो मैंने आपसे इसरार किया और न कुछ मॉगा। दो-तीन महीने पहले तक मैंने शायद आपको कभी याद भी नहीं दिलाई कि मुझे आपसे कुछ पाना है। आपने खुशीसे पुस्तके ली और खुद ही उजरतका निश्चय किया। आपके भण्डारकी पुस्तके यदि लीडर प्रेसमे न चली जाती तो बहुत करके हजार कष्ट सहनेपर भी मैं आपसे तकाज़ा न करता।

मेरे याद दिलानेपर लीडर प्रेसवालोने इधर हालमे, एक विज्ञापन, मेरी पुस्तकोका दो-तीन बार भारतमे निकाला। बस। फिर चुप। वही व्यास, प्रसाद, पाठक आदिकी अनमोल पुस्तकोका विज्ञापन बराबर प्रकाशित हो रहा है। खैर, हर्ज नही। हर्ज जिस बातसे है वह यह है—

मुझे मालूम नही, उजरतके बारेमें लीडर प्रेसके साथ आपने क्या शर्ते की है। और इसे जाननेका मुझे हक भी नही। मेरी प्रार्थना सिर्फ़ यही है कि मुझे आपने जो कुछ देना निश्चित किया था उसे आप उन लोगोसे दिलवा दीजिए। वह मुझे ४ वर्ष पहले ही मिल जाना चाहिए था। उसमेसे १००) दो महीने हुए मिल चुका है। ४५१) बकाया है।

मै आज कल कुछ तकलीफ़मे हूँ। मै कुछ अच्छा होकर घर आया तो भानजेकी बारी आई। वह ढाई महीनेसे कानपुरमे पड़ा है। कैप्टन पाईका इलाज है। उसका खून खराब हो रहा है। इंजेक्शन लग रहे है। बड़ा खर्च है। वह किसी तरह संभलता नही देख पड़ता।

संग्रह-पुस्तकोसे जो कुछ मिलना था मिल चुका। आमदनीका और कोई द्वार नही। आज मार्चकी १० तारीख है। अब तक इण्डियन प्रेस से पेशनके भी टके, फ़रवरीके नही मिले। इन्हीं कारणोंसे तंग आकर आपको लिखना पड़ा।

मै आपको ज़रा भी तंग नही करना चाहता। आपके मत्थे जाय तो मुझे कुछ न चाहिए। लीडर प्रेससे मिलना हो तो फौरन उनको लिख कर दिलाइए—मेरी पुस्तके बिके चाहे न बिके। ऐसी कोई शर्त भण्डारने मुझसे नही की जिनसे पुस्तके बिकने तक मै अपनी उजरतसे महरूम रक्खा जा सकूँ।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

पं० लल्लीप्रसाद पाण्डेय

प० लल्लीप्रसाद पाण्डेयका जन्म-स्थान ग्राम, सनोदा, ज़िला-सागर (मध्यप्रदेश) है। इनका नाम अयोध्याप्रसाद तिवारी था। पण्डित रामलाल पाण्डेयके यहाँ गोद आनेके बाद इनका नाम लल्लीप्रसाद पाण्डेय पड़ा। यह साधारण किसान और ग्रामीण पुरोहित थे। लल्लीप्रसादजीका जन्म ज्येष्ठ कृष्ण त्रयोदशी सं० १९४३ को हुआ। दो सालके बाद ही उनकी बुआ उन्हें लेकर सागर ले आई। सागरमें ही आपने सस्कृतका अध्ययन किया।

सन् १९०७ ई० में आप नागपुर चले गये। वहाँ हिन्दी केसरी में ११ महीना काम किया। पुन. सागर वापस चले गये। १९११ में नवलकिशोर प्रेस लखनऊ आ गये। यहाँ प्रूफ़-संशोधकका काम किया। १९१४ में कुछ समयके लिए कलकत्ते चले गये। ८ महीने बाद पुनः नवलकिशोर प्रेस आ गये। १९१५ ई० में सप्रेजीके कहने से गीतारहस्यके प्रकाशनके लिए पूना चले गये।

सन् १९१७ ई० में बालसखा और साहित्य विभागमें काम करनेके लिए इंडियन प्रेस प्रयाग आ गये। यहीं पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीके घने सम्पर्क में आये। बराबर द्विवेदीजीके सहायक और विश्वासपात्र रहे। द्विवेदीजी के १४१ पत्र आपके पास मिले। उन सबको देखनेके बाद जो सबसे ज़्यादा महत्त्वपूर्ण पत्र समझमें आये, वे २१ पत्र यहाँ दिये जा रहे है।

[११६]

जूही, कानपुर
३१-८-१७

प्रणाम,

ये कार्ड लीजिए। मै नहीं चाहता कि ऐरे-गैरे जो चाहे 'सरस्वती'की कविता नकल करके ग्रन्थकार बन बैठे। ऐसी महँगीके समयमे और जब आपकी आलमारी "कापियों"से भरी है तब भीलोंके देशके एक गुमनाम जमीन्दारका किया हुआ कविता-संग्रह छापनेके लिए आप कैसे तैयार हो गये! उसे देखा तक नही और छापनेकी स्वीकृति! क्या मै या आप 'सरस्वती'मे प्रकाशित कविताओंका संग्रह नहीं तैयार कर सकते? जब प्रेस कहेगा मैं एक संग्रह कर दूँगा। जमीन्दारजीसे कहिए कि 'सरस्वती' वाली कविताएँ अपने संग्रहसे निकालकर बाकी आपको भेज दे। अगर प्रेस खुद ही चाहता हो कि वे कविताएँ इस मालवी-संग्रहमे रखी जायँ तो किसीसे पूछनेकी क्या ज़रूरत। रख दीजिए। बहुत हो तो लिख दीजिएगा कि सर० से उद्धृत।

मेरे पास इस तरहकी चिट्ठियाँ आया ही करती है। मै बहुत कम जवाब देता हूँ।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[११७]

जूही-कलाँ, कानपुर
११-१०-१९

नमोनमः,

कृपा-पत्र मिला। अपने अनुवादित *प्रहसनके विषयमे आप बाबू

* प्रहसन 'रायबहादुर'। प्रकाशक- गंगापुस्तकमाला, लखनऊ।

महावीरप्रसाद पोद्दार* हिन्दी पुस्तक एजेंसी, हैरिसन रोड, कलकत्ताको लिखिए। बहुत करके वे ले लेंगे। उनको लिखनेमे मुझे सङ्कोच होता है। नही, मैं ही लिख देता। मुझसे एक आध पुस्तक वे मॉगते थे। सो नही दे सका। थी ही नही। संकोचका यही कारण है।

राम, कृष्ण, युधिष्ठिर, व्यास, वाल्मीकि आदि हम सबके आदरके पात्र हैं। उनके लिए आदरार्थक बहुवचन ही लिखना अच्छा है। औरोंके लिए एकवचन। दुष्ट, शिष्टके सम्बन्धमे भी यही।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[११८]

पाण्डेजी,

१. शुक्लजीके† पास जो लेख हो, उन्हे मगाकर देखिए कुछ छपने लायक है? जो हो उनकी भाषा ठीक कर दीजिए।
२. नये लेख और कविताएँ प्राप्त करनेकी चेष्टा कीजिए।
३ जनवरीकी 'सर०'की कापी तैयार करके मुझे देखनेको भेजिए। मै देखकर लौटा दूँगा, छापनेके लिए। हर महीने यहीं किया कीजिए। आखिरी प्रूफ मै देखा करूँगा।
४. गुरुजीसे पूछ-पूछकर काम कीजिए, उनकी निगरानीमे।
५. 'सरस्वती'के बदलेमे जो पत्र आदि आते है आप ही वहाँ लिया कीजिए। समालोचनाके लिए पुस्तकें और सरकारी रिपोर्टें भी।

---

* श्री महावीरप्रसादजी पोद्दार अब हिन्दी पुस्तक एजेंसीसे अलग है। वह गोरखपुरमे रहते हैं और गान्धीजीके रचनात्मक कामोंकी देख-भाल करते है।

† देवीप्रसाद शुक्ल बी० ए० सुपरिण्टेण्डेण्ट हिन्दू बोर्डिंग हाउस, प्रयाग।

६. रिपोर्टें या अंगरेज़ीकी पुस्तकें जो आप न पढ़ सकें मुझे भेज दिया कीजिए। अन्य महत्त्वपूर्ण पुस्तकें भी, समालोचनाके लिए।

७. बाक़ी पुस्तकों और रिपोर्टोंकी समालोचना या उनपर नोट लिखकर, नोट और पुस्तकें चौथे-पाँचवें या हर हफ़्ते मुझे देखनेके लिए भेज दिया कीजिए।

८. विविध विषयके नोट जितने आप लिख सकें लिख भेजा कीजिऐ। तीसरे चौथे।

९. सम्पादक 'सर०'की डाक आप खोला कीजिए। काम लायक लेख रखकर बाकी रद्दी कर दिया कीजिए। पसन्द किये गये लेखोंकी भाषाका संशोधन करके मुझे भेज दिया कीजिए।

१०. मामूली चिट्ठियोंका जवाब भी आप ही दे दिया कीजिए।

११. जनवरीके लिए मेरे पास न कोई चित्र न लेख। मोतीलाल नेहरूका चित्र वहीं प्राप्त करके ब्लाक बनवाइए, जनवरीके लिए सूचना मिलनेपर मैं नोट लिख दूँगा। नोटकी सामग्री आपको मिल सके तो आप ही नोट लिख दीजिए।

१२. दो महीनेकी कापी मैं खुद ही पोदी *बाबूको दे आया था। कुछ चित्र भी। कुछ लेख उसमें छपे हैं। जो चित्र या लेख बचे हों, शीघ्र मुझे डाकसे लौटा दीजिए।

१३. आपके और गुरुजीके ही भरोसे मैं चार-छः महीने अपना नाम 'सर०' पर और बना रहने दूँगा। पर दो तीन घंटेसे अधिक काम न कर सकूँगा। मेरी नेकनामी-बदनामी आप ही लोगोंके हाथ है।

१४. जनवरीसे शुक्लजीका नाम 'सर०' पर न रहेगा।

२३—१२—१९ म० प्र० द्वि०

* चिन्तामणि बाबूके ज्येष्ठ पुत्र

[११९]

दौलतपुर
७-१-२०

नमोनमः

५ का पत्र मिला। पैकेटके भीतरकी सब चीजें भी मिल गईं।

घोषणाका* अनुवाद मैंने ही कर डाला। अब वही छपेगा। आपका भेजा हुआ रक्खा रहेगा।

नोट आपके भेजे पढकर निश्चय करूँगा कि छपेंगे या नहीं।

प० मोतीलालका चरित लेखकको मैंने ही लौटा दिया।

जनवरीमे रगीन चित्र कोई और छापिए। सम्राट्का सादा छापिए। सम्राज्ञीका कोई नही। ए० पी० सिंह और माटेगूका सबसे अच्छा जो आपको मिल सके।

मौलिक और अनुवादित ग्रन्थवाले लेखकी बात भूल जाइए।

जनवरीके ७ दिन बीत गये। जो कुछ मेरे पास है उसकी कापी कल परसो भेजूँगा। शीघ्र ही कम्पोज कराकर प्रूफ खूब पढ़िए। अन्तिम प्रूफ निर्दोष मुझे भेजिएगा।

आप और गुरुजी मेरी ऐसी सहायता करें कि मेरा निस्तार हो जाय।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

---

* भारतके सम्बन्धमें ब्रिटिश सम्राट्की घोषणा।

[१२०]

दौलतपुर, रायबरेली
८–१–२०

नमस्कार,

१६१६की 'सरस्वती'के दूसरे खण्ड—जुलाईसे दिसम्बर तक—की जिल्द बँधाकर हमेशाकी तरह भेजनेकी कृपा कीजिए। बदलेकी लिस्ट तथा फ्री लिस्ट भी एक-एक कापी भेजिए, देखूँ कुछ परिवर्तनकी तो दरकार नहीं।

जनवरीकी कापी आज भेजूँगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१२१]

दौलतपुर
१२–१–२०

नमस्कार,

१० जनवरीका पत्र मिला। निवेदन यह है—

१. प्रूफके साथ कापी ज़रूर भेजिएगा। खूब लगाकर, बराबर करके, सीकर।

२. रंगीन चित्रके प्रूफके साथ अपना लिखा हुआ परिचय भी भेजिएगा।

३. बदलेके पत्रोंकी बाबत महीने-पन्द्रह रोज बाद लिखूँगा। अभी जाने दीजिए। लिस्ट रखी है। १० रोज बाद आप लिखिएगा, आपके पास कौन-कौन आते है।

४—बङ्गविजेताकी समालोचना न छपेगी। बात मनमे रखिए।

५—दिसम्बरके लेखोका पुरस्कार आप, शुक्लजी और गुरुजीसे पूछ कर भेजिए। आप न जा सकें तो पं० देवीदत्त पूछ आवें।

प्रबन्ध* चौकस न हो तो विशेष हर्ज नहीं। कोई गड़बड़ न होने पावे। उसे अपना समझे रहिएगा—जबतक मालिक हाजिर नही या बीमार है।

आज काशी संगीत-सम्मेलनके २ चित्र भेजे है। पढ़कर पहुँच लिखिएगा।

कुछ अच्छे नोट लिखिए, लेख भी। प० देवीदत्तसे भी लिखाइए। 'सर०'के कामसे जितना समय बचे प्रेसके अन्य काममे लगाइए। समय टेढा है। सभालिए।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१२२]

दौलतपुर
१७–१–२०

नमोनमः

सेवासदनके† संशोधनमे मुझे बहुत श्रम करना पड़ा। कृपा करके धीरजके साथ समय-समय पर भाषाकी शुद्धता और मुहावरेका खयाल करके, संशोधन किया कीजिए जिससे मेरी मिहनत कम हो जाया करे।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

---

* प्रेसमें हड़तालके कारण

† यह सेवासदन प्रेमचन्दजीका उपन्यास नहीं है।

[१२३]

दौलतपुर
५-२-२०

नमस्कार,

२ फरवरीका कार्ड मिला। पेरिसपर मैंने लेख लिख लिया।

मस्तिष्कके तर्कके लेखकको भी लिख दिया और लेखके लिए।

उनकी आज्ञा हो तो हवाई द्वीपकी सैर नामक लेखके नीचे बाबू* ··· का नाम दे दीजिए। उनसे पूछ लीजिए—पता—ज्ञानमण्डल, काशी।

चित्रोंके लिए टिहरीको लिखा, अच्छा किया। कलकत्तेके बंगाली चित्रकारोंको भी लिखाइए। रामेश्वरप्रसादको मैं लिख चुका हूँ।

गोस्वामीजीका रङ्गीन चित्र व्रजाङ्गना फरवरीमे छापिए। उस पर नोट भेजिए। चित्र उन्हें लौटा दीजिए। उन्होने दो सादे चित्र भी भेजे हैं न! अच्छे हैं! मैने उनसे कहा है कि उनपर कुछ लिख भेजें। उनके पास और भी चित्र हैं। वे बड़े हैं। मैंने नाम पूछे हैं। लिख दिया है भेजनेका खर्च प्रेस देगा या एक आदमी जाकर उन्हे ले आवेगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१२४]

दौलतपुर
२४-१-२०

नमोनमः,

२२ का पत्र और पाकेटके भीतरकी चीज़ें मिलीं।

प्रूफ़ पढ़कर लौटाऊँगा। उन्हींपर लिख दूँगा, क्या छपे क्या रख छोड़ा जाय।

---

* नाम जान-बूझकर छोड़ दिया है। मूल-पत्रमें सुरक्षित है।

शुक्लजीसे आप या देवीदत्तजी पेरिस-विषयक लेख प्राप्त करके मुझे भेजिए। लेख जरूर उन्हे मिला होगा, नहीं ब्लाक क्यो बनवाते।

मुकुटधरको ठीक जवाब दिया। लेख और चित्र आने दीजिए।

शुक्लजीवाली कविताएँ ३ रखी। बाकी रद्दीमे डाल दीं।

कौंसिल शब्दको सदा पुलिङ्ग रखा कीजिए।

अनुस्वार अर्द्धचन्द्रका झगड़ा आपपर छोड़ता हूँ।

समालोचनाएँ और पुस्तकें मिली। क्या इतनी ही पुस्तके शुक्लजीसे मिली। मिली हो तो औरोंको भी समालोचना समेत भेजिए। फरवरीकी कापीके लिए विभूतिकी कविताका फैसला मै कर दूँगा।

अच्छा किया शारदाका विज्ञापन इस प्रकार टाला। ऐसा ही किया कीजिए।

किसी अखबार वगैरहकी आलोचना मुझसे पूछकर लिखा कीजिए। प्रभाकी केवल एक आलोचना वेंकटेश्वरमे छपी मुझे पैकेटमे मिली।

निवेदक
म० प्र० द्विवेदी

[१२५]

जूही, कानपुर
७–३–२०

नमस्कार,

राजनाँदगाँवके बाबू पदुमलाल पुन्नालाल बख्शीने सब शर्तें मंजूर कर लीं। वे वहाँ मास्टर हैं। ८०) पाते है। इस्तेफा उन्होने भेज दिया। चार-पाँच अप्रैल तक खाली हो जायँगे और चले आवेंगे। ६ महीने परीक्षाके तौरपर रहेगे—६०)पर। बाद मुस्तकिल होनेपर १००) पावेंगे। पहले दो महीने आपके पास प्रेसमे काम करेंगे फिर इतने ही दिन मेरे पास कानपुरमे। काम सीख जानेपर वे प्रेससे ही सरस्वतीका सब

काम किया करेंगे। आनेपर उन्हें अच्छी तरह रखिएगा। उनकी सहायता कीजिएगा। बड़े बाबू*को यह कार्ड सुना दीजिएगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१२६]

प्रणाम,

४ ता० का पत्र मिला। पैकेट भी मिला। पैकेटमे पूनेके प्राच्य विद्या-सम्मेलनका चित्र नहीं मिला। वहीं रह गया होगा। ढूँढ़िए। मिला या नहीं, लिखिए। मिले चाहे न मिले उसकी कीमत ३॥)

पं० हरिरामचन्द्र दिवेकर एम० ए०
महिलाश्रम, हिंगणे [पूना]

को मनी० आ० से भेजिए। भेजनेकी सूचना मुझे दीजिए।

टासीटोरीवाला नोट निकाल दीजिए। उनपर अगली संख्यामे १ लेख निकालूँगा। पत्रका चित्र मैने रख लिया है। फोटो भी भेजूँगा। यू० पी० गैजट लौटा दूँगा। पञ्चायत-बिल निकालकर। वह आपके कामका नहीं, मेरे कामका है। मुझे और कापी मिल गई तो उसे भी पीछे लौटा दूँगा।

सब मैटर १४६ कालम है। २२ कालम हवाई द्वीपकी सैर निकालिए। ५ कालम बंटीवाला लेख निकालिए। ६१ कालममे जहाँ "काउंसिल ड्राफ्ट" हेडिंग है, उस हेडिंगके ऊपर ही तक इस संख्यामे छापिए। शायद इससे भी कम। चित्र-परिचय और पोदी बाबू पर भी नोट जायगा। इस तरह कोई आधा फार्म बढ़ेगा याने ७ के ७॥ हो जायँगे। सो इतना ही छापिए। प्रूफ़ कल-परसो तक लौटाऊँगा। साथके नोटमे संशोधन कर दूँगा।

---

* स्व० श्री चिन्तामणि घोष।

निजामके उर्दू-फ़ारसी-ग्रन्थ विषयक नोट मिल गया।

पोदी बाबूपर नोट लिखकर आप जल्द भेजिए। मेरी बुरी दशा है। परसों रातको मुझे फिर मूर्च्छा आयी। ३ घंटे बेहोश रहा। मानसिक काम करनेसे फिर यह रोग लौट पड़ा। बुरा दौरा हुआ। कल तो चल-फिर तक न सकता था। आज कुछ अच्छा हूँ। दिमागी काम नहीं कर सकता। कृपा कीजिए। अच्छा नोट भेजिए। मेरी कुछ अधिक मदद कीजिए—आप और देवीदत्त दोनो। ३ लेख संशोधन करके आपने नहीं लौटाये। १ पुस्तककी समालोचना भी नहीं भेजी। पं० देवीदत्तको यह पत्र दिखा दीजिएगा।

हाय-हाय, बड़े बाबूकी लड़की भी चल बसी। भगवान् बड़ा निष्ठुर है। क्या करनेवाला है।

म० प्र० द्विवेदी
६—३—२०

[१२७]

जूही, कानपुर
१२—३—२०

प्रणाम,

१० का कार्ड मिला। मै तो ५ अप्रैल तक भानजीके गौनेके लिए गॉव जाऊॅगा। वहॉ दो-ढाई महीने रहना पडेगा। वहॉ *बख्शीजीको कैसे बुलाऊॅ। गॉवकी तकलीफें देखकर कही भाग न जायॅ। अपने यहॉ कुछ दिन रखिए। भले आदमी हो और रहनेके लक्षण देख पडे तो गॉवपर ही बुला लूॅगा। मै तो यही चाहता हूॅ कि कोई मेरे पास ही रहे। नहीं, कानपुर लौटनेपर बुलाऊॅगा। बड़े बाबूसे कह दीजिए।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

---

* श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी

[१२८]

प्राइवेट—गोपनीय

दौलतपुर, रायबरेली
५ जून १९२०

प्रणाम,

आचार्य ब्रजराजके* विषयमे आपका पत्र मिला। बड़े बाबूकी आज्ञा शिरसाधार्य है। एक पत्र आचार्य महोदयके नाम भेजता हूँ। उसे बडे बाबूको सुनाकर उन्हे दे दीजिएगा। फिर इस पत्रको भी बडे बाबूको सुनाकर फाड़ डालिएगा। इसका मजमून और किसीके कानमे न पडे।

ब्रजराज हिन्दी खासी लिख लेते है। अपने विचार भी वे अच्छी तरह प्रकट कर सकते है। पर उनके इस अकेले लेखसे उनकी योग्यताका ठीक-ठीक पता नहीं लग सकता। उनके और कोई लेख या ग्रन्थ कभी मैने नही पढ़े। यह लेख तो उन्होने शा (Shaw) वग़ैरहकी किताब—अँगरेजी ग्रन्थकारोके चरितके बलपर ही लिखा है। औरोके भाव हिन्दीमे लिख दिये है। भाषा इनकी है भाव औरोके। फिर लेखमे यत्रतत्र अनावश्यक अँगरेजी नाम और अँगरेजी अवतरण दिये है। लोग अन्त तक शायद इनका लेख पढ़ेंगे भी नही।

ब्रजराज संस्कृत नही जानते। इस दशामे इनसे शब्द-शुद्धिकी आशा विशेष नहीं की जा सकती। इन्होने हिन्दी साहित्यके अच्छे-अच्छे ग्रन्थ पढ़ डाले है, यह भी इनके इस लेखसे पता नही चल सकता। परिश्रम करें और साहित्य-सागरमे डूबकर अच्छे-अच्छे रत्न निकालना चाहे तो इनसे प्रेसका कुछ काम अवश्य चल सकेगा। पर यह सब इन्हे

* अध्यापक कायस्थ पाठशाला, प्रयाग।

गवारा होगा या नहीं, मैं नही कह सकता। अँगरेजीके एम० ए० तो समझते हैं कि हिन्दी और संस्कृतमे उनके सीखनेको कुछ है ही नही। जबतक ये हिन्दीसे प्रेम न करेंगे और हिन्दीकी नई पुरानी पुस्तकें देखेंगे नहीं, तबतक अच्छी-बुरी पुस्तकका भेद ये कैसे समझ सकेंगे और यह कैसे जान सकेंगे कि किस पुस्तकके प्रकाशनसे प्रेसको ४ पैसे मिलेंगे। इन्हें पुस्तक-प्रकाशन सम्बन्धी दूर-दूर तककी खबर रखनी होगी।

जहाँ तक केवल हिन्दीसे सम्बन्ध है वहाँ तक बख्शीजी* इनसे अधिक सरसहृदय और हिन्दी-प्रेमी जान पड़ते हैं। वे कवि भी है, सस्कृतज्ञ भी है। हिन्दी भी मजेकी लिख लेते है। आगे और भी तरक्की करनेकी उम्मेद है। ब्रजराजको २००) पर और बख्शीजी को १००) पर रखनेसे कही ऐसा न हो जो बख्शीजी छोड़ जायँ। उनको जबलपुरके कर्मवीर और शारदा वाले बहुत प्रलोभन दे चुके हैं। और अब भी शायद दे रहे हो। खुद सप्रेजीने उन्हे इंडियन प्रेसमे आनेसे रोका था। सब बातोंपर बड़े बाबूको विचार कर लेना चाहिए। मै बख्शीके कामसे सन्तुष्ट हूँ। इस सन्तोषका कुछ बोध आपको भी है क्योंकि आपकी मददसे ही जो कुछ उन्होने किया है, किया है। मै उन्हे तीन ही महीने बाद याने जुलाईसे ही मुस्तकिल कराना चाहता हूँ, जिससे उन्हे १००) मिलने लगे। अगर वे असन्तोषके चिह्न प्रकट करे तो उन्हे पहले ही उस पाँच रुपयेकी तरक्की और दे देनी चाहिए, जिसमे जायँ नही। ऐसा और आदमी अब न मिलेगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

---

* श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी। हिन्दीके प्रसिद्ध कहानी लेखक और समालोचक।

[१२६]

दौलतपुर
५-६-२०

प्रणाम,

१ जूनका पत्र मिला। अब मेरे पैरका रोग अच्छा है। चित्त शान्त है।

लेख और नोट सब आपके निर्देशानुसार मिल गये।

परमाणुकी शक्तिके विषयके तीनो चित्र लौटाता हूँ। ब्लाक बनवाइए। छपनेके लिए लेख आनेपर लेख देखकर चित्रोंका नामकरण कर दीजिएगा।

सूचीकी कापी भी लौटाता हूँ। किसी भी लेख या चित्रका नाम न रह जाने पावे।

एक लेख संशोधनके लिए पैकेटमे मिलेगा। उसे बख्शीजीको दे दीजिएगा।

वेंकटेश्वर मेरे पास यों ही कभी-कभी आ जाता है। सब अङ्क नही आते। हलवाइयोंने मेरे नोटके उत्तरमे क्या लिखा है मैने नही पढ़ा। पढ़नेकी इच्छा भी नही।

रविबाबूके चित्रकी छपी हुई कापी लौटाता हूँ। बेहतर है, इसी ब्लाकको छाप दीजिए। शान्तिनिकेतनके छात्रों और अध्यापकोंका चित्र ठीक न हो तो जाने दीजिए। या पटल बाबूसे कहिए, रवि बाबूको लिख दे। वे और चित्र भेज देगे। चित्र छापना उनके आश्रमके फायदेकी बात होगी।

पटल बाबूके नाम अँगरेजीमे चिट्ठी भेजता हूँ। उन्हे दे दीजिएगा। बख्शीजीको किसी पुस्तकालयका मेम्बर करा दीजिए, जिसमे माडर्नरिव्यू '

इडियनरिव्यू वगैरह आते हो। चन्दा प्रेस दे। यही मैने अँगरेजीमे लिखा है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३०]

दौलतपुर
५-६-२०

श्रीयुत पांडेजीको प्रणाम,

मैं जुलाईसे बख्शीजीको मुस्तकिल कराना चाहता हूँ। अभी तक उन्होने आपकी मददसे काम किया है। अब मैं उनकी स्वतन्त्र कारगुजारी देखना चाहता हूँ। आप कृपा करके उन्हीसे अब 'सरस्वती'-सम्पादनका सारा काम कराइए। जो कुछ पूछे वह बतला अवश्य दीजिए। देखूँ तो ये अकेले काम कर सकेगे या नहीं। मेरे शरीरकी बुरी दशा है। मैं अलग होना चाहता हूँ। अगर बडे बाबू आज्ञा देंगे तो नाम अपना दिसम्बर तक 'सरस्वती' पर रहने दूँगा। पर काम अब मै इन्हींसे कराना चाहता हूँ। कापी मै देखूँगा, प्रूफ भी।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

पुनश्च—
बड़े बाबूको सुना दीजिएगा।

[१३१]

दौलतपुर, रायबरेली
१०-६-२०

प्रणाम,

७ जूनकी चिट्ठी कल मिली। ब्रजराजजीका हाल मालूम हो गया। ठीक है। इस दशामे बख्शीजीको बुरा माननेकी बात नहीं। बडे बाबूने

सोच-समझकर काम किया है। बहुत अच्छा है। ब्रजराजजी काम संभाल ले तो फिर क्या कहना।

मेरी शक्ति अत्यन्त क्षीण है। नोट या चिट्ठी लिखनेसे भी सिरमे दर्द पैदा हो जाता है। अन्यथा बडे बाबूकी कृपासे घर बैठे इतनी आमदनी न छोड़ता। अगर उनकी यही आज्ञा है तो ६ महीने मेरा नाम सरस्वतीपर और रहे। बख्शीजो जुलाईसे लिखने और संशोधन आदिका सब काम करे। कापी देखकर मै पास करूँगा और प्रूफ देखूँगा। हो सका तो दो-एक नोट भी लिख दूँगा। इधर सितम्बर तक तो काम चला ले जाऊँगा। आगे जाड़ोमे मेरी तकलीफे बढ़ जाती है। तभी डर है। जो कुछ हो, बडे बाबूकी आज्ञाका पालन शरीरमे प्राण रहते अवश्य करूँगा। उन्हे यह पत्र चुपचाप सुनाकर फाड़ डालिएगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३२]

दौलतपुर, रायबरेली
२२—७—२०

प्रणाम,

२० जुलाईका पत्र मिला। आप या बड़े बाबू अन्तर्यामी हैं। कल बख्शीजीकी भेजी हुई दो रंगीन तसवीरें सुबह मिली। आज ही उन्हे लौटाया। उनके पैकेटके भीतर अपनी चिट्ठीमे मैने खुद ही लिख दिया है कि जुलाईसे आपका भी नाम सरस्वतीके कवर पर रहे। पैकेट बन्द करनेके बाद आज ही ८ बजे आपका पत्र मिला। उनका नाम जरूर छपे। मैं यही चाहता

था। इससे लोग उनको जानेहींगे नहीं, उनकी ज़िम्मेदारी भी बढ़ेगी। सरस्वतीकी नेकनामी या बदनामीमें उन्हें भी अपनेको शरीक समझना पड़ेगा। बड़े बाबूसे मेरे विचार कह दीजिए।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३३]

दौलतपुर, रायबरेली
८-४-२८

श्रीयुत पाण्डेयजीको नमस्कार

५ अप्रैलका कृपा-कार्ड मिला। कृतज्ञ हुआ। पुस्तकोंको एकके बाद एक इस क्रमसे छापिए—

१—आलोचनाञ्जलि

२—पुरावृत्त

३—प्राचीन चिह्न

४—चरित-चर्य्या

प्रत्येक पुस्तककी भूमिकाका प्रूफ मुझे भेजिएगा। इससे मुझे मालूम हो जाया करेगा कि कौन पुस्तक कब खतम हुई। इन पुस्तकोंका छपना आप हीकी कृपा पर अवलम्बित है। इनके खतम होनेपर और भेजूँगा।

सम्मेलनके सम्बन्धमें मेरे पास कई चिट्ठियो आई हैं। जो आन्दोलन हुआ है उसीसे यथेष्ट सफलता होनेकी आशा है। मन्त्रिमण्डल अब शायद ही जम सके। कुछ न कुछ परिवर्तन इस दफ़े जरूर होगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३४]

दौलतपुर, रायबरेली
२७–१–२९

श्रीयुत पाण्डेयजीको सादर प्रणाम,

चरितचर्य्याकी कापी मिली। पत्र भी मिला। कृतज्ञ हुआ। आपहीकी बदौलत ये पुस्तकें इतना शीघ्र निकल गईं। आपको अनेक धन्यवाद

टी० बी० का काम बहुत ज़रूरी है। उसे कीजिए। जब उससे फ़ुरसत मिले मुझे एक पोस्टकार्ड भेज दीजिए। अब सिर्फ़ एक ही दो पुस्तकें शेष हैं। और सब छप चुकीं। आपकी सूचना पानेपर ही मैं पटल बाबू को लिखूँगा।

पुनरपि मेरा कृतज्ञताज्ञापन स्वीकार कीजिए।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

पं० केशवप्रसाद मिश्र

पं० केशवप्रसाद मिश्रका जन्म चैत्र कृष्ण ७ संवत् १९४२ को काशीमें हुआ। इनके पिताका नाम पं० भगवतीप्रसाद मिश्र था।

पं० केशवप्रसादजी वैसे, इंटर पास थे। पर संस्कृत, अंग्रेज़ी और हिन्दीका इन्होंने बड़ा ठोस अध्ययन किया था। प्रारम्भमें ये काशी के कुछ स्कूलोंमें अध्यापक थे। सन् १९१४ से १९१६ तक सनातन-धर्म स्कूल इटावामें अध्यापन कार्य किया। इसी कालसे इनका सम्बन्ध साहित्य-जगत्से हुआ। ये बड़े अच्छे कवि थे। सन् १९१७ से १९२७ तक मिश्रजी ने हिन्दू स्कूल, कमच्छा (काशी) में अध्यापन कार्य किया। १९२८ से १९४१ तक काशी हिन्दू विश्वविद्यालयमें हिन्दीके अध्यापक रूपमें काम किया। १९४१ से १९५० तक हिन्दी विभागके अध्यक्ष थे। इसके बाद अध्यापन-कार्यसे अवकाश ले लिया।

फाल्गुन शुक्ल १३ सं० २००७ को आपकी मृत्यु हो गई।

पं० केशवप्रसाद मिश्र विद्याचरण-सम्पन्न ब्राह्मण थे। भाषा-विज्ञानके वह अधिकारी विद्वान् थे। बहुत ही अच्छे अध्यापक, सीधे, मर्मज्ञ और सरल चित्तके व्यक्ति थे। मिश्रजीका पं० महावीर-प्रसाद द्विवेदीसे बहुत घना सम्बन्ध था। मिश्रजीके नाम द्विवेदी जीके बहुत से पत्र हैं—जो श्री मुरारीलालजी केडिया (काशी) के पास सुरक्षित हैं। उन पत्रोंमें से महत्त्वपूर्ण पत्रोंको यहाँ दिया जा रहा है।

[१३५]

जूही, कानपुर
१–४–१५

नमोनमः,

पत्र मिला। काशीवाली चिट्ठी पढ़कर बहुत कौतुक हुआ। मेरे पास भी एक चिट्ठी आई है। टाइपमे लिखी हुई। अँगरेज़ीमें।

कविता ठीक बन गई। विशेष मनोहारिणी हो गई। एप्रिलकी 'सर०' कम्पोज हो चुकी, नहीं उसीमे दे देता। अब मईमें दूँगा। विलम्बके लिए क्षमा-प्रार्थना।

विषय मैं क्या बताऊँ, आप ही निश्चय कीजिए। जिस विषयपर लिखनेको जी चाहे लिखिए। संसारमे विषयोकी कमी नहीं। मुहावरेका ख्याल रखिए। सरलताका भी। दीर्घको लघु न पढ़ना पड़े। बात ऐसी हो कि दिल पर असर करे।

आप धन्यवाद दे दे जो आपके लेखमे दो ही ग़लतियाँ रह गईं। मैंने अनेकोंकी सूचना प्रेसमे दे दी है। स्थायी प्रूफ संशोधक बीमार हैं। नये संशोधक बहुत गलतियाँ करते हैं।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३६]

दौलतपुर, रायबरेली
६–६–१७

प्रणाम,

मेघदूतके संशोधित पद्य मिले। वैसे ही छाप दूँगा।

इसी क्रमसे नंबरवार मूल श्लोक और उनके नीचे हिन्दी भावार्थ भेजनेका भी कष्ट उठाइए। इस विषयमे मै आपसे प्रार्थना कर चुका हूँ। उर्सलोन्ध्र या शिलीन्ध्र कहीं छरीलेको तो नहीं कहते ? दोनोंमे नाम-साम्य है। छरीला एक सुगन्धित चीज है। सिर मलनेके मसाले और उबटनमे काम आता है। दाक्षिणात्य उसे पहाड़ या पत्थरका फूल कहते हैं। छत्रकहीके सदृश वह पहाड़ी भूमिपर उगता या फूलता है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३७]

जूही, कानपुर
१३-१०-२१

प्रणाम,

आपका ८ अक्टोबरका पोस्टकार्ड मिला। आप मंसूरीमे विहार कर रहे है। मै अपने झोपड़ेमे पडा सैकडो चिन्ताओंकी मारसे अधमरा और हतबुद्धि हो रहा हूँ। कभी-कभी 'सरस्वती' वगैरहमे जो कुछ अटसट लिख देता हूँ उसका कारण लाचारी है। मेरी बुद्धिमे जड़ता आ गई है। सुकुमार विचार, मेघदूतकी भूमिकाके योग्य, मुझे नहीं सूझते। दो घंटे लिखनेकी चेष्टा की, पर एक सतर भी न लिख सका। हफ्तों मिहनत करके आपकी कापोंमे सूचनाएँ लिखी थीं। भूमिका लिखना तो जरा देरका काम था। परन्तु अब नहीं कर सकता। भूमिका आप कृष्णदाससे लिखाइए। मेरा नाम देना ही हो तो आप और वे जो कुछ लिख भेजेंगे मैं उसपर दस्तखत कर दूँगा। उस समय यदि कुछ विचार सूझ पडे तो लेखको घटा बढा भी दूँगा।

निवेदनकारी
म० प्र० द्विवेदी

[१३८]

दौलतपुर
४–७–२४

नमोनमः,

५ जूनका पोस्टकार्ड समयपर मिल गया था। मेघदूतकी कापी आज मिली। कृतज्ञ हुआ। धन्यवाद। मेरा स्मरण व्यर्थ ही किया। मैंने किया ही क्या है? आपका यह अनुवाद आदर्श है और सभी अनुवादोंसे बढ़कर।

मैं बीचमें बहुत बीमार हो गया था। अभी चल-फिर नहीं सकता।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

नोट—पं० केशवप्रसाद मिश्रजी काशी आ गये थे।

[१३९]

[श्री मुरारीलाल केडियाके नाम पत्र]

दौलतपुर, रायबरेली
२२–९–२५

श्रीमान्

कृपा-पत्र मिला। आपने जो कार्य्यारम्भ किया है, ईश्वर करे उसमें आपको पूर्ण सफलता मिले। बहुत ही उपयोगी और श्रेयस्कर आयोजन है।

कार्डपर हस्ताक्षर करके लौटाता हूँ। *

वार्धक्यके कारण और कुछ करने-धरने या लिखने-पढ़नेकी शक्ति मुझमे नहीं। क्षमा कीजिए।

पुस्तकें मिल गईं। कृतज्ञ हुआ। पद्माकर-पद्मामृतका पान करके मैंने आनन्द-लाभ किया। उसके सम्पादक पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र क्या कभी हिन्दू विश्वविद्यालयमे तो न थे! इस नामके एक मिश्रजीने मेरा दिया हुआ वजीफा कई साल तक लेकर मुझे कृतकृत्य किया है। †

कृपापात्र

म० प्र० द्विवेदी
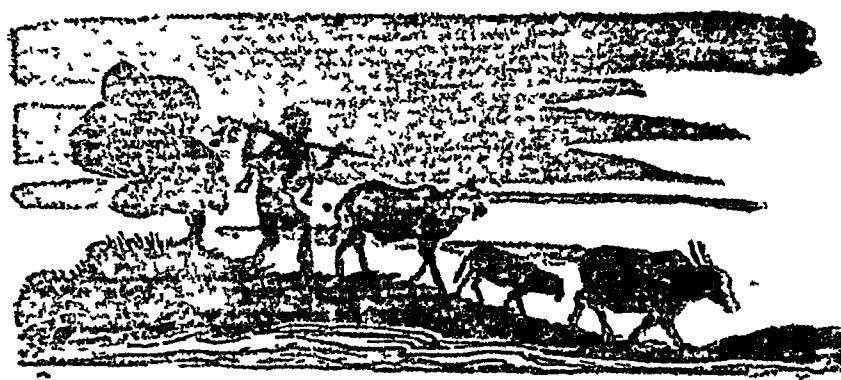
* श्रीकेडियाजीने सभी साहित्यकारोंके हस्ताक्षर संग्रह करनेका काम शुरू किया है। उनके उसी कार्डपर द्विवेदीजीने हस्ताक्षर करके वापस किया।

† पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र हिन्दी विभाग, हिन्दू विश्वविद्यालयको ही वजीफा दिया था।
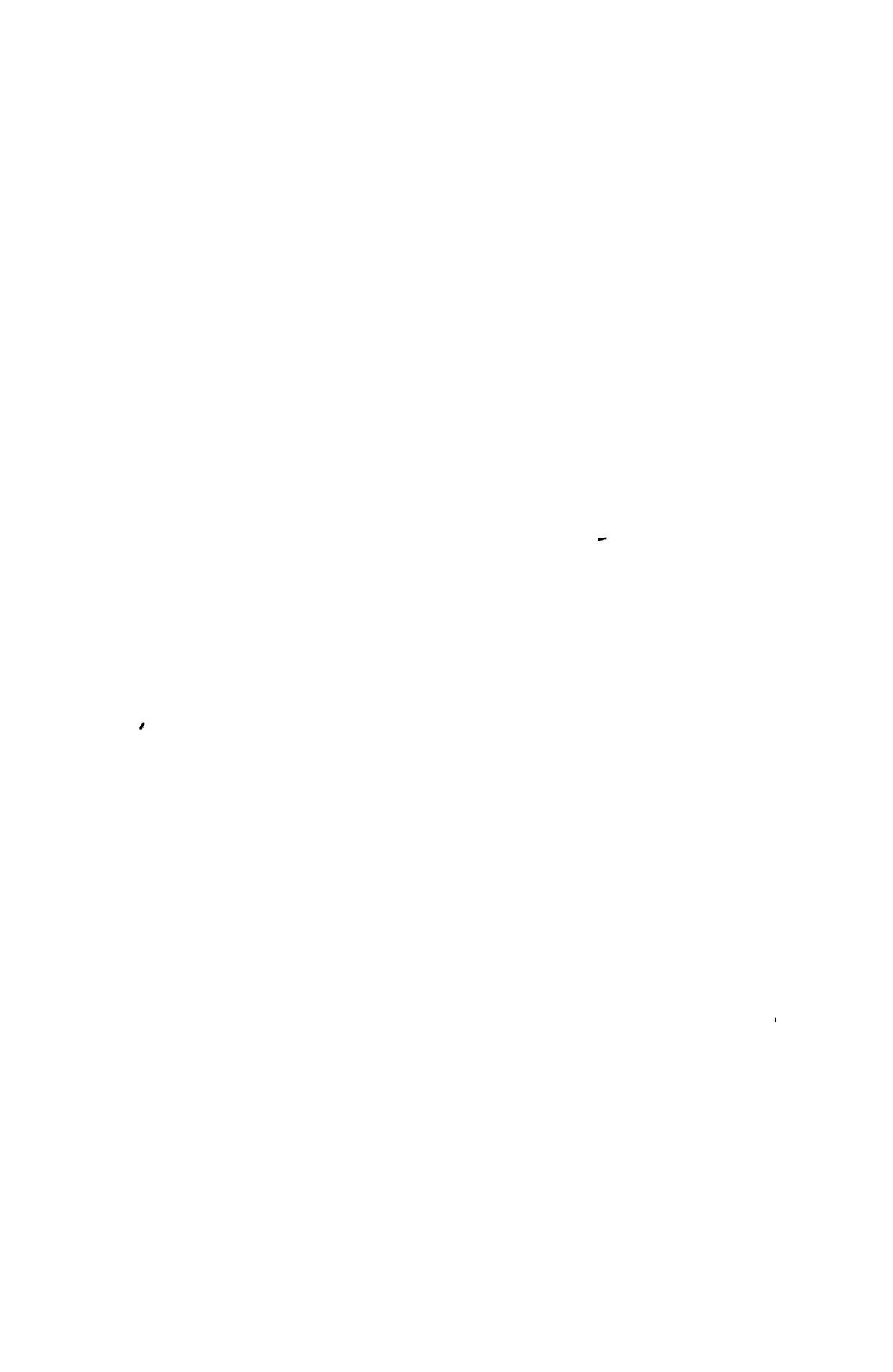
पं० देवीदत्त शुक्ल

पं० देवीदत्त शुक्लका जन्म संवत् १९४५ में हुआ। यह उत्तर प्रदेशके उन्नाव ज़िलेके पुराना बक्सर नामक गाँवके रहनेवाले है। अब प्रयागमे रहते है।

शुक्लजीने सेंट्रल हिन्दूकालेज बनारसमे एफ० ए० तक शिक्षा प्राप्त की है। लड़कपनसे ही साहित्यिक ग्रन्थोंके अध्ययनका इनको शौक़ था। आपने संस्कृतका भी अच्छा ज्ञान प्राप्त किया है। रायपुर ज़िलेके एक स्कूलमें अध्यापनका कार्य किया था। प० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीके कहने पर सन् १९१९ ई० मे सरस्वतीमे आये।

शुक्लजीका गाँव पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीके गाँव दौलतपुरसे दो मीलके फासले पर था। शुक्लजी प्रारम्भसे ही साहित्यिक रुचिके थे, इसलिए वह द्विवेदीजीके सम्पर्कमें आ गये। द्विवेदीजी ही शुक्लजीके साहित्य-गुरु थे। द्विवेदीजीका शुक्लजीसे घरेलू सम्बन्ध था। द्विवेदीजीके अनेक महत्त्वपूर्ण संस्मरण उनके पास है। द्विवेदीजीकी अनेक पारिवारिक और साहित्यिक बातें उनको याद है। प्रसन्नताकी बात है कि शुक्लजीने उन सबको लिख लिया है। आशा है उनके ये संस्मरण शीघ्र ही प्रकाशमे आ जायँगे।

[हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयागके संग्रहालयसे]

[१४०]

जूही, कानपुर
११—११—१५

नमस्कार,

पोस्टकार्ड मिला। दोनो लेख भी मिले। आपने बड़ी कृपा की। मैं बहुत कृतज्ञ हुआ। इन लेखोंको सरस्वतीमे निकालनेकी मैं अवश्य चेष्टा करूँगा।

अवकाश मिलनेपर कुछ न कुछ लिख भेजा कीजिए। जहाँ तक हो सके—भाषा सरल बोलचालकी हो। क्लिष्ट संस्कृत शब्द न आने पावे। मुहावरेका ख्याल रहे। वाक्य छोटे।

सब यथा योग्य—

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१४१]

जूही, कानपुर
२०—११—१७

भाई देवीदत्त,

१७ ता० की चिट्ठी मिली। "हमे इस तरहकी भेटे न चाहिएँ" यह जानकर रंज हुआ—

"ददाति प्रतिगृह्णाति गुह्यमाख्याति पृच्छति।
भुंक्ते भोजयते चैव षड्विधं मित्रलक्षणम्॥"

यदि मुझे आप अपना बन्धु बनाना नही चाहते तो क्या मित्र-भाव भी रखना नहीं चाहते ?

आप जब जो चाहिए दीजिएगा। मैं ले लूँगा। आपको नही चाहिए, क्या यह मैं नहीं जानता, पर बन्धुत्व और मैत्री भाव क्या चाहनेकी अपेक्षा रखते है ?

म० प्र० द्विवेदी

[१४२]

जूही, कानपुर
१२-११-२०

नमस्कार,

६ नवंबरका पोस्टकार्ड मिला। विदाईकी पहुँच लिख चुका हूँ। मैंने तो बड़े बाबूसे खुद ही कहा था कि देवीदत्तको 'सरस्वती'का काम दीजिए। पर उन्होंने आपके लिए 'बालसखा'का स्वतन्त्र काम देना ही मुनासिब समझा। मेरी समझमे तो 'सरस्वती'का काम 'बालसखा'से अधिक महत्त्वका है। उन्नति करनेके लिए इस काममे बहुत जगह है। योग्यता की बात जाने दीजिए। काम करनेसे तो अयोग्य भी योग्य हो जाते हैं। आप तो समर्थ योग्य हैं। मुझे यह जानकर संतोष हुआ कि मेरे बाद 'सरस्वती'से आपका संबंध हो जायगा। पूरी आशा है आप और बख्शी जी इस कामको बहुत अच्छी तरह कर लेगे।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१४३]

जूही, कानपुर

१७–११–२०

नमस्कार,

१३ की चिट्ठी मिली। पेंसिलका लेख भी मिला। कापी किये हुए लेखको मैंने पटल बाबूको भेज दिया। देखना जनवरीके आरंभमे छपे।

हाँ प्रेसकी चिट्ठीमे अभिनन्दन भी था और ५० रुपया महीना पेंशनकी घोषणा भी।

आज मुझे मालूम हुआ है कि आप 'बालसखा'का भी काम करेंगे और बख्शीजीकी मदद भी। यह और अच्छा हुआ। वह काम जिम्मेदारीका बना रहेगा, इधर 'सरस्वती' के कामका भी अनुभव होगा। पर काम बढ़ेगा। आशा है प्रेस अधिक कामका खयाल करेगा और जनवरीसे ६० के बदले आपको ६५ रु० देगा।

दिसम्बरकी कापी मै भेज चुका। उसमें एक लेख मकड़ीपर है। उसके नीचे बख्शीजीसे लिखा दीजिए :

ब्रूस साहबकी पुस्तक What Spider Can Do के आधार पर।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[१४४]

जूहीकलाँ, कानपुर

२०–३–२४

नमस्कार,

जो पोस्टकार्ड आपने दौलतपुरके पतेपर भेजा था वह भी यहाँ परसो मिल गया। दूसरा भी। फरवरीकी 'सरस्वती' कल मिली। बहुत

विलम्बसे निकली। मार्चकी कापीके साथ मैंने एक नोट भेजा था 'अफीम की बेरोकटोक बिक्री'। उसे आपने फरवरीमे ही निकाल दिया सो बहुत अच्छा किया। फरवरीकी कापीमे दो नोट और थे। १. विज्ञापन-विमर्श और २. देशी भाषाओं-द्वारा शिक्षा। वे फरवरीमे नहीं छपे। क्या मिले नही या खो गये? या छापना ठीक नहीं समझा गया, अगर सबसे पिछली बात हो तो संकोचकी ज़रा भी जरूरत नही। न फाड़ा हो तो अब उन्हे फाड़ फेकिए। एक भी आक्षेप-योग्य नोट या लेख 'सरस्वती'मे न छपना चाहिए।

कमलाकिशोरके रोगकी इतनी चिकित्सा होनेपर भी रुधिर-विकार नहीं गया। डाक्टरोकी परीक्षासे यह बात मालूम हुई। विकारके चिह्न भी शरीरपर प्रकट हो गये हैं। अब आजसे उन्हे दवाकी पिचकारियाँ (injections) शरीरपर लगवानी होगी। आठ-बार आठ-आठ रोज बाद। इसमे बड़ा खर्च है। लेकिन लाचारी है। इस दुःखके पीछे बड़ी हैरानी उठानी पड़ी है।

उधर उसकी छोटी बहन असाध्य रोगसे रुग्ण है, शरीरका फूलना, मासिक धर्म न होना, मूत्रमे शरीरस्थ धातुओंका गल-गलकर गिरना, बड़ा भयंकर है। मूत्र-परीक्षासे ये बातें डाक्टरोको ज्ञात हुईं। यह भी एक प्रकारका प्रमेह है—Nephritis कहाता है, दवा करा रहा हूँ। खाना-पीना बन्द है, सिर्फ दूधपर रहना है।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१४५]

दौलतपुर, रायबरेली
५—११—२५

नमस्कार,

२ ता० का पोस्टकार्ड मिला। बहुत अच्छा। उन दो सतरोंको निकाल दीजिए। उनकी जगह नीचेका मजमून रख दीजिए।

इस कविताकी दो पंक्तियोंका आशय है, कि न मालूम कबसे यह भारत सुनसान मसान हो रहा है। इस कारण हे व्योमकेशजी, झटपट आकर इसे विकराल विपत्ति-विषसे बचा लीजिए।

प्रसंग ठीक कर दीजिए। आवश्यकतानुसार शब्दोंमे फेरफार कर दीजिए या जो मजमून ऊपर मैंने लिखा है, उसे और किसी तरह लिख दीजिए।

इसी नोटमे एक जगह 'अफ़रीकाका सहारा' है। उसे 'अफ़रीकाके रेगिस्तान' कर दीजिए।

बख्शीजीके इस्तीफ़ेका हाल मुझे भी मालूम हो गया है। पटल बाबूने लिखा था। मैंने मुनासिब उत्तर दे दिया है। काम ज़रूर ज़ियादह होगा। पाडेजी वग़ैरहसे मदद लेकर किसी तरह निपटाइये। मेहनत जरूर पडेगी। मगर योग्यताकी परख ऐसे ही समयमें होती है। मेरे पास इस समय कोई लेख या नोट नहीं। लिख सकूँगा तो भेजूँगा।

और शिकायतोंके सिवा आजकल मेरा उन्निद्र रोग फिर उभड़ा है। बहुत तंग कर रहा है।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१४६]

दौलतपुर
२९–१–२९

नमस्कार,

जनवरीकी 'सरस्वती'मे आपने एक अच्छी दिल्लगी कर डाली। मेरे लेखके पहले पृष्ठके बीचमे तो मेरे नामका इश्तहार दे दिया। पर

अन्तमे 'द्विरेफ' ही रहने दिया। वहाँ भी क्यो नाम न दे दिया? मैं अपना नाम इस लेखमे न देना चाहता था।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[१४७]

चौक, कानपुर

५—९—२९

नमस्कार,

घरपर तबीयत बिगड़ चली थी। इससे कुछ दिनके लिए यहाँ चला आया हूँ। 'सरस्वती' और 'बाल-सखा' वगैरह यहीं भिजवाया कीजिए—चौक कानपुर। सबसे कह दीजिएगा।

कानपुरके पं० जगदम्बाप्रसाद 'हितैषी' बडे अच्छे कवि है। 'सरस्वती'के कविता-स्तम्भ चमकानेके लिए मैने उनसे कहा था कि आपको कभी-कभी कविता भेजा करें। उन्होने शायद भेजा भी। पर पुरस्कार देना तो दूर आपने उन्हे 'सरस्वती' तक न भेजी। अब भेजिए। पहा० पं०* से उनकी कविता हजार दर्जे अच्छी होती है। उन्हे कुछ निश्चित मासिक पुरस्कार मिले तो वे हर महीने अच्छी-अच्छी कविता भेंजे।

आपका

म० प्र० द्विवेदी

[१४८]

दौलतपुर

३—१०—२१

नमस्कार,

पो० का० मिला। टाइमटेबल आजकी डाकसे नही आया। भेजा है तो आ ही जायगा।

---

* मूल पत्रमे जो नाम है, उसे हमने ज्योंका त्यों नही दिया है।

.... ''छोटी बिट्टीकी जेठकी लड़कीके पतिके बड़े भाई हैं। यहाँ मुझ
मिलने भी आये थे। रीडरबाज़ोंकी अकसर खबर लिया करते हैं। इ
वह लेख उन्हे भेजा। मना किया था कि मेरा नाम प्रेसवालो तकसे
बतावें। उन्होंने विश्वासघात किया। अपने पेशेपर बट्टा लगाया। एडि
ऐसा नहीं करते। दो-तीन हफ़्ते पास रखकर लेखका अन्तिम अंश काट
छापा। उसमे पाठकोंसे यह भी प्रार्थना थी कि कोई उसका अँगरे
अनुवाद डाइरेक्टरको भेजे ताकि किताबकी ग़लतियाँ दूर कर दी जाये
मुनियाँ ७ वर्षकी, मदरसेमे वही किताब पढती है। तारवाले सबक
बातें मुझसे पूछने लगी। वह समझी नहीं। तब मैंने उसे पढ
पढ़नेपर लिखने, छापने और मंज़ूर करनेवालोंपर क्रोध आया। इ
वह लेख लिख मारा—क्या एक रद्दी काग़जपर घसीटकर भेज दिया।
भले आदमीने मेरा नाम प्रकट कर दिया। बताइए अब क्या करूँ।

पं० रामप्रसादकी शकल-सूरत तक मैंने नही देखी। कौन कहे
हैं, नही जानता। कभी पत्र-व्यवहार तक नही हुआ। भक्त-अभक्त है
की मुझे क्या खबर? कुछ दुश्मनी तो निकाली नही। सर्वसाधारण
लाभ समझकर लेख लिखा। जो प्रायश्चित्त कहिए करूँ। या उन्हे
पूछिए क्या आज्ञा है। *   को तो मैं अब कुछ लिखना चाहता नह

आपका

म० प्र० द्विवे

---

*नाम जान-बूझकर नहीं दिया जा रहा है। सम्बन्धित व्यक्ति अ
हिन्दीके अध्यापक और साहित्यिकके रूपमें प्रसिद्ध हैं।

कानफिडेंशल

[१४९]

दौलतपुर
४—२—३२

नमस्कार,

आज   ने आपको एक कार्ड लिखा है। मैं उनसे और उनके कुटुम्बियोसे यहाँ तक कि चिट्टी तक से—प्रसन्न नही। जबसे शादी हुई, ये लोग मुझसे रुपया ऐंठनेकी फिक्रमे रहते है, हालाकि अब तक मै ६००) के ऊपर नकद दे चुका। कल कहते थे, मुझे डोकरईमे जमीदारी मोल ले दो। तब मैं जप्त न कर सका। जो कुछ जीमे आया कह डाला। जीवनी लिखनेका ढकोसला सिर्फ पुस्तक बेचकर रुपया कमानेसे है। न जनताके लाभके लिए, न मुझपर प्रेमके कारण, न हिन्दी-साहित्यकी हितैषणासे। मैंने लिखनेकी अनुमति नही दी, सिर्फ यह कहा कि मेरे विषयमे जिसका जो जी चाहे लिख सकता है। मेरी लेख-संग्रहकी कुछ पुस्तके माँगी। मैंने दे दी है।

आपको प्रश्नावली मैंने रख ली है। उत्तरमे कुछ लिखनेका वादा नही किया। ये सब बाते आपके जाननेके लिए लिखी है। मनमे रखिएगा। इस कार्डको फाड़ फेकियेगा। इसकी पहुँच लिख भेजिएगा।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१५०]

दौलतपुर, रायबरेली
५—२—३३

नमस्कार,

पो० का० मिला। सर० की कापियाँ भी मिल गई। मुझमे अब कुछ

विशेष लिखनेकी शक्ति नही। आपके कामका हो तो नीचेका श्लोक किसी संख्यामे दे दीजिएगा। किसीको दिखा लीजिएगा; कोई भूल व्याकरणकी न हो—

प्रार्थना

"कवीश्वरैर्वेदविदां वरैस्तथा
समर्चिता भक्तिभरेण या सदा।
समस्तविद्याविभवस्य देवता
सरस्वतीं रक्षतु सा सरस्वती॥"

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१५१]

मासिक पत्रिकाओंके कार्यकी व्याप्ति

हम लोगोंने जैसे और अनेक बातें विदेशियो—विशेष करके पश्चिमी देशोंके निवासियो—से सीखी है, वैसे ही मासिक पत्र और पत्रिकाएँ निकालना भी उन्हींसे सीखा है।

पश्चिमी देशोने अपने मासिक साहित्यका बँटवारा-सा कर लिया है। ज्ञान, विज्ञान, साहित्य, स्वास्थ्य, खेलकूद, व्यायाम, राजनीति आदि कितने ही विषय ऐसे हैं जिनके सम्बन्धमे अलग-अलग पत्र और पत्रिकाएँ प्रकाशित होती है। इससे बहुत सुभीता होता है। पाठक अपनी रुचिके अनुकूल अपने इच्छित विषयके पत्र लेते और पढ़ते हैं।

अपने देशमें शिक्षाकी कमी है। इस कारण कार्य्य विभाग या विषय-विभाजनसे काम नही चल सकता। क्योंकि पढ़नेवाले पर्याप्त

सख्यामे नही मिल सकते। इस दशामे हमे चाहिए कि हम अपने पाठकोकी विद्या-बुद्धि, ज्ञान-लिप्सा और मनोरञ्जन आदि सभी बातोका खयाल करके ऐसे ही लेखोका प्रकाशन करे, जिनसे पाठकोकी ज्ञान-वृद्धि होती रहे और साथ ही उनका मनोरञ्जन भी हो। हमे चाहिए कि अच्छे कागज़, अच्छी छपाई और सुन्दर चित्रोको सिर्फ पाठकोको अपनी तरफ खींच लानेका साधन मात्र समझे। उसे गौण और ज्ञान वर्धनकी चेष्टाको मुख्य समझना चाहिए। इसके साथ ही भाषा इतनी सरल होनी चाहिए, जिसे अधिक-से-अधिक पाठक आसानीसे समझ सकें। अपनी विद्वत्ताके प्रकटीकरणकी कदापि चेष्टा न करनी चाहिए।

'सरस्वती' यद्यपि विशेषतया साहित्य-विषयक पत्रिका है। पर उसने अपना नाम उस देवताका ग्रहण किया है जो समस्त वाड्मयकी अधिष्ठात्री है। अतएव उसे सभी विषयो पर लेख प्रकाशित करनेका अधिकार होना चाहिए। पर उसके उद्देश्य और आकारको देखते हुए यह असम्भव-सा है। इस दशामे उसे अधिक-से-अधिक ज्ञानवर्धक लेख प्रकाशित करके पाठकोंका हित-साधन करना चाहिए।

साथ ही उनके शुद्ध मनोरञ्जनकी भी कुछ सामग्री अपने प्रत्येक अङ्कमे प्रस्तुत करके, पिछले महीनेमे हुई देशकी मुख्य मुख्य हलचलोंका भी उल्लेख करना चाहिए। सभी लेखो और नोटोकी भाषा यथासम्भव सरल कर देनेके लिए सम्पादकको सदा सचेष्ट रहना चाहिए।

प० देवीदत्तजी, इसे पटल बाबूको सुना दीजिएगा। पहुँच लिखिएगा।

१६–२–१९३३ म० प्र० द्विवेदी

[१५२]

दौलतपुर, रायबरेली
२—३—३४

नमस्कार,

पो० का० आज मिला। पञ्चाङ्ग और पुस्तक कल्ही मिल गई थी। वाममार्गकी सैर कर ली। आपने यह पुस्तक खूब ही लिखी। हिन्दीमे इसे मै अद्वितीय समझता हूँ। इससे इस सम्प्रदायसे सम्बन्ध रखनेवाले कितने ही भ्रम दूर हो सकते है

फ़रवरीकी 'माधुरी'मे मैने बेंकटेशजीका लेख देख लिया। मै उनका पहले हीसे कृतज्ञ था। अब तो पूछना ही क्या है? लेखमे मेरी आलोचना कम, ग्रन्थकी और सभाके कर्णधार महाशयो हीकी अधिक है। तिवारी जीने अपनी छात्रावस्थामे मेरी बहुत मदद की है! उसका खयाल जब आता है तब मै उनके उपकारके भारसे दब-सा जाता हूँ। मिलें तो उनसे कहना, मुझपर झूठे लाञ्छन न लगाया करे। 'कुमारसंभव'मे कालिदासने अनुचित शृङ्गार वर्णन किया है। इस कारण मैने कविकी खबर "कालिदासकी निरङ्कुशता" के शुरू हीमे ली है। पर मुझे स्मरण होता है कि वेंकटेशजीने अपने किसी लेखमे मुझपर यह इलजाम लगाया है कि मैने उसपर कुछ कहा ही नही। मेरी तबीयतका हाल आप क्या पूछते है? अच्छे रहनेपर भी आप मुझे बीमार ही समझिए। पटल बाबूकी कृपासे भोजन-वस्त्रकी कमी नहीं, इस सुखको मै थोड़ा नही समझता।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१५३]

दौलतपुर, रायबरेली
१६—४—३३

शुभाशिषः सन्तु,

अप्रैलकी 'सरस्वती'के "नये आयोजन" मे सम्पादकोने जो मेरा अभिनन्दन किया है वह सीमासे आगे निकल गया है। तथापि उसे पढकर मेरी आखोसे आनन्दाश्रु टपक पड़े। अभिनन्दन तो ग़ैरोंहीके द्वारा किया गया अच्छा लगता है। मैं तो इंडियन प्रेसको अपना अन्नदाता समझता हूँ। वह मुझे अपना आश्रित समझे रहे। यही प्रार्थना है। *

कृतज्ञ
म० प्र० द्विवेदी

[१५४]

दौलतपुर
२०—१०—३८

नमस्कार,

बहुत समय हुआ, मैंने 'सरस्वती'मे 'स्तुति-कुसुमाञ्जलि' पर एक या दो लेख लिखे थे। उन्हे देखकर काशीके प्रेमवल्लभ शास्त्री मुग्ध हो गये। उन्होने समस्त पुस्तकका हिन्दी भावार्थ लिखा—सान्वय। वह इण्डियन प्रेस, काशीमे मूल समेत छप रहा है। अद्भुत पुस्तक है। शास्त्रीजी अल्पवयस्क पर बड़े अच्छे कवि और पण्डित हैं। गरीब हैं। माँग जाँच

* यह पत्र इ० प्रे० के मालिक श्री हरिकेशव घोषको लिखा गया था।

कर किसी तरह छपाईका खर्च दे रहे हैं। अभी देना बाकी है। पुस्तककी छपाई समाप्त प्राय है। ज़रा एक कॉपी मँगाकर देखिए। इण्डियन प्रेस कापी राइट लेना चाहे तो थोड़े ही खर्चसे मिल सकता है। ज़रा पूछिए। उत्तर दीजिए। मेरे पासके छपे फ़ार्म पं० मातादीन ले गये हैं।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

पं० किशोरीदास वाजपेयी

श्री किशोरीदास वाजपेयीकी प्रारम्भिक शिक्षा वृन्दावनमें हुई। १९१९ में काशीसे शास्त्री किया। १९३०, ३४ और ४२ के राष्ट्रिय आन्दोलनोंमें भाग लिया। नौकरीसे हटाये गये, सजा हुई और नजरबन्द भी रहे।

आगरासे निकलनेवाले "मराल" नामक मासिक पत्रका सम्पादन किया। व्याकरणके अधिकारी विद्वान् माने जाते हैं। 'द्वापरकी राज्यक्रान्ति', 'लेखन कला', 'अच्छी हिन्दीका नमूना', 'मानवधर्म मीमांसा', 'कांग्रेसका संक्षिप्त इतिहास' और 'व्रजभाषाका व्याकरण' आदि आपके ग्रन्थ प्रकाशित हैं।

पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदीके भक्तोंमें हैं। आजकल कनखल, हरद्वारमें रहते हैं। आपसे द्विवेदीजीसे बहुत पत्र-व्यवहार हुआ था। आपके पत्र हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयागमें सुरक्षित हैं।

[हिन्दी साहित्य-सम्मेलनके संग्रहालके सौजन्यसे]

[१५५]

दौलतपुर, रायबरेली
१२–८–३२

शुभाशिषः सन्तु,

८ अगस्तका पोस्टकार्ड मिला। आपकी कौटुम्बिक व्यवस्था ज्ञात हुई। मेरा भी कुछ-कुछ हाल वैसा ही है। अपना निजका कोई नहीं, दूर-दूरकी चिड़ियाँ जमा हुई है। खूब चुगती हैं। पुरस्कार स्वरूप दिन-रात पीड़ित किये रहती है।

प्रयागमें वही कहींके राजा साहब या उनके भाई मुझसे मिलने आये थे। साथ मे, शायद उनके प्राइवेट सेक्रेटरी एक ग्रेजुएट भी थे। नाम भगवतीचरण था कुछ ऐसा ही था। सारे पुराणोका हिन्दी अनुवाद निकालने वाले हैं। मुझसे किसी योग्य सहायकका नाम पूछते थे, जो उनके यहाँ रहकर वह काम करे। इसीसे मैंने आपसे आपकी आमदनी पूछी। मगर आप जहाँ हैं वहीं रहे। वहीं सब तरहका सुभीता है। ये राजे देहात मे रहते है। उनकी बातोका कुछ ठिकाना भी नही।

पं० देवीदत्तके नाम चिट्ठी भेजता हूँ। जी चाहे भेज दीजिएगा। नहीं तो फाड़ डालिएगा। मेरी राय तो है 'न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत्'।

'स्तुति-कुसुमाजलि' मे एक स्तुति है कवि-काव्य प्रशंसा स्रोत। आपको भी पसन्द हो तो उसके चुने हुए श्लोकोको सानुवाद कहीं प्रकाशित करा दीजिएगा। लोग देखें अच्छे कवि और अच्छी कविता किसे कहते है, कल्याण वाले स्तुति कु० का अनुवाद मुझसे कराना चाहते है। एक लेखक भी देनेको तैयार हैं। पर मुझमें इतनी शक्ति नहीं। किसीने अनुवाद उन्हे भेजा भी है पर वह इन्हे पसन्द नहीं।

मै ज्वालापुरमे महीनो सपत्नीक रह चुका हूँ, वहाँके गुरुकुल। कनखल, हरद्वार सब देखे हुए हैं। अब कही जाने लायक नही। शरीर शिथिल और जर्जर है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१५६]

दौलतपुर, रायबरेली
२९-७-३२

भैय्या किशोरीदास,

चिरञ्जीवी भूयाः,

जुलाईकी 'माधुरी'मे आपका लेख पढ़े बिना मुझसे न रहा गया, मनोमुकुल खिल उठा। आप सहृदय ही नहीं, काव्यज्ञ और साहित्यशास्त्रज्ञ भी है। कभी-कभी इसी तरह इन लोगोको खटखटा दिया करो। इनकी हरकतें देखकर यदा-कदा मेरा जी जल उठता है। कविता कविकर्म्मके आप विशेषज्ञ है और—

"विना न साहित्यविदा परत्र
गुणः कथञ्चित्प्रथते कवीनाम्।
आलम्बते तत्क्षणमम्भसीव
विस्तारमन्यत्र न तैलबिन्दुः ॥"

आप कभी-कभी ऐसे वाक्य लिख देते हैं।

पहले सम्पूर्ण मनोभावोको दो श्रेणियोमे विभक्त कर दिया गया है।

संभले रहिए, महावैय्याकरण पं० कामताप्रसाद गुरु कहीं खफा न हो जायँ।

मेरी तबीयत आजकल अच्छी नहीं।

शुभाकांक्षी
म० प्र० द्विवेदी

[१५७]

दौलतपुर, रायबरेली
१७—११—३३

आशीष,

मुकुलित वगैरहके साथ स्फुटको आप भूल गये। हिन्दीके कोविद उसे फुटकरके अर्थमे लिखते हैं। जिसने लघु-कौमुदीके भी दर्शन नहीं किये उसे बच्चोका तारतम्य आप सिखलाना चाहते है।

आपके लेख देखकर मुझे बड़ी खुशी होती है। आप खूब लिखते है। खेद है कि मै बहुत ही कम पढ सकता हूँ। मेरा उन्निद्र रोग आजकल बहुत बढ़ गया है। व्याकुल रहता हूँ। एक कार्ड लिखनेसे भी गश आ जाता है। स्मृतिका यह हाल है कि आपका पता भूल गया।

शुभेच्छु
म० प्र० द्विवेदी

[१५८]

दौलतपुर, रायबरेली
२२—२—३४

शुभाशिषः सन्तु,

आपका भेजा हुआ ब्राह्मी तैल एक हफ्तेसे लगा रहा हूँ। फल कुछ समय बाद शायद मालूम हो।

मेरी आँखोंमे मोतियाबिन्दु प्रारम्भ हो गया है। एक अमेरिकन दवा आखोमे अब तक डालता रहा हूँ। लाभ नदारद। अब एक देशी दवा शुरू की है। पण्डित श्रीराम शर्म्माने कमलमधु भेजा है। यह नुसखा पं० शालग्राम शास्त्रीका है। बड़ी तारीफ़ सुनी है, इसे भी आँखोमे डालूँगा।

आजकल मेरा घर सूना-सा है। भानजे साहब और उनकी पत्नी कानपुरमे हैं। दोनोको कुछ शिकायत थी। दवा कराने गये हैं।

हिन्दीके पत्रो और पत्रिकाओको कुछ समयसे एक संक्रामक रोग हो रहा है। इनके सम्पादक उर्दूकी नई-पुरानी दूषित कविताएँ छाप रहे हैं। कुछ हिन्दीके कवि भी उर्दूकी बहरोंमे फातफूत कर रहे हैं। उधर उर्दूवाले हिन्दीके दोहो और चौपाइयो तककी दाद नहीं देते। वहीं अरबी-फारसीकी बहरें और एक ही छन्दमे वही बेतुकी कई तरहकी बाते। बिस्मिलजी भी खूब जोर बाँध रहे हैं। पुराने उर्दू कवि तो हिन्दीमे, कोई-कोई, कुछ लिख भी गये हैं। पर आजकलके शायर हिन्दीको अछूत समझ रहे हैं। आपको भी ये बातें खटके तो कभी-कभी हिन्दीके गुमराह लिक्खाड़ोंकी खबर तो ले लिया कीजिए।

आशा है, आप सकुटुम्ब अच्छी तरह हैं।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१५९]

दौलतपुर, रायबरेली
२६—७—३४

शुभाशिषो विलसन्तु,

आपका पिछला कार्ड पढ़नेपर मुझे आपका अनुरोध मानना पड़ा। सुबह चाय पीना छोड़ दिया। सिर्फ़ पाव डेढ पाव दूध पी लेता हूँ। अखबार देखनेमे भी कमी कर दी। इससे कुछ लाभ होता मालूम देता है। उचित परामर्शके लिए आपको धन्यवाद।

अजी वह भूमिका नहीं, प्रस्तावना है जिसकी आपने खबर ली है। बाबू श्यामसुन्दरदासकी लिखी प्रस्तावनामे और किस बातकी आशा की

जा सकती थी। अफ़सोस है राय कृष्णदासने भी उसपर दस्तखत कर दिये। बाबू साहबके कोशमे नन्द धातु और अभिनन्दन शब्दका अर्थ है भली बुरी आलोचना करना।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६०]

दौलतपुर, रायबरेली,
१-९-३४

शुभाशिषः सन्तु,

भारतमे वीरभद्रके दर्शन हुए। ये लोग सर्वदा उपेक्षाके पात्र हैं। मेरी एक पुस्तक है:—'वाग्विलास' उसमे एक लेख है 'आर्यसमाजका कोप'। उसमें इन लोगोकी चित्तवृत्तिका निदर्शन है और अंतमे लिखा है:—

"येषां चेतसि मोहमत्सरमदभ्रान्तिः समुज्जृम्भते
तेऽप्येते दयया दयाघन विभो सन्तारणीयास्त्वया ॥"

न देखी हो तो लहेरियासरायसे एक कापी भिजवाऊँ। आशा है आप अच्छी तरह है। मेरा हाल वही यथापूर्व है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६१]

दौलतपुर
८-९-३४

शुभाशिषः सन्तु,

४ ता० का पोस्टकार्ड मिला। कविताकी पहुँच शायद कल ही लिख चुका हूँ।

हिन्दी पुस्तक-भंडार, लहेरियासरायको लिख दिया कि एक कापी 'वाग्विलास'की आपको भेज दें।

चाय छूट गई। अब उसकी याद भी नहीं आती। मगर नींदका करीब-करीब वही पुराना हाल है। वर्षामे अतिसार संग्रहणी अक्सर हो जाती है। कुपथ्यसे बचिए। सुपच भोजनसे शिकायत जाती रहती है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६२]

दौलतपुर, रायबरेली
२३—९—२४

शुभाशीर्वाद,

आपने तो पद्य-पत्रोंका तॉंता बॉंध दिया। १७ ता० का भी पत्र मिला। आप भावमयी कविता कर सकते है। आजकलके कितने ही तुक्कड़ आपके सामने कोई चीज़ नही। कविताका प्रकाशन अब शुरू कर दीजिए। मगर मुझे जब कभी लिखना गद्यमे ही लिखना। गद्यमें बिना प्रयास जी खोलकर लिखनेको मिलता है। 'वाग्विलास'मे आपको मेरे झगड़ालूपनके नमूने मिले होगे। मेरी पूर्वचर्या विलक्षण थी। विवाद कर बैठता था। सहनशीलताका अभाव-सा मुझमे था। वह पुस्तक पढ़नेपर कहीं आप मुझसे विरक्त या उदासीन न हो जायॅं, यह डर मुझे था। वह अब दूर हो गया।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६३]

दौलतपुर, रायबरेली
१५–८–३५

शुभाशिषां राशयो विलसन्तु,

११ अगस्तका पो० का० मिला। खुशी हुई। आँखोंका वही हाल है। कमलमधुने कुछ फायदा नही किया। जान पड़ता है, जैसे और इन्द्रियाँ शिथिल हो रही है, वैसे ही दृष्टि भी। दवादारू व्यर्थ है।

शीतकालमे इधर आना हो तो मुझसे ज़रूर मिलना।

गंगा पहले तो दर्शन देती थी, अब कई महीनेसे नही। जरूरत भी नही। पढ़ नही सकता।

उस कहानीमे लछिमनपुरके एक महाशयका जिक्र है, वे शायद पं० शिवपाल अग्निहोत्रीथे। डाकखानोंके सुपरिएटेएडेएट थे। झाँसीमे हम दोनों अक्सर मिलते थे। एक बार उनके घर भी मैं हो आया हूँ।

'आदर्श'के पिछले अंकमें सम्पादक महाशयने कुछ पत्र-पत्रिकाओंको फटकार बताई है। एक फटकार मुझपर भी पड़ी है। लिखा है। मैं बदलेमें आये हुए पत्र लिखकर लौटा देता था। पर बात ऐसी नही।

किसी आर्यसमाजीने एक पुस्तक समालोचनाके लिए भेजी। उसमे लिखा था स्वामी दयानन्दके गुरु भट्टोजीके चित्रपर नाम पर जूते लगवाते थे। इसपर मैने कड़ी टिप्पणी की। आर्यसमाजी बिगड़े। एक सरकुलर निकाला कि कोई समाजी मुझे पुस्तके न भेजा करे। जवाब मैने 'सरस्वती'मे दिया। 'आर्यसमाजका कोप' उसमे शायद मैने लिखा कि अगर कोई भेजेगा भी तो मै न लूँगा लौटा दूँगा। इसी प्रतिज्ञाकी पूर्तिमें मैने शायद कुछ पुस्तकें लौटाई हों। बदलेके पत्र-पत्रिकाएँ नहीं लौटाई। सम्पादक रामचन्द्रजी महाशय आप हीके शहरमे हैं। इससे मैंने यह कैफियत दे दी है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६४]

दौलतपुर, रायबरेली
२४—८—३५

शुभाशिषः सन्तु,

२० अगस्तका पत्र मिला। आपके कुछ दोहे कही छपे हुए मैंने देखे है। मुझे बहुत अच्छे लगे। उनमे प्रसाद गुण बहुत काफी जान पड़ा। जरूर छपाइए। नाम भी पुस्तकका आपने अच्छा रखा। मै होता तो मुकुल, मंजरी, मानजी, मनोविनोद आदि नाम रखता।

मै सुरमा न लगाऊँगा। जाने दीजिए। भगवान्‌के भरोसे पड़ा रहूँगा।

शुभानुध्यायी
म० प्र० द्विवेदी

[१६५]

दौलतपुर, रायबरेली
७—१—३६

शुभाशिषः सन्तु,

'तरंगिणी'की कापी मिली। देखकर चित्त प्रसन्न हुआ। बहुत अच्छी छपी। कागज जिल्द सभी सुन्दर है।

भूमिका तो अनेक ज्ञातव्य बातोसे पूर्ण है। यथेष्ट पाण्डित्य-प्रदर्शक है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६६]

दौलतपुर, रायबरेली
७-३-३७

शुभाशिषो विलसन्तु,

४ ता० का कार्ड मिला। आपको पुत्रकी प्राप्ति हुई यह सुनकर बड़ी खुशी हुई। मधुसूदनके जोड़का कोई अच्छा नाम नहीं सूझ पड़ता। मेरी बुद्धिकी जड़ता बढ़ गई है। नीचेके नामोमेसे कोई पसन्द हो तो चुन लीजिए।

मुकुन्द माधव, मयंक मोहन राधिकारमण श्रीकान्त
शशांक सुन्दर राधिका रंजन रजनीकान्त, शशिशेखर
कमलाकान्त, राजीवलोचन चारुचन्द्र।

मनोरमाका विवाह कल रातको हो गया। बड़ी भीड़ घरमे भी, बाहर भी है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६७]

दौलतपुर
१५-३-३७

शुभाशीष,

१२ का पोस्टकार्ड आज मिला। आपके बालबच्चे अच्छी तरह हैं यह जानकर ख़ुशी हुई।

पुस्तकोका समर्पण बिलकुल ही बेकार है। मैंने भी अपनी दो एक पुस्तकोंका समर्पण पहले किया था। मगर फिर वैसी भूल नहीं की।

आपके प्रेमपाशमे मैं यो ही फँसा हूँ । समर्पणसे क्या होगा ? पर यदि आपका कुछ काम निकलता हो या आपको किसी प्रकारकी सन्तुष्टि होती हो तो कीजिए। मुझे कोई आपत्ति नही।

आप विवाहमे आते तो कुछ पाते। बड़ी भीड़ थी। बाराती तो २३ ही थे। पर मेरे माननीय आमंत्रित जनोकी संख्या ६०, ७० तक हो गई थी। सब गये, सिर्फ़ ३ बाकी हैं। आना तो मधुसूदनको ज़रूर लाना।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[१६८]

दौलतपुर

५—५—३८

शुभाशिषो विलसन्तु,

जयन्तीकी बधाईका पोस्टकार्ड मिला। धन्यवाद। आपने मुझे मेरे जन्म-दिनकी याद दिला दी। मुझे ही भूल गया था। कुटुम्बियोको कैसे याद रहता। किसीने कढ़ी तक बनाकर नहीं चाटी। मेरे कुटुम्बी तो आपही की तरह सन्मित्र है। उन्हींका भरोसा है। चिरञ्जीवी भूयाः।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

विविध-पत्र

[१६६]

पं० गुरुदयाल त्रिपाठीको †

दौलतपुर, रायबरेली

१—१०—२०

श्रीयुत त्रिपाठीजीको प्रणाम,

चन्द्रपालसिंहने आपका पत्र दिया। आपने और पं० शिवगोविन्दने बड़ी कृपा की जो बाग़के मुकद्दमेमे पैरवी कर दी। मैं कहाँ तक आपका शुक्रिया अदा करूँ। मै आमरण आपसे उऋण नहीं। कृपा करके डिप्टी साहबके हुक्मकी नकल भिजवा दीजिए।

पर-सवर्णका सवाल हिन्दीमे उठाना अनुचित है। उसका खयाल तो संस्कृतमे भी लोग कम ही रखते है। आप खुशीसे अन्त, दिसंबर, कर्म्मकाड आदि लिखिए। इस तरहकी लिखावट सर्वथा शुद्ध है। नागरी प्रचारणी सभा, काशी वाले तो अनुस्वार हीसे काम चलाते है। उनके इतने बड़े कोशमे भी पर-सवर्णका खयाल नही रक्खा गया।

जिस वक्त चन्द्रपाल चलने लगे मेरे पास एक भी रुपया न था। १) का नोट बतौर Curio या curiosity के बक्समे रख छोड़ा था। लाचार वही भेज दिया। मैने कहा, शायद ट्रेज़रीवाले ले ले। मगर Currency office के सिवा शायद ही कोई उसे लेकर रुपया दे। आप उसे मेरी बेवक़ूफ़ीका चिह्न समझकर पड़ा रहने दे। आज १) मनीआर्डरसे भेजता हूँ। कोर्ट फीस वग़ैरहकी कीमत तो पं० शिवगोविन्दको न देनी पड़े। मै उनसे और आपसे कभी उद्धार नही। मिहनताना देने या भेजनेकी तो हिम्मत ही नहीं होती।

आपका

म० प्र० द्विवेदी

---

† पं० गुरुदयाल त्रिपाठी, एडवोकेट, रायबरेली।

[१७०]

दौलतपुर, रायबरेली
१३ अगस्त ३४

श्रीमान् त्रिपाठीजीको सादर प्रणाम !

बडे असमंजसमे पड़कर आज आपको कुछ कष्ट देने पर उतारू हो गया हूँ।

रायबरेलीमे श्रीमान् शिवशंकरजी त्रिपाठी नामके कोई वकील—शायद एडवोकेट—है। आपके वंशज नही तो आपके फिरके ही के ज़रूर होगे। डिस्ट्रिक्टबोर्डकी चेयरमैनीका भारी बोझ आजकल उन्हींके दोनो कन्धो पर है। मेरी तरफसे हाथ जोड़कर मेरी एक प्रार्थना उन तक पहुँचाइए और अपनी तरफ़से उसकी मंजूरीके लिए उनसे सिफारिश भी कीजिए।

यहाँ दूर-दूर तक न तो कोई अस्पताल या दवाखाना है और न औषधालय। वैद्य एक आध दूर-दूरके मौजोमे है। पर चतुरी चमार और प्रेमा पासीको मुफ्त दवा देने वाले नही। मैंने अपने खर्चसे कुछ आयुर्वेदिक और कुछ एलोपैथिक पेटेंट दवाएँ मँगा रक्खी हैं। भानजा मेरा होमियोपैथिक बक्स लिये बैठा रहता है। मगर मै एक मामूली ग्रहस्थ हूँ। यह सब खर्च नही उठा सकता। दिनमे दस पाँच मरीज घेरे ही रहते है। ग़रीबोका दुख-दर्द नही देखा जाता।

यहाँ तक लिख चुकने पर लोकई चमारकी दुलहिन सिर पीटते आई। उसका १४ वर्षका लड़का बीमार है। हैजेके दस्त आ रहे है। उसे अर्क कपूर दिया। न फायदा होगा तो क्लोरोडिन दूँगा।

तीन वर्षसे बोर्डको लिख रहा हूँ कि यहाँ एक वैद्य भेज कर औषधालय खोल दो। पहले तो बोर्डने ऊलजलूल एतराज किये। फिर

मंजूरी दे दी। लिखा कि कहींका औषधालय बन्द करके यहाँ खोल दिया जायगा। तब तक बोर्ड पर सरकारने कब्ज़ा कर लिया। अब जो फिर हमलोगोंकी अमलदारी हुई तो कोई चिट्ठीका जवाब तक नहीं देता।

राजा साहब शिवगढ़की मुझपर कृपा है। वे दौलतपुर आनेवाले भी थे। पर मैं उन दिनों बीमार था। उन्होंने अपने सिर पर, खुद ही लाई हुई, बला पूर्वनिर्दिष्ट त्रिपाठीजी पर पटक दी है। बाबू सीतलासहाय की मारफत राजा साहबसे सिफ़ारिश कराई तो त्रिपाठीजी हीले हवाले कर रहे हैं। कहते हैं बजटमे गुंजायश नहीं, पहलेसे क्यो नही कहा! जैसे बोर्डके दफ्तरके काग़ज़ात नष्ट हो गये हों! प्रार्थना कीजिए कि किसी और मदमे ढाई तीन सौकी बचत निकाल ले, या खास तौरसे मंजूरी मागें, या बजटसे ज़ायद खर्च हो जाय तो Supplementary बजट पेश करें। करने और देनेके हजार तरीके हैं। इस तरफ़के देहाती सिर्फ बोर्डके स्कूलोसे ही फ़ायदा उठाते है। हम लोगोसे अब Tax भी ज़्यादा लिया जाता है। हम लोगोके लिए दवा-दारूका भी तो कुछ प्रबन्ध करना चाहिए।

आपके भाई साहब या आपके अन्य मित्र जो बोर्डके मेम्बर हों उनसे भी कहिए, कुछ मदद करें। मुझे तो विश्वास है कि आपकी सिफ़ारिशसे चेयरमैन त्रिपाठीजीका हृदय ज़रूर पसीज उठेगा और वे मेरा मनोरथ सफल करके यहाँके दीन-दुखियोंके आशीर्वादका पुण्य प्राप्त करेंगे। उन्हे महाभारतके इस श्लोककी याद दिलाइएगा—

"न त्वहं कामये राज्य न स्वर्गं नापवर्गकम्।
कामये तापतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्॥"

कृपापात्र

महावीरप्रसाद द्विवेदी

[१७१]

दौलतपुर, रायबरेली,
७–११–३४

श्रीमान् त्रिपाठीजीको बहुशः प्रणाम

कल सुबह एक पोस्टकार्ड मैं आपको भेज चुका हूँ। कल ही शामकी डाकसे ३ ता० का आपका कार्ड मिला। अनेक धन्यवाद।

"कल्याणमस्तु भवतां हरिभक्तिरस्तु।"

अब जो काम शेष रह गया है उसे कृपापूर्वक सिद्ध करा दीजिए। अन्यत्र यदि कम्पौंडर रहता हो तो वह भी दिया जाय। सबके लिए रहने की जगह बनी बनाई तैयार है। मेरे संग्रहमे आयुर्वेदकी ढेरों पुस्तकें हैं। डाक्टरी और होमियोपैथीकी भी है। जो कोई भेजा जाय अनुभवी और संस्कृतज्ञ हो। उसे अपनी विद्या और चिकित्सा-कौशलकी उन्नतिके लिए यथेष्ट सामग्री है। यहाँ दूर-दूर तक चिकित्साका प्रबन्ध नहीं। मेरा भानजा दिन भर दीन-दुखियोंको होमियोपैथी दवाएं बाटा करता है। मेरे पास भी आयुर्वेदिक और कुछ पेटेंट दवाएं हैं। उनका उपयोग मैं भी औरोंके लिए करता हूँ।

आपकी कृपाके लिए पुनरपि धन्यवाद।

कृपापात्र
म० प्र० द्विवेदी

[१७२]

c/o कमर्शल प्रेस,
घंगिया मनीराम, कानपुर
१३–१२–३४

श्रीमान् त्रिपाठीजीको सादर प्रणाम,

गाँवपर मेरा उन्निद्रता रोग बहुत बढ़ गया। और भी कुछ शिकायतें

नई-नई पैदा हो गईं। इससे यहाँ इलाज कराने चला आया। अब कुछ-कुछ आराम है। यहाँ आये १ महीना हो गया। २५ तारीख़ तक घर लौट जानेका विचार है। शर्त यह है कि तबीयत ठीक रहे।

बन्दूक रखना मेरे लिए जीका जंजाल हो रहा है। मैं जमा कर देना चाहता था। पर घरवाले रखना चाहते हैं। मेरी तरफ़ चोरियाँ बहुत होती हैं। डाके तक पड़ जाते हैं। पिछली कई दफ़े वहाँ दौरेपर हाकिमोसे लायसेंस नया करा लिया था। इस साल यहाँ पड़ा हूँ। लायसेंस भेजता हूँ। तीन सालके लिए नया करा लीजिए। फीस ७॥) और ऊपरी खर्च २॥) इस तरह १०)का मनीआर्डर आज आपके नाम भेज रहा हूँ। लैसंस इसी चिट्ठीके साथ है। वकालतनामेका फ़ार्म भी। एक चिट्ठी भी D. C. के नाम भेजता हूँ। ज़रूरत पड़े तो दे दीजिएगा। वे मुझे जानते है; मेरे घर आये हैं। जो न जानते हों उनसे कह दीजिएगा—खैरख्वाह हूं; पंचायतका पञ्च हूँ इत्यादि। काम हो जानेपर लायसेंस रजिस्ट्री करके लौटा दीजिएगा। २३ दिसम्बरके बाद पत्र दौलतपुर भेजिएगा। पं० शिवगोविन्दजी कृपा करके मेरे वकील हो जायँ। कष्टके लिए क्षमा-प्रार्थना।

कृपापात्र

महावीरप्रसाद द्विवेदी

[१७३]

दौलतपुर, रायबरेली

१५-१-३५

श्रीमान् त्रिपाठीजीको प्रणाम,

सेमरीके लाल वीरेन्द्रबहादुरसिंहने रायबरेलीमे कोई संघ स्थापित किया है या करनेवाले है। उसके सम्बन्धमें मुझसे रायबरेली चलनेको इसरार कर रहे हैं। मै इन बातोसे सदा दूर रहा हूँ और रहना चाहता

हूँ। मैं प्रसिद्धि नहीं चाहता। मेरी इज़्ज़त आप लोगोंके हाथ है। कृपा करके नीचे लिखी हुई बातोंका जवाब दीजिए:—

इस आयोजनमे अग्रणी कौन हैं? शहरके और ज़िलेके कौन कौन संमाननीय सज्जन इसके पृष्ठपोषक है? आजतक कितने सज्जन इसके मेम्बर हुए हैं? संघके लिए कौन-सा स्थान चुना गया है, वह कैसा और किसका है? संघकी नियमावली या Article of Association बन गई है या नही? बनी है तो कहाँ है? आपकी निजकी राय इसके सम्बन्धमे क्या है? कष्ट तो होगा; पर रायबरेलीमे आपके सिवा मेरा सहायक और कोई नहीं। मुझे उपहाससे बचा लीजिए।

बन्दूकके लायसेंसकी किताब मिल जाने पर भेज दीजिएगा। बन्दूक मेरे पास १ जनवरीसे बिला लायसेंस है।

कृपापात्र

म० प्र० द्विवेदी

[१७४]

दौलतपुर, रायबरेली
२३—१—३५

श्रीयुत त्रिपाठीजीको प्रणाम,

२० जनवरीका कृपापत्र मिला। संघके विस्तृत समाचारके लिए धन्यवाद। इधर दो तीन महीनेमे मै कही बाहर जाने योग्य नहीं। आगे आप जो आज्ञा देंगे करूंगा। आँखोमे मेरी मोतियाबिन्द शुरू हो गया है।

अपनी तन्दुरुस्तीका क्या हाल लिखूं। शरीर किसी तरह लस्टम पस्टम चल जाता है, पं० प्रतापनारायण मिश्रकी एक लाइन है:—

"छिन मां चटक छिनै मां अनकनि जस बुझात खन होय दिया।"

बस मै इसीका उदाहरण हो रहा हूँ।

डिस्ट्रिक्टबोर्डके अकौंटेंट पं० चन्द्रशेखरजी मिश्रके पत्रसे मालूम

हुआ कि Supplementary Budget मंजूर हो गया। कृपापूर्वक अपने मित्रों पर ज़ोर डाल कर अब यहाँ औषधालय खुलवा दीजिए। चेयरमैन साहबसे भी मैंने प्रार्थना कर दी है।

कृपापात्र
म० प्र० द्विवेदी

[१७५]

दौलतपुर, रायबरेली
१७–७–३५

श्रीमान् तिवारीजीको सादर प्रणाम,

कालीचरण सुनारके हाथ आपकी १५ मार्चकी चिट्ठी मिली।

इण्डियन प्रेसके बाबूने भूलसे पारसल रायबरेली भेज दिया। उसकी रसीद मैंने २३ फरवरीको आपको भेजी थी। लिफ़ाफेके भीतर पारसलका महसूल ६ आना भी था। वह किसीने भाँप लिया और चिट्ठी उड़ा दी। अब मैंने उसे प्रेसको लिख दिया है कि अपना पारसल वापस मँगा ले।

आपने १॥) नाहक लौटाया। जिन महाशयके नाम वकालतनामा था उन्हींको दे देना था। लायसेंस बन्दूक़ पुलिससे अब तक नहीं मिला। शायद वे लोग अपने आप भेजें। ख़बर तक न देंगे। मुझमें थाने तक जानेकी शक्ति नहीं। खैर आपकी चिट्ठी लायसेन्सकी जगह रख लूँगा। ६ महीने हुए तलवार वगैरह ५ हथियार पुलिसमें जमा कर दिये थे। अब उनको रखनेकी मुमानियत नहीं। पुराना नोटिफिकेशन हो गया। पुलिसको लिख चुका—हथियार लौटाओ, उस दिन अस्थाना साहबको भी लिखा। मगर कोई दाद नहीं देता। मालखानेके मुन्तज़िमने लिखा है—यहाँ आकर ले जाव। ये है इंतजामकी खूबियाँ।

पं० शिवशंकर तिवारीने मुझे ..।८ ...युक्त कुछ यहां लिखा। एक महाशय रायबरेली गये थे। वे कहते थे, पिछली मीटिंगमे कुछ नही हुआ। रुपयेकी मजूरी मिल जाने पर भी किसीने रेज्योल्यूशन नही मूव किया कि इस रुपयेसें दौलतपुरमें दवाखाना खोला जाय। ये है, हमारे स्थानिक स्वराज्यकी नियामतें! भगवान् करे, यह बोर्ड फिर Supersede हो जाय। भला हो इन्चिसन साहबका। वह यहाँ खुद आया। दो घण्टे तक मेरे कमरेमे बैठा। शरबत-पानी किया। मेरी प्रार्थना पर मवेशीखाना १ हफ्तेके अन्दर खोल दिया। कई हज़ार रुपयेकी पुख्ता इमारत मदरसेकी बनवा दी। मेरी अक्लपर पत्थर पड़े थे। कहता तो दवाखाना भी कबका खुल गया होता। एक ये हज़रत हमारे देशी भाई है जो चिट्ठीका जवाब तक नहीं देते। मवेशीखानेका बाड़ा लकड़ी काटोका है। एक ऊँट उस दिन उसे तोड़कर भाग गया। बोर्डका ८०) का नुकसान हुआ। एक भैसने कल रातको फाटक ही तोड़ डाला। मरम्मत कराओ तो छः छः महीना तक रुपया ही नही मिलता। कहाँ गई आपकी वह Majority। इन सब ऐबोको दूर कराइए। २ वर्षसे मवेशीख़ाना है। बोर्डको मुनाफ़ा है। पिछले ११ महीनोमें बोर्डको कई ६०) का Net-profit हुआ है। ८ रोज हुए मैंने चेयरमैन साहबको लिखा है कि अगले बजटमे ढाई-तीन सौ रुपयेको मंजूरी माँग कर पुख्ता इमारत बनवा दें। मगर शायद ही उनके नक्कारखानेमें मुझ तूतीकी आवाज कोई सुने। मुझे मालूम हुआ है कि चेयरमैन साहब पं० जानकीशरणके लड़के हैं। आप जानते ही होंगे वे मुझसे मिलने आपके स्थान पर आया करते थे। मै भी उनसे मिलता रहता था। पर उनके साहबज़ादे मुझपर कम कृपा करते है। अबके दफे मैंने उन्हें हिन्दीमे चिट्ठी लिखी है और शेखसादीकी इस उक्तिकी उन्हें याद दिलाई है—

"अय ज़बरदस्त ज़ेरदस्त आज़ार,
गर्म ता कै बुमानद ईं बाज़ार,
बचे कार आयदत जहाँदारी,
मुर्दनत वेह के मर्दुम आज़ारी,"

अगर वे आपके मित्र हों तो मेरी यह चिट्ठी उन्हे सुनाइए। शायद मेरे रोने-धोनेका कुछ असर उन पर हो। दवाखानेकी मंजूरी कराइए। D. C. की मंजूरीसे बहुत-सा रुपया पञ्चायतका मैं दवा खरीदनेमे खर्च कर चुका। कोई १००) अपने पाससे खर्च किया। ५, ७ बक्स दवाओके मेरे कमरेमें हैं। देते-देते थक गया। उस दिन D-M. C. आये थे। खुद दवाये देख गये है।

कॉजीहौसकी इमारतके बारेमे मैने पं० चन्द्रशेखर मिश्र, Accountant, को भी लिखा है कि वही कोशिश करके अपने किसी मित्रसे एक रेज्यूल्यूशन पेश कराकर बजटमे Provision रुपयेकी करा दें।

आप धन्य हैं जो रामायणसे प्रेम करते हैं। विनय-पत्रिका भी पढा कीजिए। मै तो कूलद्रुम हो रहा हूँ। संसारमे मेरा आत्मीय कोई नहीं रहा। इस कारण निराश दशामे मै सुबह रोज़ भगवान्से यह प्रार्थना करता हूँ।—

"क्षुद्र सी हमारी नाव चारों ओर है समुद्र
वायुके झकोरे उग्र रुद्र रूप धारे हैं।
शीघ्र निगल जानेको नौकाके चारों ओर
सिंधु की तरङ्गें सौ-सौ जिह्वायें पसारे है॥
हारे सभी भाँति हम अब तो तुम्हारे बिना
झूठे ज्ञात होते और सबके सहारे हैं।

"और क्या कहूँ अहो डुबा दो या लगा दो पार
चाहे जो करो शरण्य शरण तुम्हारे हैं ॥"

लौकिक कार्योंके लिए मै आपकी शरण चाहता हूँ।

शरणार्थी
म० प्र० द्विवेदी

[१७६]

दौलतपुर
४-९-३५

श्रीमान् तिवारीजीको सादर प्रणाम,

एक शिकायत सुन लीजिए, आप लोगोंके प्रयत्न करने और मेरे बहुत रोने-धोने पर बोर्डने यहाँ एक दवाखाना खोला। वैद्य जो आये, सज्जन और शिक्षित थे। उनके लिए मकान दिया, दवाखानेके लिए एक अच्छा कमरा दिया, बैठने और मरीजोको देखनेके लिए बॅगला दिया। वे बड़े आरामसे यहाँ सस्त्रीक रहने लगे। रोज गंगा-स्नान करते थे। वे ४ महीने ही रहे थे कि बिला पूर्व सूचनाके यहाँसे हटाकर रोख भेज दिये गये।

मैने दूसरा वैद्य माँगा तो उनका तबादिला मुल्तवी कर दिया गया। मगर यह हुक्म आनेके पहले ही वे चले गये थे। अब कोई ३ हफ्तेसे यहाँ कोई वैद्य नहीं। बेचारे मरीज दूर-दूर से आते हैं और नाउम्मेद लौट जाते है। चेयरमैनको लिखा तो जवाब नदारद। क्या करूँ, कुछ समझमे नहीं आता। सुनता हूँ, खुशामद ज़रूर कामयाब होती है, वह हजम नही होती—

"केश पचैं, मक्खी पचैं, हालाहल पचि जाय।
जाहि खुशामद पचति है, तासों नाहिं उपाय ॥"

मगर इन लोगोंको खुशामद भी पच जाती है। औषधालयके लिए इतनी आरामकी जगहे दीं। मगर जब २) माहवार किराया माँगा तो सूखा जवाब। हालाँकि बोर्डके पास हजारो रुपया बचतमे दिखाया गया है। यह मुझे चेयरमैन साहबकी रिपोर्टकी उस आलोचनासे मालूम हुआ जो लीडरमे निकल चुकी है।

कृपा करके आप खुद या भाई साहबकी मारफ़त फिर एक बार चेयरमैन साहबसे कह सुन दीजिए।

दवाखाना यहाँका न तोड़ें। जो वैद्य यहाँ थे वे न भेजे जा सके तो और ही कोई भेज दिया जाय। बोर्डके मुलाजिमोंको अगर अपने कर्तव्य-पालनकी चिन्ता नहीं, तो न सही। दया-दाक्षिण्यको तो वे धता न बतावें।

कृपापात्र
म० प्र० द्विवेदी

[१७७]

दौलतपुर, रायबरेली
२६-११-३७

श्रीमान् पं० गुरुदयालजीको सादर प्रणाम,

कृपा करके, मेरे लिए, कुछ बेगार फिर कर दीजिए। बंदूकका लायसंस दिसम्बर ३७ के अन्त तक ही है। उसे अगले ३ सालके लिए फिर नया करा दीजिये। बुढ़ापेके कारण बंदूक लेकर चलनेमें मुझे कष्ट होने लगा है। हो सके तो लायसंसमे एक attendant भी दर्ज करा दीजिए। ऐसा होता है। न हो सके तो न सही।

लायसंस रजिस्टर्ड पैकेटसे अलग भेज रहा हूँ। उसीके भीतर

वकालतनामा भी है। पं० शिवगोविन्दजीको यह काम सौंप दीजिए। वे न कर सकें तो और ही किसीसे करा दीजिए।

१०) का मनिआर्डर भेज रहा हूँ। ७।।) तो तीन सालकी फीस नये लैसंसकी है, २।।) ऊपरी खर्चके लिए है। और जो आज्ञा हो भेज दूँ।

आपको मै बहुधा कष्ट देता हूँ। मुझ पर आपके अनेक एहसान हैं। कहाँ तक धन्यवाद दूँ।

कृपापात्र

महावीरप्र० द्विवेदी

[१७८]

पं० ज्वालादत्त शर्माको

जूही, कानपूर

६—११—१२

श्रीमान्,

कृपा-कार्ड मिला। दर्शन दीजिए। कृपा होगी।

आप शायद जानते ही होगे कि मै शहरसे ३—४ मील दूर देहातमे क्या जंगलमे रहता हूँ। पहले मै यहाँ आरामसे था। पर कई कारणोसे अब तकलीफमे हूँ। यदि आप अपने हाथसे भोजन बना सके और माफ कीजिए बर्तन-चौका भी कर सके तो आप यही चले आइए। अन्यथा नहीं। क्योकि यहाँ अहाते भरमे इस समय एक भी ऐसा आदमी नहीं जो चौका-बर्तन कर सकता हो। इसीसे शिष्टताके विरुद्ध मैने यह बात साफ-साफ लिख दी कि ऐसा न हो जो आपको तकलीफ हो।

भवदीय

महावीरप्रसाद द्विवेदी

[१७९]

दौलतपुर
भोजपुर, रायबरेली
१५-५-१४

नमोनमः,

१२ ता० का आपका कार्ड मिला। पुस्तकोका पैकेट भी मिला।

"Truth" की समालोचना करनेकी शक्ति मुझमे नही। क्षमा कीजिए।

आपका लेख अवश्य छापूँगा। मूलके संस्कृत प्रमाणोका मुकाबला लेखमे उद्धृत प्रमाणोंसे करके बंगला पुस्तक लौटा दूँगा।

आत्मतत्त्व-प्रकाशका अनुवाद प्रकाशित करने लायक है। जरूर छपाइए।

अभी कोई २ महीने यहाँ रहनेका विचार है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

श्री बदरीनाथ भट्टको

[१८०]

दौलतपुर
२७-८-१६

प्रणाम,

महाभारतके विषयमें आपका २५ अगस्तका पत्र मिला। उसका अनुवाद बरसोका काम है। अभी वादा करना न करनेके बराबर है।

शायद उस समय मेरा स्वास्थ्य और भी बिगड़ जाय, क्योंकि मेरी शक्ति दिनपर दिन क्षीण होती जा रही है।

बंगलासे आप अनुवाद कराइए। ३/४ हो जाने पर मुझे खबर दीजिए। उस समय तबीयत काम करने योग्य रही तो संशोधन कर दूँगा। आप एक आदमी दीजिएगा। वह बंगला पढ़ता जायगा। मैं अनुवाद देखता और उसका संशोधन करता जाऊँगा।

पुरस्कारका निश्चय अभी न कीजिए। महीने भर संशोधनका काम करके मैं सूचना दूँगा। सम्भव है, अनुवादक बेपरवाही करे। उनकी बेपरवाहीसे मेरा काम बहुत बढ़ जायगा। उनसे कह दीजिए, अनुवादका मुकाबला और उसमे संशोधन अच्छी तरह किया जायगा। उपाय भर कसर न करें। विशेष करके जनार्दन झाको ताकीद होनी चाहिए।

अनुवादके मैं कुछ नियम भेज दूँगा। उनकी कापी अनुवादकोंको भेज दीजिएगा। उनकी पाबन्दी होनी चाहिए।*

भवदीय

म०प्र० द्विवेदी

---

* यह पत्र पं० बदरीनाथ भट्ट, बी० ए० को लिखा गया था। ये पं० रामेश्वर भट्टके तृतीय पुत्र थे और उन दिनों इण्डियन प्रेसके साहित्य विभागमें, प्रयागमें, काम करते थे। द्विवेदीजीकी इच्छा इनको सरस्वतीका सम्पादक बनानेकी थी। इसीलिए द्विवेदीजीके यहाँसे सरस्वतीकी सामग्री आनेपर भट्टजी जब उसे देख लेते तब वह कम्पोज़ करनेको दी जाती थी। भट्टजी 'बालसखा'के प्रथम सम्पादक थे। इण्डियन प्रेससे अलग होने पर कई वर्ष बाद भट्टजी लखनऊ विश्वविद्यालमें हिन्दी अध्यापक हो गये। वहाँ उन्होंने मकान बनवाये, विवाह किया, सन्तानवान् हुए और युवावस्थामें ही चल बसे।

दीजिएगा। आगे इनका काम आप ही इनकी तरक्की करा लेगा। बड़े बाबूको यह पत्र और इनकी अर्जी सुना दीजिए और जो आज्ञा हो लिख भेजिए। मैं कानपुर जानेवाला हूँ। पर आपके उत्तरकी राह अभी ५, ६ दिन देखकर जाऊँगा। अगर मैं 'सरस्वती'का काम करने लायक हुआ तो ये मेरे सहकारी हो सकेंगे।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

श्रीमती ऊषादेवी मित्रको

[१८२]

दौलतपुर, रायबरेली
४ जून १९३३

देवीजी!

चिट्ठी मिली। उसमे यह पढ़कर कि मै निःसहाय विधवाओंका सहायक हूँ, मै विकल हो उठा; मेरी आखोसे आँसू निकल पड़े।

आपकी चिट्ठीसे प्रकट है कि आप अभी हिन्दी अच्छी तरह नही लिख सकती। शायद आप वङ्गदेशीया है। तथापि आप एक छोटी-सी कहानी हिन्दीमे लिखकर पं० देवीदत्तजी शुक्ल सम्पादक 'सरस्वती', प्रयाग, को भेज दीजिए। उसीके साथ यह पोस्टकार्ड भी नत्थी कर दीजिए। यदि उसमे कुछ भी तत्त्व या मनोरञ्जकता होगी तो भाषाका सशोधन करके वे उसे 'सरस्वती'मे छाप देगे।*

निवेदक
म० प्र० द्विवेदी

*यह पत्र श्रीमती ऊषा मित्र (जबलपुर) को द्विवेदीजीने लिखा था, जिसे उन्होंने पं० देवीदत्त शुक्लजीके पास भेज दिया। यह पत्र भी सम्मेलन के संग्रहालयमें सुरक्षित है।

पं० लक्ष्मीधर वाजपेयीको

[१८३]

दौलतपुर, रायबरेली
३०-१-१५

श्रीमान्,

दिसम्बर १५ मे, ४०) महीनेके हिसाबसे मै २००) दे चुकूँगा। तब मेरा देना सिर्फ़ १,१२०) रह जायगा। यदि जनवरी १६ मे किसी तरह ६००) देनेसे छुटकारा हो जाय तो मै खींच-खाँचकर इतने रुपयेका प्रबन्ध करनेकी चेष्टा करूँगा। अगले साल मुझे अपनी······भानजीकी शादी करना है। इस कारण मै चाहता हूँ कि यदि बैंकका देना चुकता कर दिया जाय तो उस कामकी फ़िक्रमे लगूँ। मै रिश्वत देना नहीं चाहता। बीस-पचीस रुपये मै आपको खुशीसे भेज दूँगा। मै इसीको पुण्यखाते देना समझूँगा। इतनेसे यदि काम न चल सकेगा तो दस पाँच और दे दूँगा। इस रुपये को आप चाहे जिसे दे और जिस तरह खर्च करें। आप अपने मित्रोसे मिलकर मुझे लिखिए कि यह हो सकेगा या नही। यदि हाँ, तो क्या कारंवाई करनी पड़ेगी। ड्राफ्ट जैसा वे बतावे लिख भेजिए, या जो वजूहात लिखनेकी राय दे वही बता दीजिए। बड़ी कृपा होगी। मै झूठ बोलनेसे डरता हूँ। यह मुझे न करना पडे, तो बहुत अच्छा हो। मैं लाहौर चला आता। मगर मेरी तन्दुरुस्ती इतनी दूर सफर करने योग्य नहीं। अतएव इस उपकारका भार आप ही पर छोड़ता हूँ।

"सिपुर्दम ब तो मायये खेशरा
तु दानी हिसाबे कमो बेशरा"

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदीजीकी मृत्युका समाचार

[१८४]

प्रेषक :—

श्री कमलाकिशोर त्रिपाठी

(द्विवेदीजीके भांजे)

बाबू हरिप्रसन्नजी घोष

मालिक—इण्डियन प्रेस,

इलाहाबाद

दौलतपुर, रायबरेली

२२-१२-३८

प्रिय बाबूजी,

अत्यन्त शोकके साथ सूचित करना पड़ रहा है कि पूज्य मामाजीका देहान्त कल सुबह ४-४५ पर रायबरेलीमें हो गया। उसी वक्त शवको कार द्वारा गाँव ले आया और दाह-संस्कार किया। मैंने क्रिया कर्म किया है। शुद्धता ३०-१२-३८ और तेरही ता० २-१-३९* सोमवार को है।

आपका

कमलाकिशोर त्रिपाठी

---

* मूल पत्रमें (जो कार्ड पर है) ग़लतीसे ३८ लिखा है।

—मूल पत्र श्री मुरारीलालजी केडियाके सग्रहमे सुरक्षित है।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीकी रचनाओंकी सूची

१ अतीत स्मृति
२ अद्भुत आलाप
३ अपर प्राइमर रीडर
४ अमृतलहरी
५ अवधके किसानोंकी बरबादी
६ आख्यायिका-सप्तक
७ आत्मनिवेदन (अभिनन्दनके समयका भाषण)
८ आध्यात्मिकी
९ आलोचनाजंलि
१० ऋतु-तरंगिणी
११ औद्योगिकी
१२ कविता-कलाप
१३ कान्यकुब्ज-अबला-विलाप
१४ कान्यकुब्जली-व्रतम्
१५ कालिदास और उनकी कविता
१६ कालिदासकी निरंकुशता
१७ काव्य-मंजूषा
१८ किरातार्जुनीय
१९ कुमारसम्भव
२० कुमारसम्भव-सार
२१ कोविद-कीर्तन
२२ कौटिल्य-कुठार*
२३ गंगालहरी
२४ चरितचर्या
२५ चरित-चित्रण
२६ जल-चिकित्सा
२७ जिला कानपुरका भूगोल
२८ तरुणोपदेश*
२९ दृश्यदर्शन
३० देवी-स्तुति-शतक
३१ द्विवेदी-काव्यमाला
३२ नागरी
३३ नाट्यशास्त्र
३४ नैषध-चरित-चर्चा
३५ पुरातत्त्व-प्रसंग
३६ पुरावृत्त
३७ प्राचीन-चिह्न
३८ प्राचीन पण्डित और कवि
३९ बालबोध या वर्णबोध
४० बेकन-विचार-रत्नावली
४१ भामिनी-विलास

---

* चिह्नांकित रचनाओंका प्रकाशन द्विवेदीजीने उचित नहीं समझा अतः ये रचनाएँ अप्रकाशित हैं।